ज्ञानपीठ लोकोदय-ग्रन्थमाला—हिन्दी ग्रन्थाङ्क—२६

शेर-ओ-सुख़न

[लखनऊ-स्कूलके वर्त्तमान शाइर]

भाग दूसरा

प्राचीन उस्ताद-शाइरोंके वर्त्तमान युगीन ख्यातिप्राप्त, प्रतिष्ठित, योग्य उत्तराधिकारी लखनवी शाइरोंका जीवन-परिचय एवं कलाम

भारतीय ज्ञानपीठ काशी

द्वितीय संस्करण

सिंहावलोकनका पूर्वार्द्ध द्वितीय भागके प्रथम संस्करणमे लगाया गया था, किन्तु अब अध्ययनकी सुविधाकी दृष्टिसे वह अंग यहाँसे निकालकर पाँचवे भागमे उसके शेष अग उत्तरार्द्धके साथ दिया गया है। ताकि एक ही भागमे पूर्ण परिचय मिल सके !

इस द्वितीय संस्करणमे संशोधनके अतिरिक्त ८२८ नये मश्‍अ़नी, 'दिल' शाहजहाँपुरीपर ६२ पृष्ठका नया परिचय एवं कलाम और २०० नये अशआ़र यथा-स्थान बढाये गये है।

१ जनवरी १९५८ ई०

साहू-जैन-कुल-दिवाकर

आयुष्मान् प्राणप्रिय अशोककुमार

और

सौभाग्यवती बहूरानी इन्दु-श्रीको

उनके

पाणिग्रहण-संस्कारके परम पुनीत मंगलमय अवसरपर अनेक शुभ भावनाओं एवं शुभाशीर्वादोंके साथ उनकी साहित्यिक सुरुचिके सौष्ठव संवर्धनार्थ मेरी जीवन साधनाके उत्कृष्टतम शेर-ओ-सुखनके ये भाग उपहार-स्वरूप सस्नेह भेंट

१८ नवम्बर १९५२ ई०]

गोयलीय

विषय-सूची

लखनऊ-स्कूलके शाइर

उन्नीसवीं शताब्दीमें हुए जलाल, अमीर मीनाई तकका परिचय शेरो-सुख़न प्रथम भागमें दिया जा चुका है। बीसवीं शताब्दीमें ख्याति पाने-वाले इनके मुख्य-मुख्य शिष्योंका परिचय प्रस्तुत भागमें मिलेगा।

इन शाइरोंके अतिरिक्त—नज्म तबातबाई, सफी, नज़र, नातिक़, अज़ीज़ और असरका परिचय एवं कलाम भी प्रस्तुत भागमें मिलेगा।

सूचनाएँ

१—**पहिले भागमें**—उर्दूके प्रारंभकालसे १९वी सदीके अन्तिमकाल तक ख्याति पानेवाले ग़जलोके माने हुए मुख्य-मुख्य उस्तादोंका परिचय एवं कलाम और उस युगकी शाइरीपर विस्तृत अध्ययन दिया गया है।

२—**दूसरे, तीसरे, चौथे भागमें**—उनके योग्य उत्तराधिकारी वर्त्तमान गजल-गो शाइरोका परिचय एवं कलाम दिया गया है।

३—**पाँचवें भागमें**—गजलका क्रमबद्ध इतिहास सिंहावलोकन और मुशाइरोंका रूप प्रस्तुत किया गया है।

४—उक्त २, ३, ४ भागोमे वर्त्तमान युगीन उन वयोवृद्ध शाइरोंका उल्लेख हुआ है, जो १९वी शताब्दीमे पैदा हुए और बीसवी शताब्दीके प्रारंभिक युग १९१५-२० ई० तक ख्यातिके शिखरपर पहुँच गये और मुसल्लिम-उल-सबूत (प्रामाणिक) उस्ताद समझे गये। जिन्होने पुराने उस्तादोकी आँखें देखी और जिनके हज़ारों शिष्य वर्त्तमान भारत और पाकिस्तानमे मशहूर हैं।

५—इनमे-से कुछ पुरातन परम्पराके अनुयायी है, तो कुछ नवीनताके उपासक और कुछ ऐसे भी है, जिन्होने प्राचीनता और नवीनताका अत्यन्त कलापूर्ण ढंगसे सम्मिश्रण किया है। गरज़ सभी अपने-अपने रगके माने हुए उस्ताद है। इन तीनों भागोमे हर रंगकी अनुपम गंगा-जमुनी छटा देखनेको मिलेगी।

६—१९१५ ई० तकका काल एक तरहसे पूर्ववर्त्ती शाइरोका अनुकरण युग रहा है। उस समयतक ग़ज़लोमे कोई विशेष परिवर्त्तन दृष्टिगोचर नही होता। हाँ हाली-ओ-आजादके नज्म-आन्दोलनके ज़ोरके कारण गज़ल कुछ जम्हाइयाँ एवं करवट-सी लेती हुई मालूम होती है।

१९१५ ई० के बाद गज़लमे स्पष्टत: जागृतिके चिह्न झलकने लगते है। दोनो महायुद्धोकी विभीषिकाओ, असहयोग, खिलाफत, किसान-मज़दूर-आन्दोलनो, साम्प्रदायिक-संघर्षों और स्वराज्य-प्राप्ति एव भारत-विभाजनके फलस्वरूप जो क्रान्तियाँ हुई, उन सबका गजलपर भी प्रभाव पड़ा और उसमें उत्तरोत्तर परिवर्त्तन एवं परिवर्द्धन होते गये। गजल अपने प्रारम्भिक कालसे १९५७ ई० तक किस स्थितिसे गुज़रकर कहाँ जा पहुँची है? उसका प्रारम्भमें कैसा रूप था और वर्त्तमानमे कैसा कायाकल्प हुआ है। यह सब तीनो भागोमे देखनेको मिलेगा। फिर भी हमने पाठकोकी सुविधाके लिए पाँचवें भागके सिंहावलोकनमें तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत करनेका प्रयास किया है।

७—१९वी शताब्दीके उत्तरार्द्धमे विशेष ख्याति पानेवाले उस्ताद—अमीर, जलाल, तसलीम, दाग, हाली आदिके हजार-हा शिष्योमे-से हमने केवल चन्द प्रसिद्ध शाइरोका परिचय एवं कलाम दिया है। इससे अधिकका परिचय देना हमारी सामर्थ्य और शक्तिके परे था। बकौल मीर—

उम्र थोड़ी है और स्वाँग बहुत

८—ध्यान रहे हमने इन २, ३, ४, भागोमे उन्ही गजलगो शाइरोंका परिचय दिया है, जो १९वी शताब्दीमें उत्पन्न हुए और १९२० ई०के पूर्व ही उस्तादीकी मसनदपर आसीन हो गये। इसी युगके अन्य प्रसिद्ध-प्रसिद्ध गज़लगो उस्तादो और १९२० ई०के बाद ख्याति पानेवाले गजल और नज्मगो शाइरोका परिचय 'शाइरोके नये दौर' और शाइरीके नये मोड़में दिया जा रहा है।

९—यद्यपि कई शाइर प्रस्तुत २, ३, ४ भाग लिखनेसे पूर्व और अधिकाश शाइर पुस्तक लिखते-छपते जन्नतनशी हो गये है। फिर भी हमने उनका उल्लेख वर्त्तमान युगीन शाइरोमें किया है, क्योकि वे सब इस बीसवी सदी—दौरे-जदीद—के शाइर है। इसी युगमे वे परवान चढ़े, उस्तादी हैसियत प्राप्त की और फले-फूले।

१०—प्रस्तुत २, ३, ४ भागोमें वर्णित शाइरोंमे—साकिब, हसरत, फ़ानी, असगर, जिगर और सीमाबका परिचय संक्षेपमे शेरो-शाइरीमे दिया जा चुका था। फिर भी ऐतिहासिक क्रमको वनाये रखनेके लिए इनका उल्लेख इन तीन भागोमे भी किया गया है। इनके वगैर इतिहास लँगड़ा-लूला रहता। अतः हमने इनका परिचय और कलाम शेरो-शाइरीसे सर्वथा भिन्न और नवीन देनेका प्रयत्न किया है।

११—शाइरोंका कलाम उनकी जिन कृतियोसे चुना गया है, उनका नाम कलामसे पूर्व या वादमे दे दिया गया है। कृतियोके अतिरिक्त उनका ताज़े-से-ताज़ा कलाम भी देनेका प्रयास किया गया है, और वह जिन पत्र-पत्रिकाओसे संकलन किया गया है, उनका भी यथास्थान उल्लेख किया गया है। जिन शाइरोके दीवान मुद्रित नही हुए, अथवा हमे प्राप्त न हो सके, उनका कलाम हमने जिन तजकिरो और पत्रोके अम्बारो से खोजा है; उनके नाम भी कलाकके साथ दे दिये है। उन सबकी तालिका पृथक्से नही दी गई है।

१२—अक्सर हर शाइरके कलामके अन्तमे हमने तारीख़ दी है, ताकि लेखनकालका पता लग सके। कई जगह बहुत नजदीकी तारीखें अंकित है। उतने वक्फेमे वह मजमून लिखा ही नही जा सकता। इसकी वजह यही है कि कुई-कई मजमून यथावश्यक और सुविधानुसार लिख लिये गये; परन्तु किसी वजहसे पूर्ण न हो सके और जब पूर्ण हुए तो लगातार होते चले गये और तभी मजमून-समाप्तिकी तारीख़ डाल दी गई। शाइरोका कलाम पढा कभी गया, उद्धृत कभी किया गया और परिचय आदि सुविधानुसार कभी लिखा गया। कुछ स्थल सुविधानुसार आगे-पीछे लिखे गये है और उन्हे बादमे क्रमबद्ध कर दिया गया है। ये २, ३, ४, ५ भाग १९४९ ई०मे लिखने शुरू किये गये थे[1] और दिन-रातके लगातार परिश्रमके बाद १९५४ ई०मे पूर्ण हो सके है।

---

१. द्वितीय संस्करणके संशोधन, परिवर्त्तन एवं परिवर्द्धनमें १९५७ का पूरा वर्ष व्यतीत हुआ है।

१३—सभी शाइरोके चित्र हमें प्राप्त नही हो सके। काफी प्रयत्न करनेके वाद कुछ चित्र संकलित हो सके और वह भी ऐसी स्थितिमें कि उनके हाफटोन व्लाक नही बन सके। अतः पहले उन चित्रोके शीर्षक लाइन चित्र वनाये गये, फिर व्लाक वने है।

१४—अधिकांश शाइरोंका परिचय एव कलाम हम अपनी अभिलापानुसार विस्तारसे नही दे सके है, न उनपर विशेप प्रकाश ही डाल सके है। इसका कारण यही है कि किन्हीके दीवान प्रकाशित नही हुए तो किन्हीके वाजारमे प्राप्त नही। हमारे अपने भी सीमित साधन है। लिखते हुए भी ५ वर्पसे अधिक हो गये थे। स्वास्थ्य जव धोका' देने लगता था, तब भय हो उठता था कि जीवनकालमे छपेगे भी या नही। अत. अधिक प्रतीक्षा न करके जहाँ-जहाँसे जितना भी कलाम मिल सका, सकलन करनेका भरसक प्रयत्न किया गया है। पूर्ण परिश्रम करने और पूरी सावधानी रखते हुए भी अज्ञान-जनित न जाने कितनी त्रुटियाँ रही होगी? मै स्वयं अपनी कमियो और अल्पज्ञतासे परिचित हूँ। फिर भी पाठक इसे अपनाये तो इसके सिवा और क्या कहा जा सकता है—

"यह फ़कत आपकी इनायत है।
वरना मैं क्या, मेरी हकीक़त क्या?"

डालमियानगर
७ जनवरी १९५४

— अयोध्याप्रसाद गोयलीय

लखनऊ स्कूलके
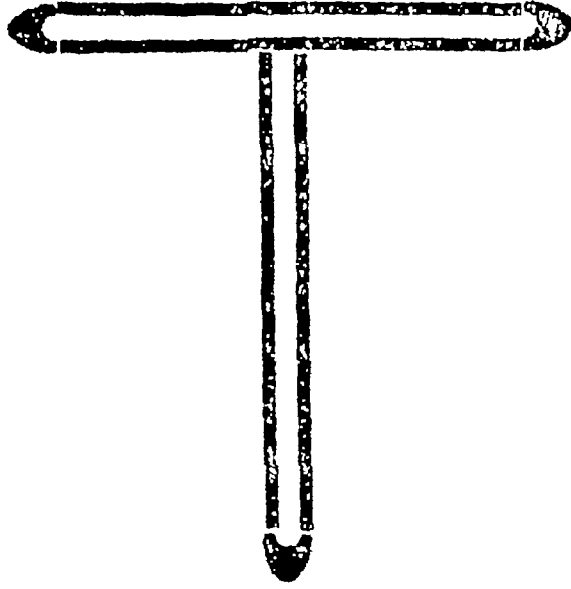
वर्त्तमान युगीन
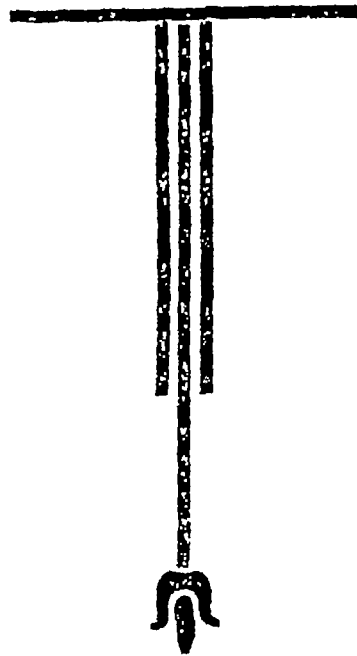
ख्यातिप्राप्त शाइर

१. साकिब लखनवी
२. असर लखनवी
३. रियाज़ खैराबादी
४. दिल शाहजहाँपुरी
५. जलील मानिकपुरी
६. हफ़ीज़ जौनपुरी
७. सरशार लखनवी
८. शौक़ रैना
९. आरज़ू लखनवी
१०. उम्मीद उमेठवी
११. सफ़ी लखनवी
१२. अज़ीज़ लखनवी
१३. नज़र लखनवी
१४. नातिक लखनवी
१५. नज्म तबातबाई

मिर्ज़ा जाकिर हुसेन 'साकिब' २ जनवरी १८६६ ई० को आगरेमे उत्पन्न हुए। उसी आगरेमे, जहाँ उर्दूके अमर शाइर—मीर, गालिब और नज़ीर पैदा हुए थे। यह प्रकृतिकी अनोखी सूझ ही समझिए कि जो साक़िव, मीर-ओ-गालिबकी शिष्य परम्परासे दूरका वास्ता न रखते हुए भी शाइरीमे उनके उत्तराधिकारी समझे जाते हैं; जिन्हे मीर-जैसी मधुर एव हृदयस्पर्शी भाषा और ग़ालिब-जैसी उच्च भावनाएँ और अनोखी कल्पनाएँ प्राप्त हुई; उन्हे उनकी क्रीड़ास्थलीमे जन्म लेनेका भी सौभाग्य प्राप्त हुआ।

अभी आप छः माहके थे कि आपके पिता आगरा छोड़कर लखनऊ चले आये और कुछ दिनों नौकरीके सिलसिलेमे इधर-उधर रहकर स्थायी रूपसे लखनऊमे बस गये।

क़ुदरतकी सितमजरीफी देखिए कि साकिबको बचपनसे ही जितनी ज्यादा शाइरीसे रगबत थी, उतनी ही अधिक आपके पिताको उससे चिढ थी। परिणाम इसका यह हुआ कि आपके मनोभाव मन-ही-मनमे घुटने लगे। आख़िर यह घुटन कबतक चलती? वह भापकी तरह उमड़ पड़ी। अभी आप १२ वर्षके थे, और शिक्षा प्राप्त कर रहे थे। बुज़ुर्गोके भयसे न तो गजल कह सकते थे और न किसी मुशाइरेमे क़दम रख सकते थे।

बेचारे मन मारकर रह जाते थे। आखिर आपने एक उपाय निकाल ही लिया। आप मुशाइरोके मिसरा-तरहोपर गजल कहते और अपने सहपाठियोको मुशाइरोमे पढनेके लिए दे देते। किस शेरपर किस-किस उस्तादने दाद दी, साथियोसे यही जानकर आत्मसतोष कर लेते थे।

१८८७ से १८९१ तक आप अग्रेजी शिक्षा प्राप्त करनेके लिए आगरे रहे। खुश किस्मतीसे वहाँ आपको मोमिन हुसेनखाँ 'सफी'-जैसे योग्य उस्ताद नसीब हुए। उन्हे उर्दू, फारसी, अरबी तीनो भाषाओमे शेर कहनेका बहुत अच्छा अभ्यास था। प्रतिभासपन्न 'साकिब'को उन्होने मुक्त हृदयसे शिक्षा दी और आप चन्द ही दिनोमे इस योग्य हो गये कि अपने गुरु भाइयोकी गज़लोका सशोधन सफलतापूर्वक करने लगे।

मिर्ज़ा साकिब जितनी उच्च कोटिकी गज़ल कहते थे, उतनी ही हृदयस्पर्शी आवाज़मे पढते भी थे। श्रोताओपर जादू-सा होने लगता था, और मुशाइरे-का-मुशाइरा झूम उठता था। मुशाइरोमे पहले तरन्नुमसे[1] पढनेकी प्रथा नही थी, यह इसी बीसवी सदीकी देन है[2]। इस प्रथाके कारण कलामपर कम और तरन्नुमपर अधिक दाद मिलती है, और अक्सर देखा जाता है कि तरन्नुमसे न पढ सकनेके कारण अच्छे-से-अच्छे उस्ताद नौसिखुए छोकरोके सामने माँद पड जाते है। मिर्ज़ा कभी भी तरन्नुममे गज़ल नही पढते थे, फिर भी उनकी सादा और पुरजोश गजल-ख्वानीके सामने खुश गुलू और सगीत पारगत शाइर भी अपना रग नही जमा पाते थे। अक्सर दावेके साथ प्रतिद्वद्वी शाइर मुशाइरोमे गये, मगर आपके समक्ष मुँहकी खाकर बाहर निकले।

मिर्ज़ाको फिलबदीह (तात्कालिक) शेर कहनेका बहुत अच्छा अभ्यास था। एक बार लखनऊके कुछ प्रतिष्ठित साहित्य-प्रेमियोने यह आयोजन

---

[1]गाकर पढना; [2]लोगोका कहना है कि तरन्नुमसे पढनेका रिवाज नवाब 'साइल' देहलवीने चालू किया। आपका परिचय चौथे भागमे मिलेगा।

किया कि मुशाइरेमें सम्मिलित होनेवाले शाइरोंके आजानेपर मिसरा-तरह देकर वही गजल कहलाई जाय, ताकि मालूम हो सके, कौन कितने पानीमें है। योजनाके अनुसार मिसरा-तरह देनेपर आपने सबसे पहले, सबसे अधिक और सबसे अच्छे शेर कहे, और आप ही विजयी घोषित हुए। आप अक्सर मार्ग-चलते हुए भी शेर कहते थे, परिणामस्वरूप कई बार सवारियोंसे और राहगीरोंसे टकराकर चोट खा गये।

मीर-ओ-गालिबकी तरह आप भी आर्थिक चिंताओंमें ग्रसित रहे। एक हजरतके साथ अपनी समस्त जमा पूँजी लगाकर व्यापार किया तो उन्होंने सब पूँजी चौपट कर दी।

१९०६ में यानी २७ वर्षकी उम्रमें आप कलकत्ते गये और वहाँ सुफारतखानए-ईरानमें दो वर्ष प्राइवेट सेक्रेटरी रहे। १९०८ ई० में राजा-महमूदाबादने आपको बुला लिया और ५० रु० मासिक पेंशन नियत कर दी। इस युगमें इस अल्प आयसे क्या होता है, मगर आप इतने सन्तोषी थे कि उसीमें आनन्दपूर्वक जीवन-यापन करते रहे।

मिर्जा पुरानी वजअ-कितअके बुजुर्ग थे। सरल स्वभावी, उच्च विचारक और गभीर। बहुत मिलनसार लेकिन स्वाभिमानी व्यक्ति थे। मित्रोंके समक्ष नम्र, किन्तु शत्रु-पक्षके आगे सरबुलन्द। आत्मविज्ञापनसे कोसों दूर, अपने विचारोंमें अक्सर लीन और खोये-से रहते थे। स्वतन्त्र विचारक और बातचीतमें सजीदा। दुबले-पतले। शक्लो-शबाहत भद्रतापूर्ण। चेहरेपर सफेद फ्रेंच दाढ़ी और आँखोंपर चश्मा निहायत जेब देता था। अक्सर काली शेरवानी और गोल टोपी पहनते थे। २२ नवम्बर १९४६ को आप जन्नतनशी हुए।

मिर्जाकी शाइरी

मिर्जाका समस्त जीवन प्राय. लखनऊमें व्यतीत हुआ। उन्होंने अपनी किशोरावस्थामें १९ वी शताब्दीके अंतिम युगोंके ख्यातिप्राप्त साहिबेकमाल उस्तादोंको अपनी आँखोंसे देखा। असीर, बर्क, बहर, कलक, अमीर,

जलाल, शमशाद, इश्क, उन्स, वफा, तअ्श्शुक, रसीद, कामिल आदि सब लखनवी शाइर तब ज़िंदा थे।

उन दिनों लखनऊकी शाइरीपर दो प्रकारका वातावरण छाया हुआ था। एक नासिखी दूसरा बाज़ारी। यद्यपि नासिख़को गुज़रे हुए ५० वर्षके करीब हो चुके थे, तो भी उनके शिष्य और परशिष्य नासिख़ी स्कूल खोले हुए बैठे थे। बाज़ारी शोख तर्ज़े-अदाने गज़लको इस कदर पतितावस्थामे पहुँचा दिया था कि भले आदमी दामन बचाकर निकलने लगे थे। मगर आम जनता इस तर्ज़े-अदापर टूटी पडती थी। संक्षेपमे यू समझिए कि जिस शहरमे नौटकी हो रही हो, तो वहांके भद्र पुरुषोकी तो नीद हराम हो जाती है। मगर जनसमूह उमड पडता है। वर्तमानमे सिनेमाओंके कुरुचिपूर्ण प्रदर्शनोमे लोग ऊब गये है, मगर जन-साधारणकी भीडका यह आलम रहता है कि एक-पर-एक टूट पडता है।

मिर्ज़ाने भी इसी वातावरणमे शाइरीकी चौखटपर पॉव रखा, और नासिख़का जो रंग सामने था, उसीमे गोते लगाने लगे। मिर्ज़ाका क्या ज़िक्र ? नासिख़का रग तो किसी वक़्तमे इतना मकबूल हुआ कि 'आतिश'-जैसे उस्ताद उसके छीटोसे अपने दामनको बचाये न रख सके। और आतिशको तो खैर नज़रअन्दाज़ किया भी जा सकता है, क्योकि आख़िर वह भी लखनवी थे। मगर देहलवी शाइर शाह 'नसीर' और 'ज़ौक़' को क्या हुआ था जो उम्र भर डुबकियाँ मारते रहे। और-तो-और गालिब व मोमिन जैसोके पाँव भी फिसले बगैर नही रह सके। वह तो खैर हुई जो फौरन सँभल गये, वर्ना ईश्वर ही जाने आज उर्दू-गजल कहाँ होती ? और होती, या नही यह भी कुछ कहा नही जा सकता।

हाँ तो मिर्ज़ाने अपनी शाइरीका श्रीगणेश नासिख़ी स्कूलसे ही किया। दो-चार नमूने देखिए—

इश्क़े-पेचाँ कदे-जानाँने बनाया 'साक़िब' !
ऐंड़ना भूल गये, सरो-ओ-सनोबर अपना॥

मेरे लहूसे अगर होके सुर्ख़रू[1] आये।
मलो तो बर्गे-हिनामें[2] वफ़ाकी[3] बू आये॥
देर-पा है किस क़दर 'साक़िब' हसीनोंका शबाब।
उम्रभर अपनी जवानीकी क़सम खाते रहे॥
मैं सख़्तजाँ[4] नहीं, ख़ंजर भी तेज़ है लेकिन—
निगाहे-यास[5] है क़ातिलकी तेज दस्ती है॥
ज़ख़्मे-जिगरसे अबरुए-क़ातिलने[6] चाल की।
दिलतक शिगाफ़[7] दे गई, छूट उस हिलालकी[8]॥
ग़ैरकी इमदादसे चमके नहीं अहले-कमाल[9]।
नामको रोगन चिराग़े-तूरे-सीनामें न था॥

इसप्रकारके नासिख़ी शेर मिर्ज़ाके दीवानमे यत्र-तत्र काफी नज़र आते है। आपने अपने सोज़ो-गुदाज़से कलाममे वोह बात पैदा कर दी है कि नासिख़ी रग घुलकर रह गया है। यही मिर्ज़ाकी शाइरीका कमाल है। हाँ, जहाँ नासिख़का रग गहरा हो गया है, वहाँ असर और मज़ा जाता रहा है।

मिर्ज़ा साहबका तग़ज़्ज़ुलकी दुनियामे जो उच्च और महत्वपूर्ण स्थान है, उसको देखते हुए न जाने क्यों इस तरहके हलके शेर भी दीवानमे दृष्टि-गोचर होते है—

ख़फ़ा क्यों हो जो पैग़ामे-क़ज़ा[10] अबतक नहीं आया।
बुरे दिलसे तुम्हें ख़ुद कोसना अबतक नहीं आया॥
ग़ैरोंको दिखाया मेरा दिल खोलके यूँ ही।
मुझसे दमे-पुरसिश[11] यह कहा—"और ही कुछ है"॥
क्यों मेरे सीनेसे उठे फेरकर मुझपर छुरी?
नातवाँ[12] है दिल, मगर यह बार[13] रहने दीजिए॥

---

[1]रक्तमे भीगकर; [2]मेहदीके पत्तेमे; [3]भलाईकी; [4]वज्र शरीर; [5]निराशापूर्ण; [6]प्रेयसीकी भँवोने; [7]दरार; [8]दूजका चाँद; [9]कलाविद; [10]मृत्यु-सन्देश, [11]दरियाफ्त करनेके समय, [12]कमजोर, [13]बोझ, एहसान।

साफ कह दीजिए वादा ही किया था किसने।
उज्र क्या चाहिए झूठोंको मुकरनेके लिए॥

इसप्रकारके हलके अशआर निकाल दिये जाते तो बेहतर होता, लेकिन सभव है इन अशआरके दिये जानेका कारण यह भी हो कि मिर्ज़ा जनताको यह बताना चाहते हो कि वातावरणका प्रभाव किसी-न-किसी रूपमे सभीपर पडता है, और मेरे जैसा सुरुचिपूर्ण और उन्नत विचारक भी तत्कालीन दूषित वातावरणसे अपने दामनको अछूता न रख सका। और इसको क्या कहिए कि इस युगमे भी जब कि शाइरी छलाँग मारती हुई कहाँ-से-कहाँ जा पहुँची है, आज भी बहुत-से शाइर इस फीकी बदमज़ा शाइरीपर सर धुनते है।

मिर्ज़ाके यहाँ कुछ कलाम क्लिष्ट और ऐसा भी मिलता है, जिसका अभिप्राय समझना कठिन होता है।

मिर्ज़ा साकिबने १९वी शताब्दीमे आँखे खोली, और उन्हे उस युगके शाइरोके रग-ढग देखनेको मिले। बीसवी सदीमे उनकी शाइरी परवान चढी। अत. उनकी शाइरीमे प्राचीन और वर्त्तमान युगका ऐसा खट्टा-मीठा सम्मिश्रण हुआ है कि वह गुड और अमचूर न रहकर शन्तरा बन गई है। यानी उनकी शाइरीमे परम्पराओका निभाव, छन्द और पिगलके व्याकरणकी पाबन्दी, साथ ही आधुनिक युगकी सभी समस्याओकी झलक भी मिलेगी।

प्राचीन परम्पराके अनुसार मिर्ज़ाने भी गुलो-बुलबुल सबधी अशआर कहे है। मगर अपने युगकी स्वतन्त्रताकी माँगको इस खूबीसे व्यक्त किया है कि शेरमे तगज्जुल ज्यो-का-त्यो विद्यमान रहता है, और एक-एक शेरमे भाव ऐसे व्यक्त किये है कि गागरमे सागर भर दिया है।

स्वतन्त्रता-आन्दोलनको कुचलनेमे अग्रेज़ोने कोई कोर-कसर बाक़ी न रखी। देश-भक्त फाँसी चढ़ाये गये, जेलोमे सड़ाये गये, उनके सदेश जनतामे गूजते ही रहे, उन्हे कोई रोक न सका, इसी भावको मिर्ज़ाने यूँ व्यक्त किया है—

बनके इबरतकी[1] जबाँ कहता रहेगा कुछ-न-कुछ।
सहने-गुलशनमें[2] अगर मेरा कोई पर रह गया॥

जेलमे नेता पड़े हुए है, अंग्रेज सरकार समझती है कि स्वतन्त्रता-आन्दोलन समाप्त कर दिया गया है, परन्तु उसे जनताके हृदयमे दहकती आगका पता नही लगता, वह जनताके अन्तस्थलको छूनेका प्रयत्न ही नही करती—

तमाशा सोजे-दिलका[3] देख जाकर सहने-गुलशनमें।
क़फ़समें हूँ, मगर शोले[4] भड़कते हैं नशेमनमें॥

ससारमे सुख-दुख, साथ-साथ रहते है। कोई रो रहा है, कोई हँस रहा है। एक उजड़ रहा है तो दूसरा बन रहा है। इसी भावको मिर्ज़ा यूँ व्यक्त करते है—

रस्मे-दुनिया है, कोई खुश हो कोई नाशाद हो।
जब उजड़ जाये नशेमन तो क़फ़स आबाद हो॥

जाहिरमे हँसोड व्यक्ति अपने जीवनमे कितना अधिक रोता है, यह दुनिया नही जानती। सिनेमा-ससारका प्रसिद्ध हँसोड अभिनेता चार्ली चैपलिन, जो दर्शकोके पेटमे हँसाते-हँसाते बल डाल देता है, कहते है उसे अपने जीवनमे हँसना बहुत कम नसीब हुआ। हास्यरसके लेखकोको अपने हृदयका कितना रस सुखाना पड़ता है, भुक्तभोगी ही जानते है। इन हँसोड व्यक्तियोका मिर्ज़ाने कितना दयनीय दृश्य उपस्थित किया है—

सुबहको राजे-गुलो-शबनम[5] खुला।
हँसनेवाले रातभर रोया किये॥

सुभाष बाबू जीवित है या स्वर्गस्थ, यह अभीतक विवादका प्रश्न बना हुआ है। मिर्ज़ाका निम्न शेर देखिए इस जगह कैसा मौजूँ होता है—

ख़ूब था क़िस्सए-क़फ़स[6] सुनते जो मेरे हमनवा[7]।
क़ैदमें हूँ कि मर गया, इसमें भी इख़्तलाफ़[8] है॥

---

[1]नसीहत, आदर्शकी; [2]उपवनके आँगनमे; [3]हृदयकी अग्निका; [4]आगकी लपटे, चिनगारियाँ; [5]फूल और शबनमका रहस्य; [6]बन्दी जीवनकी कहानी; [7]सहयोगी, साथी (सम भाषा-भाषी); [8]मतभेद, विरोध।

भारत-विभाजनके ५-६ माह पूर्व जो देशकी स्थिति थी, उसे देखते हुए स्वतन्त्रताका स्वप्न तो भग हो ही गया था। सप्रदायके मोहमे पडकर लोग अपने-अपने सप्रदायकी खैर मना रहे थे। देश डूबे या रहे, इसकी सप्रदायवादियोको तनिक भी चिन्ता नही थी। तब मिर्ज़ाका यह शेर हम अक्सर गुनगुनाया करते थे—

हमदम ! चमनकी खैर मना, आशियाँ तो क्या ?
दो-चार दिन अगर यह हवा और चल गई॥

और बापूकी वह अहिंसा, जिसकी साधना वे निरतर ३२ वर्षोसे करते आ रहे थे, मुस्लिम लीगियोके तनिक-से सकेतपर कितनी बिलखी, यह मिर्ज़ाके ही ज़बानेमुबारकसे सुनिए—

कल एक जाँ गुदाज़[1] तबस्सुममें[2] बर्कके[3]।
बरसोंमें जो बसाई थी, बस्ती वोह जल गई॥

१९४२ ई० मे हज़ारीबाग जेलसे कुछ सत्याग्रही बन्दियोने श्री जयप्रकाशनारायण आदिको जेलसे भागनेमें सहायता दी, और बाहर निकलनेपर कुछ लोगोने उन्हे अपने यहाँ छिपा लिया। इससे उनपर काफ़ी सख्तियाँ हुईं। एक जी हुज़ूर किस्मके सज्जनसे इस बारेमे ज़िक्र आया तो बोले—"नाहक बैठे-बिठाये अपने सरपर आफत बुला ली, क्या ज़रूरत थी उन्हें यह दर्दे-सर मोल लेनेकी ?" अब मैं उन्हे कैसे समझाता कि लुत्फे-असीरी (बन्दी-जीवनका आनन्द) क्या है ? खुद चाहे उम्र भर कफसमे पडा हुआ जान हलाक कर दे, मगर किस तरकीबसे सैयादकी नीदे उचाट हो सकती है, यह हर असीरकी ख्वाहिश होती है। गरीबने मिर्ज़ाका यह शेर पढ़ा होता तो जज़्बये-असीरी (राजनैतिक कैदियोंके मनोभाव) समझ सकता।

कोई छूटा तो असीरीसे,[4] मेरी शुक्रे-खुदा।
मै कफसमें हूँ, मगर नींद उड़ गई सैयादकी॥

---

[1]हृदयको द्रवी भूत करनेवाली, दिलको पिघलानेवाली; [2]मुसकान, हँसीमें; [3]बिजलीके; [4]कैद रहनेसे।

और सचमुच सुभाष बाबू और जयप्रकाशनारायण आदिके अन्तर्धान हो जानेसे अग्रेज-शासकोकी नीदे उड गई थी ।

भारत-विभाजनके बाद पजाब और बगालसे हिन्दू भारत चले आये । भारतका कुछ हिस्सा कटकर पाकिस्तान कहलाने लगा । मुल्लाओ, नवाबों, किसानो और जमीदारोमे अस्थायी गठबन्धन हो गया । शिआ-सुन्नी, अहमदी भी घी-खिचड़ी हो गये । यह जाहिरा मिल्लते-इस्लाम परवान चढ़ने लगी । मगर जो दूरअन्देश थे, वे अक्सर मिर्ज़ाका यह शेर गुनगुनाते होंगे—

फूलोंसे तो छुटा मैं, हाँ अब यह देखना है।
कबतक बनी रहेगी, गुलचीं-ओ-बाग़बॉमें ?

स्वदेशी-आन्दोलनपर मिर्जाका यह शेर कैसा चस्पाँ होता है ? कुछ जी-हुजूर विलायती कपडोमे सजे हुए किसी खद्दरके कपडे पहने हुए व्यक्तिका मज़ाक उडाते हैं । तो वह गरीब मिर्जाका यह शेर सुनाकर उनकी बोलती बन्द कर देता है—

क़फ़सकी तीलियाँ अच्छी हैं, तिनकोंसे नशेमनके।
यह सब कुछ है मगर, सैयाद ! दिलपर क्या इजारा है ?

हुस्नो-इश्क

मिर्जाके यहाँ हुस्नो-इश्कका आसन बहुत ऊँचा है । इश्कके लिए बहुत अधिक साधना और तप करने पडते हैं । जो विरहकी आँच बर्दाश्त नही कर सकते, ऐसे विषयासक्त इश्क करने योग्य नही—

इश्कमें सहल थी फ़रहादकी तक़लीद[1] मगर।
यह मेरी हिम्मते-आ़लीको[2] गवारा[3] न हुआ॥

इश्क तो वह रग है कि जिसपर चढा, फिर कभी न उतरा । चाहे

[1]अनुकरण, नकल; [2]पवित्र साहसको, उच्च विचारोको; [3]पसन्द ।

मिलनकी वेला हो या विरह-रात्रि, आशिक तो दोनो ही हालतोमे बेचैन रहता है—

विसालो-हिज्रमें छुपता है दिलका हाल कहीं?
बुझे तो प्यास सिवा हो, जले तो बू आये॥

जो अपने मन-मन्दिरमे प्रेम-ज्योति जला लेता है, वह चारो तरफसे किवाड बन्द करके, सुध-बुध खोकर अपने हबीबको निहारता रहता है। भिलनी अपने रामको देखकर बोलनेकी शक्ति बिसार बैठी, और बुद्धि जो थोडी-बहुत पास थी, उसे भी खोकर एक टक निहारने लगी। प्रेमके आवेगमे उसे यह भी ध्यान नही रहा कि वह अपने हबीबको जो बेर खानेको दे रही है, वह स्वय जूठे करके दे रही है। भला जूठी चीज भी किसी मेह-मानको खिलाई जाती है? मगर इश्कके तो करिश्मे ही जुदा है—

इक लबे-ख़ामोश बनकर इश्क गोयाई रहा।
हम्द करता कौन? आलम महवे-यकताई रहा॥

[जिस इश्कमे बोलनेकी शक्ति थी, वह लब सीकर रह गया। प्रेयसी-की प्रशसा करनेकी सामर्थ्य ही कहाँ रही, वह तो उसके यकता हुस्नपर महव होकर रह गया]।

मिर्ज़ा आवारोकी तरह न तो कूचये-जानाँमे चक्कर लगाते है, और न वे दिल फेक तमाशबीनोकी तरह इश्कका ढिढोरा पीटते है—

उम्र भर जलता रहा दिल और ख़ामोशीके साथ।
शमअको इक रातकी सोजे-दिलीपर नाज़ था॥

जनकपुरीके उद्यानमे घूमते हुए राम-सीता अनजानेमे ही एक-दूसरेको दिल दे बैठे। उनकी समझमे यह नही आया कि अचानक यह क्या हो गया। किसीसे पूछ भी नही सकते। भला ऐसा रोग भी कोई किसीपर प्रकट करता है—

दिलने रग-रगसे छुपा रक्खा है, राज़े-इश्के-दोस्त!
जिसको कहदे नब्ज़ ऐसी मेरी बीमारी नहीं॥

मिर्जाका हबीब मानवीय न होकर कहीं-कहीं ईश्वरीय नज़र आता है—

छुपाओ आपको जिस रंग या जिस भेसमे चाहो।
मगर चश्मे-हक़ीक़तबीसे[1] पर्दा हो नहीं सकता॥
तमाशा चश्मे-दिलसे[2] अहले-इरफाँ[3] देख ही लेंगे।
किसी पर्देमें हो तसवीरे-जानाँ[4] देख ही लेंगे॥

मिर्जा इश्कको रुसवाईका बाइस न समझकर उसे जीनत समझते है—

'साक़िब'! सियाह खानए-दिलमें[5] वह दाग़े-इश्क़[6]।
एक चान्द है कि जीनते-काशाना[7] हो गया॥
क्यों मेरे दाग़े-दिलकी है दुश्मन हवाए-दहर[8]।
ऐसे चिराग बुझ नहीं सकते ज़मानेमें॥

मिर्जाका हबीब बाजारी नही, अपितु हयापरवर सुशीला नारी है—

उमीदो-बीममें[9] रक्खा तमाम रात मुझे।
कभी नक़ाब उठाई, कभी हिजाब[10] आया॥

मन स्वस्थ होगा तो विचार भी स्वस्थ होगे। वह अस्वस्थ हुआ तो सब चौपट हुआ। अतः अपने मन-मन्दिरको ऐसा बनाओ कि मन-मूरतको रहनेमे वहाँ असुविधा या सकोच न हो। जब मन-मन्दिरमे ही अँधेरा कर रखा है, तो प्रीतम उसमे कैसे जलवागर होगा?

शामे-ग़म[11] जिसमें रहे बरसों, वहाँ क्या ईद हो?
वोह तो आजाते मगर, यह दिल ही इस क़ाबिल न था॥

हबीबका तसव्वुर

फैला है हुस्ने-आरिज़े-रोशन[12] नक़ाबमें।
क्या-क्या तड़प रही है, तजल्ली[13] हिजाबमें[14]॥

---

[1]दिव्य दृष्टाओसे; [2]हृदय-नेत्रोसे; [3]ज्ञानी; [4]प्रियतम या प्रियतमा; [5]हृदयके अँधेरे कोनेमे; [6]प्रेम-चिह्न; [7]दिल रूपी मकानकी शोभा, गौरव; [8]ससारकी हवा; [9]आशा-निराशामे; [10]सकोच, लाज; [11]रज, दु:खरूपी अँधेरा; [12]प्रकाशमान कपोलोका सौन्दर्य, [13]जलवा, रोशनी, झलक चमक; [14]लाजमे।

शबे - वसलतमें[1] भी इक हिज्रका[2] अन्दाज़ पैदा है।
इधर मैं हूँ, उधर वोह है, हया हाइल[3] है, पर्दा है॥

दीदये-दोस्त[4] तेरी चश्म-नुमाईकी[5] क़सम।
मैं तो समझा था कि दर[6] खुल गया मैख़ानेका[7]॥

वोह उठे अँगड़ाइयाँ लेते हुए।
मैं यह समझा हश्र बरपा[8] हो गया॥

हुस्नके हाथ बँधे तो, वोह ज़रा देर सही।
मुझे पै एहसाँ तेरी आई हुई अँगड़ाईका॥

अँगडाईमें ही सही, हुस्नके हाथ तनिक-सी देरको बँधे तो ! कितनी अछूती और प्यारी कल्पना है !!

मिर्ज़ाकी भाषा

शाइरीका निर्माण भाषा और भावके सम्मिश्रणसे होता है। केवल एक चीज़से निर्माण नही हो सकता है। शाइरके भाव जब कल्पना-क्षेत्रमे उडान भरनेको उद्यत होते है तो भाषा रूपी पख उसकी सहायताको उद्यत होते है। न भावरूपी आत्माके बगैर केवल पंख ही उड़ सकते है, न भाषा रूपी पखोंके बिना भाव। दोनोका आत्मा और शरीर-जैसा सबध है। जिस शाइरकी भाषा जितनी अधिक अकृत्रिम, रसीली, प्रवाहयुक्त, सरल, सार्थक, लचकदार होगी और भाव मौलिक, उच्च और हृदयस्पर्शी होगे, वह उतना ही अधिक सफल होगा। आइए पहले मिर्जाकी भाषाकी बहार देखे, मालूम होता है कोई फूल बखेर रहा है।

बहुत-सी उम्र मिटाकर जिसे बनाया था।
मकाँ वोह जल गया, थोड़ी-सी रोशनीके लिए॥

---

[1]मिलन-रात्रिमे; [2]विरहका; [3]बीचमे अडी हुई है; [4]प्रियतमाकी आँख; [5]चमककी, [6]द्वार; [7]मदिरालयका; [8]प्रलय आ गई।

वही रात मेरी, वही रात उनकी।
कहीं बढ़ गई है, कहीं घट गई है॥

लूटनेवाले हमारी नींदके।
किस मज़ेसे रातभर सोया किये॥

ग़मे-ज़िन्दगी जा-बजा हो रहा है।
अरे मरनेवालो! यह क्या हो रहा है?

इश्क़में दिल गँवाके हाल यह है।
कुछ मैं खोया हुआ-सा रहता हूँ॥

हिचकियोंसे राज़े-उल्फ़त खुल गया।
आगई मुँहपर जो दिलमें बात थी॥

कहाँतक जफ़ा हुस्नवालोंकी सहते।
जवानी जो रहती तो फिर हम न रहते॥

हँसके भी रोके भी कहा लेकिन।
मतलबे-दिल कभी अदा न हुआ॥
हसरते-ज़िब्ह रह गई 'साक़िब'!
यह फ़रीज़ा मेरा अदा न हुआ॥

यास-ओ-उम्मीदके माबैन हुई ख़त्म हयात।
एकने शाद किया, एकने नाशाद किया॥

गुलशनमें कहीं बूए-दमसाज़ नहीं आती।
अल्लाहरे सन्नाटा! आवाज़ नहीं आती॥
बरगश्ता हुई दुनिया रस्मो-रहे-उल्फ़तसे।
इक मेरी तबीअ़त है, जो बाज़ नहीं आती॥

ज़माना बड़े शौक़से सुन रहा था।
हमीं सोगये दास्ताँ कहते-कहते॥

उक्त कलाम पढकर ऐसा महसूस होता है कि ऐसे अशआर तो हम भी कह सकते है। मगर तवअ् आजमाई करनेपर पता चलता है कि यह कितना वड़ा आर्ट है।

मिर्ज़ाको 'मीर' जैसी जवान अता हुई है, और गालिव-जैसी उच्च भाव-प्रदर्शनकी क्षमता। आपको लोग मीर-ओ-गालिवका जाँनशीन कहते है।

लेकिन मिर्ज़ाने नम्रतापूर्वक इस प्रसिद्धिके सवधमे १६३४ मे फर्माया था—"छप्पन साल शाइरीकी खिदमत की, इस तवील मुद्दतमे यह कोशिश रही कि ज़वान 'मीर' की और तखैयुल 'गालिव'का-सा हो। मालूम नही यह सई मशकूर हुई या गैर मशकूर।' ' 'इतनी उम्रमे सिर्फ इतना-सा खयाल करनेका गुनहगार हूँ कि शायद चन्द शेर उन दोनो वा-कमालोके रगमे नज्म हो सके है। दुनिया इस जुर्मको माफ कर दे तो उसका एहसान है।

जाँ नशीनी मीरो-गालिबकी कहाँ, और मै कहाँ ?
वोह खुदाए-फ़न थे, उनसे मुझको निसबत कुछ नहीं[1]॥

मुहावरोंका प्रयोग

मिर्ज़ाकी ज़वान लखनऊकी टकसाली ज़वान है, और वह 'मीर' के व्यथापूर्ण रसमे डूवी हुई। शव्दोकी सादगी, उपमाओकी झड़ी, मुहावरोकी वन्दिश, भापाका प्रवाह, और भावोकी वुलन्दी—यह सव मिलकर मिर्ज़ाके कलाममे ऐसे घुल-मिल जाते है कि कुछ न पूछिए। उपरोक्त अशआरमे भाषाका सारल्य और लालित्य तो देखा, आगे दो-चार मुहावरोका प्रयोग मुलाहिज़ा हो।

मुँहपर हाथ रखना, मुहावरा है, जो चुप करनेके स्थानपर वोला जाता है। निम्न शेरमे यह मुहावरा देखिए किस सलीकेसे नज्म हुआ है—

---

[1] अर्जेहाल दीवाने-साकिब, पृ० ७।

लहदपर चलनेवाले थम कि हम कुछ कह नहीं सकते।
ज़मीं रखती है मुँहपर हाथ जब फ़रियाद करते हैं॥

किसी वस्तुपर तकिया करना, भरोसा करनेके स्थानपर बोला जाता है—

बाग़बाँने आग दी जब आशियानेको मेरे।
जिनपै तकिया था वही पत्ते हवा देने लगे॥

जामेसे बाहर हो जाना, यानी आपेसे बाहर हो जाना, अपने ऊपर अख्तियार न रखना, इस मुहावरेने क्या लुत्फ पैदा किया है—

वोह उलटकर जो आस्तीं निकले।
ज़ुल्म जामेसे अपने बाहर था॥

दम लेना, यह मुहावरा ठहरनेकी जगह बोला जाता है—

इश्कके बाद अब हवादिसको[1] ज़रूरत क्या रही।
आस्माँ दम ले, मेरे मरनेका साम़ाँ हो गया॥

तुलनात्मक कलाम

अब तक मिर्ज़ाकी भाषाके चटखारे लिये। अब आइए हम आपको मीर, दर्द, ग़ालिब आदिके साथ मिर्ज़ाके भावोद्यानकी सैर करायें। ताकि आप जान सकें कि शाइरीमें मिर्ज़ाका आसन कितना ऊँचा है। वे किस जॉफिशानीसे उर्दूके अमर कलाकारोंके शाने-ब-शाने चलनेका प्रयत्न करते रहे और किस हदतक सफल हुए। यहाँ कुछ तुलनात्मक अशआर सैयद अकबरअलीद्वारा संकलित दीवाने-साकिबसे साभार दिये जा रहे हैं—

मीर— **उसके फ़रोग़े-हुस्नसे झमके है सबमें नूर।**
शमए-हरम[2] हो या कि दिया सोमनाथका॥

---

[1]मुसीबतोंको; [2]मस्जिदका दीपक।

साकिब— बताइए, रहेगी शमअ़ किस तरह हिजाबमें ?
यह क्या समझके हुस्नको छुपा दिया नकाबमें ॥

ज़ौक— तुझे हमने बहुत ढूंडा न पाया।
अगर पाया तो खोज अपना न पाया ॥

गालिब— थक-थकके हर मुकामपै दो-चार रह गये।
तेरा पता न पायें तो नाचार[1] क्या करें ?

अमीर— उसकी हसरत[2] है, जिसे दिलसे भुला भी न सकूं।
ढूंडने उसको चला हूँ, जिसे पा भी न सकूं ॥

साकिब— अपनी किस्मतसे बिगड़ जाऊँ कि दौरे-चर्ख़से[3]।
मैं तो वोह ढूंढा किया जो जेबे-दुनियामें[4] न था ॥

गालिब— मेरी तअ़मीरमें मुज़मिर है इक सूरत खराबीकी।
हयूला बर्के-खिरमनका है ख़ूने-गर्म दहकॉका[5] ॥

साकिब— अपने ही दिलकी आगमें आखिर पिघल गई।
शमए-हयात[6] मौतके साँचेमें ढल गई ॥

दर्द— हो गया मेहमाँ सराए[7]-कसरते-मौहूम[8] आह !
वोह दिले-ख़ाली[9] जो तेरा ख़ास खिलवतख़ाना[10] था ॥

साकिब— जो कुछ हुआ आलममें, होता न तो क्या होता ?
बहतर था बिगड़नेको यह दिल न बना होता ॥

---

[1]बेचारे, असमर्थ; [2]अभिलाषा; [3]आसमानके चक्रसे; [4]विश्वके पास; [5]मेरे निर्माणमे ही मेरे विनाशके तत्त्व निहित है। किसानके घोर परिश्रममे ही विजलीके वे तत्त्व समाये हुए है, जो उसके अनाजके ढेरको जला देते है। तात्पर्य यह है कि हमारी समृद्धि और सुखके सामानोमे हमारे विनाशके तत्त्व छिपे हुए है; [6]जीवन-दीप; [7]अतिथि गृह; [8]वहमकी अधिकतासे; [9]रिक्त हृदय; [10]एकान्तवास। (जिस मन-मन्दिरमें केवल एक ईश्वरका रूप सामाया था वहाँ अब करोड़ो देवता बास करते हैं)।

दर्द— वाये नादानी कि वक़्ते-मर्ग यह साबित हुआ।
ख़्वाब था जो कुछ कि देखा, जो सुना अफ़साना था॥

साकिब— अफ़सोस है कि उम्रे-फ़ानीने[1] ख़त्म होकर।
मुझको वही बताया जिसको मैं जानता था॥

कायम— किस्मत तो देखिए कि कहाँ टूटी है कमन्द।
कुछ दूर अपने हाथसे जब बाम[2] रह गया॥

साकिब— मेरी क़ैदका दिलशिकन[3] माजरा था।
बहार आई थी आशियाँ बन चुका था॥

सौदा— ऐ हमसफ़ीर[4]! फ़ायदा नाहक़के शोरका?
हम तो क़फ़समें आनके ख़ामोश हो गये॥

साकिब— क़फ़समें चुप न रहूँ तो मैं क्या करूँ कि यह क़ैद।
न दोस्तीके लिए है न दुश्मनीके लिए॥

दर्द— जगमें कोई न टुक हँसा होगा।
कि न हँसते ही रो दिया होगा॥

साकिब— शादीमें भी कुछ ग़मके पहलू निकल आते हैं।
बे-साख़्ता हँसनेमें आँसू निकल आते हैं॥

दर्द— गो नाला ना-रसा[5] हो, न हो आहमें असर।
मैंने तो दर गुज़र न की जो मुझसे हो सका॥

साकिब— शुक्रगुज़ार दर्द हो, दिलकी ख़बर पहुँच गई।
तू जो नहीं, नहीं सही, नाला तो बारयाब[6] है॥

---

[1]मिटनेवाली ज़िन्दगी, नश्वर शरीरने; [2]प्रेयसीकी छतकी मुँडेर; [3]हृदयको व्यथित करनेवाला; [4]यक्साँ बोली बोलनेवाले, साथी; [5]प्रेयसीतक न पहुँचनेवाला; [6]प्रेयसीतक पहुँचनेमें सफल।

दर्द— आती है दिलमें और ही सूरत नज़र मुझे।
शायद यह आइना भी किसीके हुज़ूर है॥

साकिब— हटे यह आइना महफ़िलसे और तू आए।
कोई तो हो जो मेरे दिलके रूबरू आए॥

मीर— जो इस शोरसे 'मीर' रोता रहेगा।
तो काहेको हमसाया[1] सोता रहेगा॥

साकिब— हिज्रकी शब नालएदिल[2] वोह सदा देने लगे।
सुनने वाले रात कटनेकी दुआ देने लगे॥

दर्द— हस्तीने तो टुक जगा दिया था।
फिर खुलते ही आँख सो गये हम॥

साकिब— उम्र भर ग़फलत रही हस्तीए-बे-बुनियादसे[3]।
उठ गये इक नींद लेकर आलमे-ईजादसे[4]॥

दर्द— वाइज़! किसे डराये है, यौमुल-हिसाबसे[5]।
गिरया[6] मेरा तो नामए-अअ्माल[7] धो गया॥

साकिब— इस तरह पाक किया अश्केनदामतने[8] मुझे।
इससे पहले कभी जैसे मैं गुनहगार न था॥

दर्द— वला है नशए-दुनिया[9], कि ता-क़यामत[10] आह।
सब अहले-क़ब्र[11] उसीका ख़ुमार[12] रखते हैं॥

साकिब— क्या चीज़ है हयात[13] कि मरनेके बाद भी।
जो चुप हुआ वोह गोश-बर[14] आवाज़े-सूर[15] था॥

---

[1]पड़ोसी; [2]दिलकी आहें, हृदयकी चीत्कार; [3]निःसार जीवनसे; [4]संसारसे; [5]कर्मोंका लेखा लेनेके लिए नियत किया हुआ दिन; [6]रुदन; [7]कर्म-लेख; [8]पश्चात्तापके आँसुओंने; [9]संसार आसक्तिका नशा; [10]प्रलयतक; [11]क़ब्रमें पड़े हुए मृतक; [12]नशा, ख़याल; [13]ज़िन्दगी; [14]कर्णमय, सुननेको उत्सुक; [15]नरसिंहा बाजेकी आवाज़पर।

दर्द— जिन्होंके दिलमे जगह की है नक़्शे-इबरतने[1]।
सदा नजरमें वोह लौहे-मज़ार[2] रखते है॥

साकिब— नजदीक समझ, हश्र हो या पैके-अजल हो।
मिलना जिसे मंजूर है वोह दूर नहीं है॥
इबरते-दहर[3] हो गया जबसे छुपा मजारमें।
ख़ैर जगह तो मिल गई दीदए-एतबारमें[4]॥

दर्द— कीजिए क्या, आह किधर जाइए।
छूटिए इस दुःखसे जो मर जाइए॥

ज़ौक— अब तो घबराके यह कहते है कि मर जायेंगे।
मरके भी चैन न पाया तो किधर जायेंगे॥

साकिब— एक दम था जो किसी सूरत निकलता ही न था।
इश्कके हाथोसे यह मुश्किल भी आसाँ हो गई॥

दर्द— गर मअ्रिफ़तका[5] चश्मेबसीरतमें[6] नूर है।
तो जिस तरफको देखिए उसका जहूर[7] है॥

साकिब— छुपाओ आपको जिस रंग या जिस भेसमें चाहो।
मगर चश्मे-हक़ीक़तबींसे[8] पर्दा हो नहीं सकता॥

दर्द— बस है यही मजारपे मेरे कि गाह-गाह।
जाए-चिराग़[9] कोई दिले-मेहरबाँ[10] जले॥

साकिब— बहुत-से याद है महफ़िलके बैठनेवाले।
कभी तो भूलके कोई सरे-मजार आये॥

---

[1]नसीहत या ख़ौफने; [2]मृत्युका ध्यान (कब्रके सिरहाने गडा हुआ पत्थर, जिसपर मृतकके नामके अतिरिक्त कुछ शिक्षाप्रद शब्द भी अंकित रहते हैं); [3]जिससे दुनिया सबक हासिल कर सके; [4]विश्वासभरी आँखोमे; [5]ईश्वरीय, [6]दिव्य दृष्टिमे; [7]प्रकाश, अस्तित्व; [8]दिव्य दृष्टिसे; [9]दीपकके बजाय; [10]हितैषी-हृदय।

दर्द— हमने तो एक मआसियत[1] चाही छुपे न छुप सकी।
अपने गुनाहको तेरा अफ़ूही[2] पर्दापोश है॥

साकिब— पर्दा-पोशीपै तेरे नाज़ है ऐ ज़र्रा-नवाज़!
हश्रमें ढाँप लिया मुँह मेरा रुसवाईने॥

दर्द— मआलकार सुझाया कबूरने[3] हमको।
यह नक़्द माल लगा हाथ इस दफ़ीनेसे[4]॥

साकिब— रोशनी डालके दुनियाका दिखाता था मआल[5]।
यह चिरागे-सरे-तुरबत मेरा बेकार न था॥

दर्द— मुझे यह डर है दिले-जिन्दा तू न मर जाये।
कि ज़िन्दगानी इबारत[6] है तेरे जीनेसे॥

साकिब— दिले-मुर्दा कभी जीनेका तलबगार[7] न था।
होशियारीको समझता था पै हुशियार न था॥
ज़िंदगी अच्छी सही, लेकिन इसे समझे तो कौन?
दिल नहीं तो आलमे-ईजादमें[8] क्या रह गया?

मीर— मरता था मैं तो बाज़ रखा मरनेसे मुझे।
यह कहके—"कोई ऐसा करे है, अरे! अरे!!"

ग़ालिब— मैंने चाहा था कि अन्दोहे-वफ़ासे[9] छूटूं।
वोह सितमगर मेरे मरनेपै भी राज़ी न हुआ॥

साकिब— दर्दसे इक आह भी करने नहीं देते मुझे।
मौत है आसाँ मगर मरने नहीं देते मुझे॥

---

[1]पाप-गुनाहगारी, भूल; [2]दरगुज़र, क्षमाशीलता, [3]कब्रोंने; [4]खज़ानेसे; [5]परिणाम, [6]दिल शब्द है और जीवन वाक्य है, यदि शब्द नहीं तो फिर वाक्यका अस्तित्व नहीं; [7]इच्छुक, [8]संसारमें; [9]सुशीलताके गममें।

ग़ालिब— कोई वीरानी-सी वीरानी है।
दश्तको[1] देखके घर याद आया॥

साक़िब— वीराना जहाँ देख लिया राहे-सफ़रमें।
बढ़ता हूँ उसी सिम्तको[2] शायद मेरा घर हो॥

ग़ालिब— नाले अ़दममें चन्द हमारे सुपुर्द थे।
जो वाँ न खिच सके सो वोह याँ आके दम हुए॥

साकिब— वोह रूहबख़्शे-जाँ[3] थे, जाँकाह[4] बनके निकले।
कुछ दम[5] थे पास मेरे जो आह बनके निकले॥

ग़ालिब— क़ैदे-हयात, बन्दे-ग़म, अस्लमें दोनों एक हैं।
मौतसे पहले आदमी गमसे निजात पाए क्यों?

साक़िब— उक़्दाहाये ग़मसे वाबस्ता है अपनी ज़िन्दगी।
हम कहाँ? यह मुश्किलें जिस वक़्त आसाँ हो गईं॥

ग़ालिब— हमने माना कि तग़ाफ़ुल न करोगे लेकिन—
ख़ाक हो जायेंगे हम तुमको ख़बर होनेतक॥

साक़िब— सद्द हादिसए-दहरकी[6] टूटी न अजलसे[7]।
जाती नहीं उनतक मेरे मरनेकी ख़बर भी॥

मीर— दुनियाकी क़द्र क्या जो तलबगार हो कोई।
कुछ चीज माल हो तो ख़रीदार हो कोई॥

साकिब— उरूसे-दहरको[8] दिल देके आज़माऊँ क्या?
सँवारनेमें जो बिगड़े उसे बनाऊँ क्या?

मीर— अबकी जुनूँमें फ़ासिला शायद न कुछ रहे।
दामनके चाक और गरेबाँके चाकमें॥

साक़िब— रास्ता वहशतको आख़िर मिल गया तंगीमें भी।
यह गरेबाँ था कि दो हाथोंमें दामाँ हो गया॥

---

[1]जंगलको; [2]तरफको; [3]जान या आत्माको प्रफुल्ल करनेवाले; [4]जान लेवा; [5]स्वाँस; [6]संसारके कष्टोंकी दीवार; [7]मृत्युसे; [8]संसाररूपी दुलहिनको।

मीर— दीदनी[1] है शिकस्तगी[2] दिलकी।
क्या इमारत ग़मोंने ढाई है॥
साकिब— हम अभी समझे थे अंजाम कि जब फ़ितरतने।
खाक और खूनसे तैयार किया खूने-दिल॥

मीर— हम कहते थे यूँ कहते, यूँ कहते जो वोह आता।
यह कहनेकी बातें थीं, कुछ भी न कहा जाता॥
साकिब— बयाने-हालका[3] नैरंगे-इश्क दुश्मन है।
इधर वोह सामने आये, उधर गिला[4] न रहा॥
उनकी बज्मे-नाज़में तो सांस भी दिलने न ली।
नालाकश बरसोंका इक तसवीर बनके रह गया॥

मीर— 'मीर' साहबसे खुदा जाने हुई क्या तकसीर[5]।
जिससे इस ज़ुल्मे-नुमायाँके[6] सज़ावार हुए॥
गालिब— हद चाहिए सज़ामें उक़ूबतके[7] वास्ते।
आख़िर गुनाहगार हूँ, काफ़िर[8] नहीं हूँ मैं॥
साकिब— या न था उनके सिवा दहरमें[9] ज़ालिम कोई।
या सिवा मेरे कोई और गुनहगार न था॥

मीर— तेरा है वहम कि मैं अपने पैरहनमें[10] हूँ।
निगाह गौरसे कर मुझमें कुछ रहा भी है?
साकिब— यह जौकका आलम[11] है कि तकदीरका लिक्खा।
बिस्तरपै हूँ मैं या कोई तसवीर पड़ी है॥

---

[1]देखने योग्य, [2]दिलकी खस्ताहाली; [3]अपनी स्थिति बयान करनेका, [4]शिकायत, [5]अपराध; [6]ज़ाहिरासितमके; [7]सख्तीके लिए, दु:खके लिए; [8]नास्तिक; [9]संसारमें; [10]लिबासमें; [11]रुचिकी परिस्थित।

मीर— आगे किसूके क्या करें दस्ते-तमअ[1] दराज[2]।
यह हाथ सो गया है सिरहाने धरे-धरे।।

साकिब— अपना-सा जोर करके थके मुनअिमाने-दहर[3]।
मुट्ठी न खुल सकी मेरे दस्ते-सवालकी।।

मीर— हाले-बद[4] गुफ्तनी[5] नहीं अपना।
तुमने पूछा तो मेहर्बानी की।।

साकिब— किस मुँहसे जबाँ करती इजहारे-परेशानी[6]।
जब तुमने मेरी हालत सूरतसे न पहचानी।।

मीर— पोशीदा[7] राजेइश्क़[8] चला जाये था सो आज।
नाताक़तीने[9] दिलका वोह, पर्दा उठा दिया।।

साकिब— गिरने लगी है क़ीमते-दिल आँसुओंके साथ।
किसने उलट दिया वरक़े-एअतबारको[10]?

मीर— आह हर ग़ैरसे तांचन्द[11] कहूँ दिलकी बात।
इश्क़का राज[12] तो कहते नहीं महरमसे[13] भी।।

साकिब— दिलने रग-रगसे छुपा रक्खा है तेरा राजे-इश्क़।
जिसको कहदे नब्ज ऐसी मेरी बीमारी नहीं।।

मीर— दिलके तईं आतिशे-हिजराँसे[14] बचाया न गया।
घर जला सामने और हमसे बुझाया न गया।।

साक़िब— मुख्तार है बन्दा कोई मजबूर नहीं है।
फिर क्या है जो दिलपर मेरा मक़दूर[15] नहीं है।।
हवास,[16] सोजे-ग़मे[17] दिलकी ताब ला न सके।
वोह आग घरमें लगी थी कि हम बुझा न सके।।

---

[1]अभिलाषापूर्ण हाथ; [2]लम्बा, पसारना; [3]ससारके धनिक; [4]बुराहाल; [5]कहने योग्य; [6]परेशानियोका वर्णन; [7]गुप्त, छिपा हुआ; [8]प्रेमका भेद; [9]निर्बलता, कमजोरीने; [10]विश्वासरूपी पृष्ठको; [11]कितनी भी; [12]भेद; [13]अन्तरग साथीसे, [14]विरहाग्निसे; [15]काबू; [16]औसान; [17]दुःखरूपी अग्निको।

तुझमें कुछ ऐसा न हमने जुज़जफा[1]।
पर्दा क्या कुछ था कि जीको भा गया॥

जफा उठानेकी आदत पड़ी तो क्योंकर जाय?
सितम सहे, मगर इतने कहाँ कि जी भर जाय॥

मेरी-सी नालातराशी न कर सका फरहाद।
अगर्चे उसने भी इक उम्र तेशारानी[2] की॥

दिले-ग़मनाक ऐसा है कि दर्द ईजाद[3] करता है।
ज़माना रो रहा है यूँ कोई फरियाद करता है॥

है आदमी बजाये खुद इक महशरे-खयाल।
हम अंजुमन समझते हैं खिलवत ही क्यों न हो॥

आओ तो हम दिखायें तुम्हें इक नया जहाँ।
आबाद है खयालमें दुनिया विसालकी॥

उठती नहीं है खानए-ज़ंजीरसे[5] सदा[6]।
देखो तो क्या सभी यह गिरफ़्तार सो गये॥

काबिले-जुम्बिश था जबतक रो चुकीं कड़ियाँ मुझे।
आज सन्नाटा पड़ा है खानए-ज़ंजीरमें॥

हम इतनी उम्रमें दुनियासे हो गये बेज़ार।
अजब है ख़िज़्रने क्योंकरके जिन्दगानी की?

यहाँ दम भरका जीना भी है दूभर।
कोई खुश होगा उम्रे-जाविदाँसे[7]॥

दहरमें[8] नक्शे-वफा[9] वजहे-तसल्ली न हुआ।
है यह वोह लफ्ज़ कि शर्मिन्दाए-मअनी न हुआ॥

उनका हुआ न देखा नक्शे-वफा किसीका।
गुद दिल मिला न कोई इस लफ्ज़े-बे-निशाँसे॥

दर्द— 'दर्द' अपने हालसे तुझे आगाह क्या करे?
जो साँस भी न ले सके वोह आह क्या करे?
साक़िब— ख़मोशीपर मेरे क्यों बदगुमानी है मेरे दिलसे?
वोह क्या नाले करे जो साँस भी लेता हो मुश्किलसे॥

दर्द— कोई भी शख़्स उसका मारा हुआ न पनपा।
दिल मत कहीं लगाना उलफ़त बुरी बला है॥
साक़िब— तड़पना किसका देखोगे, जो ज़िन्दा हूँ तो सब कुछ हो।
बलाए-इश्क़का मारा कभी बिस्मिल नहीं होता॥

दर्द— दिल भी तेरा ही ढंग सीखा है।
आनमे कुछ है, आनमें कुछ है॥
साकिब— हरदम है अब नई ख़लिशे-ग़म[1] कि दिल मेरा।
सूरतनुमा-ए-जलवए-जानाना[2] हो गया॥

गालिब— हैफ़ उस चार गिरह कपड़ेकी क़िस्मत 'ग़ालिब'!
जिसकी क़िस्मतमें हो आशिक़का गरेबाँ होना॥
साकिब— हाथोंकी ख़ता हो कि मुक़द्दरकी जफ़ा हो।
जो चाक न होता वो गरेबाँ नहीं देखा॥

शहनशाहहुसेन रज़वीद्वारा सकलित कुछ तुलनात्मक अशआर—

दर्द— पड़ी है ख़ाकपर यह लाश उस रश्के-शहीदाँकी[3]।
लहूके आँसुओं रोया है जिसको देखकर ख़ूनी॥
साकिब— हमारी दास्ताने‌ग़म रुलाती है ज़मानेको।
वोह हम है जो ज़बाने-ग़ैरसे फ़रियाद करते हैं॥

---

[1]दुःखकी फाँस; [2]प्रेयसीकी छटा दिखानेवाला; [3]शहीदोंको ईर्ष्या योग्य।

दर्द— अश्कने मेरे मिलाये कितने ही दरियाके पाट।
दामने-सहरामें[1] वर्ना इस क़दर कब घेर था?

साकिब— वोह् काँटे जिनको चुन लाया हूँ मैं वादीए-वहशतसे[2]।
निकालूंगा अगर वुसअ़त[3] हुई सहराके दामनमें॥

दर्द— बाद मरनेके भी वोह् बात नहीं आती नज़र।
जिस तवक़्क़ोअ़पै[4] कि हम अब तईं[5] याँ जीते है॥

साकिब— परदए-हश्र उठा फिर भी तमन्ना है बईद[6]।
काम मुश्किल था जो मरनेपै भी आसाँ न हुआ॥

दर्द— कबतक आँसू कोई पिये जाये?
इस मुहब्बतने जी बहुत खाया॥

साकिब— जब ख़ूनमें है जोश तो पी जाइये क्योंकर?
ज़ख़्मोंका लहू बाद-ए-अंगूर[7] नहीं है॥

दर्द— आगे जो बला आई थी सो दिलपै टली थी।
अबकी तो मेरी जान ही पै आन बनी है॥

साकिब— या इलाही कौन-सी बिजली गिरी थी बाग़में।
जो नशेमनसे सरककर मेरे दिलपर आगई॥
शबे-फिराक़,[8] मैं दिल फूँककर सहर[9] की थी।
शबे-मज़ार[10] तो वह भी नहीं, जलाऊँ क्या?

दर्द— बाद मरनेके मेरे होगी मेरे रोनेकी क़द्र।
तब कहा कीजिएगा लोगोंसे—"वोह् बरसातें कहाँ?"

साकिब— मिट चुके यह दिल तो फिर पूछें मिज़ाजे-हुस्ने-दोस्त।
सैद ही[11] नाबूद[12] हो तो किस लिए सैयाद हो॥

---

[1]जंगलके विस्तारमें; [2]उन्मादकी घाटीसे या उन्मादावस्थामें; [3]विस्तीर्णता; [4]आशापर; [5]अबतक; [6]दूर, [7]अंगूरी शराब; [8]विरह-रात्रिमें; [9]सुबह; [10]क़ब्रके अँधेरेमें; [11]जिसका शिकार किया जाय; [12]अस्तित्वहीन

ग़ालिब— बेदरो-दीवार-सा इक घर बनाना चाहिए।
कोई हमसाया[1] न हो और पासबाँ[2] कोई न हो॥

साकिब— वीराना ही अच्छा है कि वीराँ तो न होगा।
घर हो तो न दीवार हो उस घरमें, न दर हो॥

मीर— बार-हा[3] वादोंकी रातें आइयाँ।
तालओंने[4] सुबह कर दिखलाइयाँ॥

मुसहफी— शाहिद[5] रहियो तू ऐ शबे-हिज्र[6]!
झपकी नहीं आँख 'मुसहफी'की॥

साकिब— उम्रभर जलता रहा दिल, और ख़ामोशीके साथ।
शमअ़को इक रातकी सोज़े-दिलीपर[7] नाज़[8] था॥
सहरको[9] भी मेरी महफ़िलमें बरहमी[10] न हुई।
तमाम रात हुई, दर्दमें कमी न हुई॥

मूनिस— शब[11] जो ज़िंदाँसे[12] हुई ताज़ा गिरफ़्तारोंको।
सर वोह टकराये कि दर[13] कर दिया दीवारोंको॥

साकिब— शबको ज़िन्दाँमे मेरा सर फोड़ना अच्छा हुआ।
आज कुछ-कुछ रोशनी आने लगी दीवारसे॥

नफीस— अपने ही अअ़ज़ाने[14] की आख़िरको हमसे दुश्मनी।
दोस्तोंकी दोस्तीका हाल हमपर खुल गया॥

साकिब— बाग़बाँने आग दी जब आशियानेको मेरे।
जिनपै तकिया था वही पत्ते हवा देने लगे॥

गालिब— समझके करते है बाजारमें वोह पुरसिशेहाल[15]।
कि यह कहे कि सरे-रहगुज़र[16] है क्या कहिए॥

साक़िब— कब उसने की है पुरसिशेग़महाय-जाँगुसल।
जब हाले-दिल बयानके क़ाबिल नहीं रहा॥

---

[1]पडोसी; [2]रक्षक चौकीदार; [3]बार-बार; [4]भाग्यने; [5]साक्षी; [6]विरहरात्रि; [7]दिलजलानेपर, जलनपर; [8]घमण्ड; [9]सुबहको; [10]नाराजी; [11]रात्रि; [12]बन्दीगृहमे; [13]दर्वाजा; [14]इन्द्रियोने; [15]हाल पूछते हैं; [16]रास्ता है।

यह साक़ीने साग़रमें क्या चीज देदी ?
कि तौबा हुई पानी-पानी हमारी ॥

यह क्या मजाक़ फ़रिश्तोंको आज सूझा है ?
हुजूमे-हश्रमें ले आए है पिलाके मुझे ! !

नुस्खा बयाज़े-साक़िये-कौसरसे[1] मिल गया।
घर बैठे हम तो अब मए-कौसर[2] बनायेंगे ॥

सदसाला[3] दौरे-चर्ख था साग़रका एक दौर।
निकले जो मैकदेसे तो दुनिया बदल गई ॥

खुदाके हाथ है बिकना न बिकना मैका ऐ साक़ी !
बराबर मस्जिदे-जामअके हमने अब दुकाँ रखदी ॥
बिना है एक ही दोनोंकी कअ्बा हो कि बुतखाना।
उठाकर ख़िश्ते-ख़ुम[4] हमने यहाँ रख दी वहाँ रख दी ॥

बारे-इसियाँके[5] लिए यारब ! फ़रिश्ते भेज दे।
हम लदे आए है अपने शीशा-ओ-सागरसे आप ॥
कातिबे-अअ्माल[6] ! यह है आपके हाथोंका खेल।
बोझ उतरवा लीजिए महशरमें मेरे सरसे आप ॥

नीची दाढ़ीने आबरू रख ली।
क़र्ज़. पी आए इक दुकानसे आज ॥

टपकादे बूंद भर कोई मुँहमें 'रियाज़' के।
दम मैकदेमें तोड़ रहा है पड़ा हुआ ॥

---

[1]जन्नतमे शराब पिलानेवालेकी पुस्तिकासे; [2]जन्नतवाली शराब; [3]सैकडो वर्षका; [4]शराब-पात्ररूपी ईंट; [5]पापोका बोझ ले चलनेके; [6]भाग्य-रेख-लेखक ।

होगा जिन्हें तौबाका भरोसा मेरे मालिक !
वोह और ही होंगे यह गुनहगार न होगा ।।

ख़ुम दोशपर,[1] बग़लमें सुराही, बरोज़े-हश्र ।
उठना मज़ारसे वोह किसी मै-गुसारका[2] ।।

मक़सूद है कोई न पिये वोह हरीस हूँ ।
वाइज़ हुआ मैं, रिन्द-क़दह-ख़्वार क्या हुआ ?

[मैं ऐसा हरीस (लालची-ईर्ष्यालु) हूँ कि मेरी यह इच्छा है कि मेरे सिवा कोई न पिये। यदि मेरे भी ऐसे अनुदार विचार हैं तो फिर मैं रिन्द क्या हुआ वाइज हो गया। क्योंकि इस तरहके ओछे विचार तो इन्ही लोगों-के होते हैं]

हमें पीने-पिलानेका मज़ा जबतक नहीं आता।
कि बज़्मे मैमें कोई पारसा जबतक नहीं आता ।।

आफताबे-हश्र कब चमका 'रियाज़' !
दाग़े-मै दामनसे जब मैं धो चुका ।।

पीकर भी झलक नूरकी मुँहपर नहीं आती ।
हम रिन्दोंमें जो साहबे-ईमाँ नहीं होते ।।

[केवल रिन्द (ईश्वरमे लीन) होनेसे ही चेहरेपर तेज नही झलक सकता, उसके लिए हृदयका स्वच्छ होना भी आवश्यक है]

अछूते जाम हैं मिन्नतके कुछ अलग रखिए ।
किसे पिलायें कोई पारसा नहीं मिलता ।।

---

[1]कन्धेपर; [2]मद्यपका ।

'रियाज़' ! तौबा करो दिन खिज़ाँके आए हैं।
तुम आए पीनेको जाती हुई बहारमें क्या ॥

दिल लाख पाक-साफ़ है दामनको क्या करूँ।
जा-जाके मैकदेमें यह धब्बा लगा दिया ॥

[जीवनमे एक वार भी धब्बा लगा कि फिर छुडाएसे नही छूटता, इसीलिए काजरकी कोटरीमे जानेको पूर्वज मना कर गये है]

क्या तुझसे मेरे मस्तने माँगा मेरे अल्लाह !
हर मौजे-शराव उठके बनी हाव[1] दुआका ॥

'रियाज़' खाके-दरे मैकदा था जीते जी।
फ़नाके बाद उसे खुल्द-आशियाँ[2] देखा ॥

जवतक मिलेगी कर्ज़ पिए जायेंगे जरूर।
हम जानते हैं मुफ़्त है सौदा उधारका ॥

[ऋणकृत्वा सुरापिवेत वालोपर कितना मीठा व्यग्य है]

खुमसे न हो वोह सेर, मै चुल्लूमें मस्त हूँ।
वह ज़र्फ़ शेखका है, यह मुझ खाकसारका ॥

[सतोपी और लालचीकी तुलना क्या खूव की है]

मुझको है लवे-जामे-शिकस्ता भी महे-ईद[3]।
साक़ी ! यह हिलाले-रमज़ाँ हो नहीं सकता ॥

मिलती है दरे-साकीए-कौसरसे[4] यह खिदमत।
इस तरह कोई पीरे-मुगाँ[5] हो नहीं सकता ॥

---

[1]नदीके वहनेका शोर; [2]जन्नतनशी; [3]ईदका चाँद; [4]जन्नतकी शरावके साक़ीसे यह चाकरी मिलती है, [5]मदिरालय-स्वामी।

हरमवालो[1] ! 'रियाज़' आकर हरममें पड़ रहें क्योंकर।
गुज़र उनका कहीं बेजामो-मीना[2] हो नहीं सकता।।

जवानीमे पीकर नशा हुआ तो फिर जवानी क्या ?

भरे साग़रमें है भरपूर रंग उनकी जवानीका।
गजब है बे पिए नशेमें मेरा चूर हो जाना।।

बुरी क्या थी फ़ाकामस्ती, बड़े लुत्फ़से गुजरती।
लिये कुछ जो मैकी तलख़ी ग़मे-रोजगार होता।।
मेरे हल्कसे उतरकर मए-साफ़ अश्क बनती।
कभी मैं गुनाह करता, कभी अश्कबार होता।।
तेरे आगे सर उठाता।कोई पारसा[3] न साक़ी !
जो 'रियाज़'-पारसा भी कहीं बादाख़्वार[4] होता।।

हम रिन्द समझते हैं उसे अंजुमने-वअ़ज़।
जिस बज़्ममें ज़िक्रे-मै-ओ-मीना नहीं होता।।

कोई मस्ते-मैकदा आगया, मए-बे-ख़ुदी वोह पिला गया।
न सदाए-नग़मए-दैर उठी न हरमसे शोरे-अज़ाँ उठा।।
तुझे मै-फ़रोश ख़बर भी है, कि मुकाम कौन है क्या है शै ?
यह रहे-हरममें दुकाने-मै, तू यहाँसे अपनी दुकाँ उठा।।*

---

*बाद दिखावत खोल इत तुपक, तीर, तरवार।
सुरमा, मीसीके खड़े जहाँ बिसावनहार।।
—वियोगी हरि

[1]मस्जिदवालो; [2]मदिरा-पात्रोंके; [3]नेक चलन; [4]शराबी।

जहाँ हम ख़िश्ते-ख़ुम[1] रखदें बिनाए-क़अ्बा पड़ती है।
जहाँ साग़र पटक दें चश्मए-ज़म-ज़म निकलते हैं॥

जिस दिनसे हराम हो गई है।
मै-ख़ुल्दे मुक़ाम हो गई है॥
मर गया हूँ पै तअ़ल्लुक़ है जो मैख़ानेसे।
मेरे हिस्सेकी छलक जाती है पैमानेसे॥
हरम-ओ-दैरमें होती है परिस्तिश किसकी ?
मै परस्तो यह कोई नाम है मैख़ानेके॥

ज़ाहिदो-वाइज़

उर्दूकी परम्पराके अनुसार 'रियाज़'ने भी शेख़ और वाइज़, ज़ाहिद और नासेहकी पगडी उछालनेमे कोई कमी नही की है। कही-कही तो मुँह चिढ़ाते-से नज़र आते है—

क्या तड़ाकेकी सदा थी सरे-नासेहकी[2] क़सम।
किसी मैकशने सुबू कोई उछाला होगा॥
मए-कौसरमें यह बू-बास कहाँ थी ज़ाहिद !
कुछ नहीं, यह किसी मैकशका पसीना होगा॥

कैसे ये बादाख़्वार हैं सुन-सुनके पी गए।
वाइज़को कुछ मज़ा न किसीने चखा दिया॥

पी-पीके उसने सिज्दे किये हैं तमाम रात।
अल्लाहरे शग़ल ज़ाहिदे-शब-ज़िन्दादारका॥

इस शैख़े-कुहन-सालकी, अल्लाहरे बुज़ुर्गी।
जन्नतमें भी जाकर यह जवाँ हो नहीं सकता॥

---

[1]मदिरा-पात्ररूपी ईंट; [2]उपदेशकके सिरकी।

हल्की शराब पी जो किसी नाज़नींके साथ।
वाइज़ मैं इस गुनहसे गिराँबार क्या हुआ?

किया जो मैकदे जानेसे मनअ वाइज़ने।
तो रोज़ उठके यही काम सुबह्-ओ-शाम किया।।

संजीदगीसे महफ़िले-साक़ीमें बात की।
नासेह्-सा बेवक़ूफ़ भी आक़िल निकल गया।।

हमतो ख़ुदापरस्त भी थे, बुतपरस्त भी।
हमको 'रियाज़'! शैख़ो-बरहमनने क्या कहा?

आया जुनूँमें देने वोह नश्तर मुझे 'रियाज़'!
नासेहको देखिए कि मेरा चारागर बना।।

महफ़िले-वाअ़ज़में वाइज़ न मेरे सर होता।
एवज़े-शीशा अगर हाथमें पत्थर होता।।

लगाके धोकेसे मुँह शैख़ फिर न छोड़ सका।
पुकारता ही रहा मैं "अरे शराब-शराब"।।

अ़म्मामा[1]-ओ-अ़बा[2]-ओ-क़बा[3] सब हैं रेहने-मै।
अब दे कोई उधार तो किस एतबारपर?

दामने-तरने[4] दिया काम कुछ ऐ गर्मिये-हश्र[5]!
ज़ाहिदे-ख़ुश्क भी बैठे हैं गुनहगारके पास।।

मस्जिदमें आज हम भी गये थे पए-नमाज़[6]।
देखा सलाम फेरके तो शैख़जी नहीं।।

---

[1]पगडी; [2-3]चोगा; [4](शराबसे) भीगे वस्त्रोने; [5]कयामतकी गर्मी;
[6]नमाज़ पढ़नेके लिए।

पहले मैसे भिगोले रीशे-सफ़ेद[1]।
देख ऐ शैख़! फिर ख़िज़ाबका रंग॥

देखकर शोख़हसीनोको बता ऐ नासेह!
गुद-गुदी दिलमें कभी तेरे उठी है कि नहीं?

फ़रिश्तोंमें थी शैख़ साहबकी गिनती॥
यह रिन्दोंकी सुहबतमें इन्सां हुए है॥

करते है वज्द अब तो सुन-सुनके कअ़बेवाले।
मैंने वोह रूह फूंकी नाकूसे-बरहमनमें[2]॥

शैख़ यह कहता गया पीता गया—
"है बहुत ही बदमज़ा, अच्छी नहीं"।

वाइज़ा! हम गुनह नहीं करते।
हम गुनहगार नाज़ करते हैं॥

जी न माना हज़रते-नासेहको आते देखकर।
कुछ युँही थोड़ी-सी पीली दिललगीके वास्ते॥

क्यों पड़े हो गोशए-मस्जिदमें उट्ठो ज़ाहिदो!
फूटी आँखोंसे ज़रा देखो घटा छाई हुई॥

जिस कामको तू मना करेगा हमें नासेह!
हम छोड़के सौ काम वही काम करेंगे॥

आज तो पी दिखाके वाइज़को।
मै कभी इस क़दर न था गुस्ताख़॥

वोह आ रहा है असा[3] टेकता हुआ वाइज़।
बहा दे इतनी कि साक़ी! कहीं न थाह मिले॥

---

[1]सफेद दाढी; [2]पुजारीके शखमे, [3]लकडी, छडी।

यह सुनके निस्फ़ शबको[1] दरे-मैकदा[2] खुला।
माँगी है इक बुज़ुर्गे-तहज्जुद गुज़ारने[3]॥

ऐ शैख़ तू चुराके पिये जब कभी पिये।
तेरी तरह किसीकी न नीयत ख़राब हो॥

शबको मैख़ानेमें क्यों पहुँचे थे ऐ हजरते शैख़!
कहिए अच्छी तो कटी क़िबलए-हाजातकी रात?

अपने सर मेरे गुनहका बार रहने दीजिए।
शैख़की अच्छी है यह दस्तार रहने दीजिए॥

जनाबे शैख़ने जब पी तो मुँह बनाके कहा—
"मजा भी तल्ख़ है, कुछ बू भी ख़ुशगवार नहीं"॥

उठवाओ मेजसे मै-ओ-सागर 'रियाज़' जल्द।
आते है इक बुज़ुर्ग पुराने ख़यालके॥

जलजला-सा आगया आया जो मैं।
हजरते-वाइज़[4] गिरे, मिम्बर[5] गिरा॥

पाक-ओ-साफ़ इतनी है जिसने पी फ़रिश्ता हो गया।
जाहिदो यह हूरके दामनमें है छानी हुई॥

ताके-हरममें शेख़! गुलाबी है फूल-सी।
इस कामका मिलेगा तुझे फल, उठा तो ला॥

---

[1]आधी रातको, [2]मधुशाला-द्वार, [3]आधीरातको नमाज पढ़नेवालेने; [4]उपदेशक; [5]वह सीढ़ियाँ जिसपर खड़े होकर मस्जिदमें उपदेश दिया जाता है।

तोड़े टकराके सुबू हमने भी उसके सरसे।
चुप है वाइज़ कि यही हासिले-तकरीर भी था॥

कौसरका हौज़ हश्रमें सरपै लिये फिरूँ।
चिल्लायें शैख़ "यह भी तुम्हारा सुबू हुआ"॥

क़र्ज़ लाया है कोई भेस बदलकर शायद।
मै-फ़रोशोंका है जाहिदसे तक़ाज़ा कैसा?

सौन्दर्य-वर्णन

'मैखानए-रियाज' के साथ-साथ आइए लगे हाथ उनके मअशूकको भी दबे पाँव देख लें—

लें वोह दामनमें क्या गुलाबके फूल।
बारे-दामन[1] जिन्हें गुलाबका रंग॥
रंगका उसके पूछना क्या है?
जिसका साया भी दे गुलाबका रंग॥

नाज़ुक कलाइयोंमें हिनाबस्ता मुट्ठियाँ[2]।
शाख़ोंपै जैसे मुँह बँधी कलियाँ गुलाबकी॥
रुख़े-पुरनूरमें[3] जगह थी कहाँ?
रखनेवालेको देखिए तिलके॥

तेरा यह रंग-रूप, यह जोबन शबाबका।
जैसे चमन बहारमें फूला-फला हुआ॥
थी दिलमें गुदगुदी कि यह पूछूँ दमे-विसाल[4]।
"क्यों तू हँसा कि फूल खिला तेरे हारका?"
उफ़-रे उभार, उफ़-रे जमाना उठानका।
कल बामपर[5] थे आज है क़स्द[6] आस्मानका॥

---

[1]दामनका बोझ; [2]मेहदी लगी मुट्ठियाँ, [3]चमकते हुए मुखड़ेपर; [4]मिलनके समय, [5]कोठेपर; [6] इरादा।

क्या क़यामत है शबेवस्ल ख़मोशी उसकी।
जिसकी तसवीरको भी नाज़ है गोयाईका[1]॥
शाख़ेगुल तनती है, क्या बागमें ऐ जोशेबहार!
इसमें अन्दाज़ कहाँ यारकी अँगड़ाईका॥

वोह तसवीर आजतक महफ़ूज़[2] है चश्मे-तसव्वुरमें[3]।
तेरे बचपनसे जब अठखेलियाँ करता शबाब[4] आया॥
हुए हंगामाहाए-हश्र[5] कितने गोशाए-दिलमें[6]।
वोह मेरे सामने कुछ इस अदासे बेनक़ाब आया॥
वोह आये सैरे-दरियाके लिए तो बिछ गईं मौजें[7]।
क़दमसे उनकी अपनी आँख मलते हर हुबाब[8] आया॥

उसके आगाज़े-जवानीका[9] कहूँ क्या आलम।
कुछ उसे नशा-सा था, नशेमें वोह चूर न था॥

शर्मो-हया

ऐ साहब इस तरह घूरकर न देखिए, कुछ उसकी हया-शर्मका भी ख़्याल कीजिए—

नशेसे झुकी पड़ती थीं यूँ ही तेरी आँखें।
छेड़ोंसे मेरी और बढ़ा बोझ हयाका॥
मैं ख़्वाबमें हूँ और खुली हैं मेरी आँखें।
अब दिलमें उतर आये जो पुतला हो हयाका॥
दिल छीनती है और झुकी जाती हैं आँखें।
शोख़ीमें भी जाता नहीं अन्दाज़ हयाका॥

कह उठे—"चुप हो क्यों विसालके[10] बाद?"
ख़ुद ही शरमाये इस सवालके बाद॥

---

[1]बोलनेका; [2]सुरक्षित; [3]कल्पनाके आँखोंमे; [4]यौवन, [5]कयामतजैसाशोर-गुल; [6]दिलके कोनेमे; [7]लहरे; [8]बुलबुला; [9]यौवनके प्रारंभका; [10]मिलनके।

बने हैं शर्मके पुतले शबेवस्ल।
हया आँखोंमें है नीची नजर है॥

हश्रमें शरमाके उसने हाथ मुँहपर रख दिया।
बात दिलकी होंटपर बे-अख़्तियार आनेको थी॥

नज़ाक़त

और इस हयाके साथ यह नजाकत भी मुलाहिजा फर्माइए—

मैं तो समझा पंखड़ी है फूलकी।
किस कदर हलका तेरा ख़ंजर पड़ा॥

ऐसी ज़िद है तो उन्हें कौन मनाये या रब!
वोह यह मचले हैं कि कोई मुझे क्यों याद आया॥

वोह सिन ही क्या है समझ हो जो ऐसी बातोंकी।
वोह पूछते हैं कि—"रोज़े-विसाल क्या होगा?"

शोख़ियाँ

हुज़ूरेवाला! अब यहाँसे खिसक चलिए। देखिए शर्मो-हयाके पर्देमें शोखियाँ शुरू हो गई हैं। अब ठहरना मुनासिब नहीं—

यहाँ भी है वही इतराके चलना।
क़यामत है कि उनकी रह गुज़र है॥

वक़्त ही ऐसा था रुख़सत हो गई उनकी हया।
बात ही ऐसी थी खुल-खेले वोह शर्मानेके बाद॥

हँगामे-नज़अ[1] गिरया[2] यहाँ बेकसीका था।
तुम हँस पडे, यह कौन-सा मौक़ा हँसीका था?

जो गूँज उलझी बालोंकी झूँझलाके बोले—
"लगे प्यारको आग! अभी कान जाता!!"

---

[1]मृत्युके समय; [2]रोने-धोनेका शोर।

बचपन यह है तो कौन बचेगा शबाबतक[1] ?
सदक़े[2] तेरे उमंग अभी इम्तहाँकी है॥

ख़ुदा जाने क्यों उनके दिलमें यह आई।
जफ़ाओंकी[3] ठहरी करम[4] करते-करते॥

उड़ाये फिरती है उनकी जवानी।
क़दम पड़ता नहीं उनका ज़मींपर॥

हम दिलमें ख़ुश कि सब्जए-तुरबत[5] हरा हुआ।
वोह इस अदासे रोये कि पलकें भी नम नहीं॥

कुछ और ही होती है बिगड़नेकी अदाएँ।
बननेमें-सँवरनेमें यह आ़लम[6] नहीं होता॥

हरजाई मअशूक़

यह गुनगुनानेकी आवाज़ कहाँसे आ रही है ? आवाज़ तो जानी-पहचानी मालूम होती है। अरे भई यह तो हजरते 'रियाज़' है, मालूम होता है अपने मअशूकसे कुछ गिला-शिकवा कर रहे हैं—

निकले थे मुँह छुपाये हुए घरसे ग़ैरके।
तसवीर बन गये जो मेरा सामना हुआ॥

ग़ैरके घरसे झिझकते हुए तुम निकले थे।
रुकते देखा तुम्हें, फिर छुपके निकलते देखा॥

कभी कुछ रात गये या कभी कुछ रात रहे।
हमने इन पर्दानशीनोंको निकलते देखा॥

छुपके रातोंको कहीं आप न आये न गये।
बे-सबब नाम हुआ आपका रोशन कैसा ?

---

[1]जवानी आनेतक; [2]न्योछावर, कुर्बान जाऊँ; [3]जुल्मोंकी; [4]कृपा; [5]समाधिपर उगी घास; [6]दशा, हाल।

है अभी मेरे बुढ़ापेमें जवानी कैसी ?
है अभी उनकी जवानीमें लड़कपन कैसा ?

यह भी एहसाँ[1] ? सुबह होते आये तुरबतपर[2] मेरी।
कुछ गुले-पजमुर्दा[3] लेकर गैरके बिस्तरसे आप ॥

पारसाईका[4] यक़ीं[5] गैरको दिलवाते हो।
और भूलेसे जो आजाय तबस्सुम[6] मुझको !

गये थे आप उठाने जनाज़ा दुश्मनका।
कहाँ गई थी बड़े धूमसे सवारी रात ?

हजरते 'रियाज' अपने हबीबसे यह किस अन्दाजकी गुफ्तगू कर रहे है ? मालूम होता है हबीबसे नही, किसी बाजारी औरतसे ज़बान लडाई जा रही है।

कामुकप्रेमी

क्या आप 'रियाज़' को वेदाग और उनके हबीबको पाकदामन समझे बैठे थे ? तौबा कीजिए साहब, जैसी गन्दी देवी वैसे ऊत पुजारी। वेह खुद भी भौरे है और उनकी चहेती भी तितलियाँ है। यहाँसे खिसकिए तो उनके हस्बहाल कुछ शेअर सुनाऊँ—

ऐ 'रियाज़' ! आँख लड़ाते हुए जी डरता है।
जख्म पहुँचे है हसीनोंकी नजरसे क्या-क्या ॥

बाजारमें भी चलते है कोठोंको देखते।
सौदा ख़रीदते है तो ऊँची दूकानका ॥

लूटी है बहुत हमने हसीनोंकी जवानी।
पीरीमें भी अबतक है जवानीकी वही बात ॥

सताते है हम भी हसीनोंको क्या-क्या।
सताती है हमको जवानी हमारी ॥

---

[1] एहसान; [2] कब्र, समाधिपर; [3] कुम्हलाये फूल, [4] नेक चलनीका; [5] विश्वास; [6] मुस्कराहट।

हमको मिल जायें तो आ जाये मज़ा।
अच्छे मअ़शूक और सस्ते दामके॥
जितने हैं मअ़शूक़ मिल जायें हमें।
हैं यह सब काफ़िर हमारे कामके॥

कहते हैं "जान पड़ गई आफ़तमें वक़्तेवस्ल।
मलदलके रख दिया मुझे, अच्छा यह प्यार है"॥

तुम एक रह गये हो हमारी निगाहमें।
सब नाज़नीं हमारी नज़रसे उतर गये॥

किसने देखा हमें कूचेमें हसीनोंके 'रियाज़'।
मुफ़्त बदनाम हुए हम कहीं आये-न-गये॥

कहना किसीका सुबहे-शबे-वस्ल नाज़से—
"हसरत तुम्हारी, जान हमारी निकल गई॥"

देखते ही किसी काफ़िरको बिगड़ जाती है।
मैं जो चाहूँ भी तो रहती नहीं नीयत अच्छी॥

किसीपर दमे-हश्र क्या आँख डालूँ?
हसीं सब मेरे देखे-भाले हुए हैं॥

बेअदबियाँ

'रियाज़' उर्दू-शाइरीकी परम्पराके अनुसार अपने मअ़शूकका सम्मान और इज्जत नही करते, बल्कि बेअ़दबीपर उतर आते हैं—

चूम लेते हैं मुँह कभी हम भी।
जब हसीं कहके कुछ मुकरते हैं॥

कहना किसीका हाय वोह झुँझलाके नाज़से—
"कम्बख़्त हाथ छोड़, कोई देखता न हो"॥

हमने भी इन हसीनोंको छेड़ा है किस क़दर।
ऐसा भी कोई है जो हमें कोसता न हो॥

मैंने लिया जो हश्रमें दामन बढ़ाके हाथ।
बोले वोह "आबरू है मेरी अब ख़ुदाके हाथ॥"

बढ़ने लगे थे दस्ते-अदब बनके दस्ते-शौक़।
ज़ालिमने आज थाम लिये मुसकराके हाथ॥

हाथ गुस्ताख़ है उठ जायें न यह दामनपर।
बचके निकलें मेरी मरक़दसे गुज़रनेवाले॥

दौड़कर गोदमें उठा लाऊँ।
घरमें छमसे जो कोई आजाये॥

पायें तो ऐ हसीनो! तुमको रुलाके छोड़ें।
है यह 'रियाज़' ऐसे इनको तरस न आये॥

डर गये, चीख़ उठे, बात थी क्या, कहिए तो?
क्या शबेवस्ल किसीका कोई अरमाँ निकला॥

दीवाना मैंने हश्रमें ख़ुदको बना लिया॥
जो मिल गया हसीन गलेसे लगा लिया॥

कोई मुँह चूम लेगा इस 'नहीं' पर।
शिकन रह जायगी यूँ ही जबींपर॥

चूमकर मुँह गालियाँ खाते हैं हम।
इस सज़ामें फिर मज़ा पाते हैं हम॥

अरे ओ हश्रमें इतरानेवाले यूँ न चल तनकर।
यहाँ भी लूटनेवाले तेरे जोबनके बैठे हैं॥

खुदा करे कहीं मौकेसे मुझको मिल जायें।
यहीं हसी जो मुझे पारसा समझते हैं॥

जबतक वोह मेरे हाथोंसे मजबूर न होंगे।
वअ्देका उन्हें हश्रमें इकरार न होगा॥

खुलके लूटी हुस्नकी दौलत 'रियाज'!
आज तो डाका सरे-महशर पड़ा॥
कहते हैं "खूब कहो, हम न सतायें तुमको,
तुम जो पा जाओ सताओ हमें कैसा-कैसा?"

छुपता नहीं छुपायेसे आ्लम उभारका।
आंचलकी तहसे देखो नमूदार क्या हुआ?

बता दे आ गया क्या तुमको इस उठती जवानीमें।
बता दें कानमें चुपकेसे क्या तुमको नहीं आया?

हम ग़रीबोका अँधेरेमें निकल जायेगा काम।
आयें तो वह शमए-तुरबतको बुझानेके लिए॥
लेके उट्ठे सुबहको दर्दे-कमर।
शामसे बैठे थे जो सर थामके॥
छेड़ना काफ़िर बुतोंका है सवाब।
जब मिलें उनको सताना चाहिए॥
गुद-गुदाता हो जिन्हें जिनका शबाब।
ऐसे मअ्शूकोंको छेड़ा चाहिए॥

निगाहसे बढ़के हैं गुस्ताख़ दस्ते-शौक़ मेरे।
न कोसियेगा जरा हाथ उठा-उठाके मुझे॥
निकाल दूंगा शबेवस्ल बल नजाकतके।
डरा लिया है बहुत त्योरियाँ चढ़ाके मुझे॥

इतनी वेअदवीके बाद भी 'रियाज़' को सब्र नही होता, वे कुछ और आगे बढते है। अब तक उर्दू-शाइरीके जितने भी अनगिनत आशिक हुए है, वे अपने मअशूकको खुदा या खुदासे बढकर समझते रहे है—

दावरके[1] सामने बुते-काफिरको क्या कहूँ ?
दोनोकी शक्ल एक है किसको खुदा कहूँ ?
मारो भी तुम जिलाओ भी तुम, तुमको क्या कहूँ ?
तुमको खुदा कहूँ या खुदाको खुदा कहूँ ॥

—अज्ञात

और उनकी एक जुम्बिशपर जान-न्योछावर करनेको प्रस्तुत रहे है। जीवन भर उनको प्रसन्न करने और मनानेमे व्यस्त रहे, परन्तु सफलता शायद ही किसीको प्राप्त हुई हो। लेकिन 'रियाज़' दूसरे ही खमीरसे बने है। उनके समक्ष मअशूक रूठनेकी हिम्मत तो तब करे, जब 'रियाज़' मनानेके आदी हो। वे तो बात-वेबात स्वय ही रूठे रहते है—

छेड कैसी ? बात करते रूठ जाते है 'रियाज़'।
एक हसीं हर वक़्त हो उनको मनानेके लिए॥

इन हसीनोने कहा क्या, कि ख़फा हो बैठे।
बात क्या थी कि 'रियाज़' आप बुरा मान गये॥

रूठनेका सबब और क्या होता ? सृष्टिके आदिसे प्रेयसियाँ, प्रेमियोंको सताती, तरसाती आ रही है। उन्हीका बदला 'रियाज' गिन-गिनकर ले रहे है।

पाकीज़ा कलाम

"अमाँ दफान नी करो इस बयानको। इस फवाहिशातके अलावा कुछ पाकीज़ा भी है 'रियाज़'के यहाँ ?"

---

[1]खुदाके।

"है क्यो नही, मगर वही आटेमे नमककी तरह।"

"वह भी क्या कम है, जरा सुने तो सही क्या फर्माया है 'रियाज' साहबने ?"

फर्माया है—

मुफलिसोंकी जिन्दगीका जिक्र क्या ?
मुफलिसोंकी मौत भी अच्छी नही॥

"वाह, क्या बात है! मुफलिसीकी वह डरावनी तसवीर खीची है कि दाद देनेको शब्द नहीं। मालूम होता है कोई दीन-दुखियोको देखकर अगारोपर लोट रहा है।"

"अरे साहब, यह शेअर सुनिए, मालूम होता है 'रियाज़' विश्व-वेदनाको सीनेसे लगाये घूम रहे है। जिसका दिल दीन-दुखियोके लिए ओत-प्रोत न हो, क्या खाकर ऐसा शेअ़र कहेगा ?

मेरे सिवा नज़र आये न कोई दोजखमें।
किसीका जुर्म हो मालिक! मुझे सजा देना॥

"आप क्या फर्मा रहे है ? रियाज-जैसा रगीन मिजाज ऐसा दर्दीला कलाम भला कैसे कह सकता है ?"

और सुनिए—

असर बढ़ जाय यारब! इस कदर सोजे-मुहब्बतका।
जहन्नुममे हर अंगारेको समझूँ फूल जन्नतका॥

उनका पाकीजा इश्क देखिए—

ताअ़तका इन बुतोने सलीका सिखा दिया।
खुद क्या मिले कि मुझको खुदासे मिला दिया॥

जिनमे चर्चा न कुछ तुम्हारा हो।
ऐसे अहबाब, ऐसी सुहबत क्या?

कुछ नीतिपूर्ण—

जिन्के दिलमें है दर्द दुनियाका।
वही दुनियामें ज़िदा रहते है॥
जो मिटाते हैं ख़ुदको जीते जी।
वही मरकर भी ज़िदा रहते है॥

मौतसे बदतर बुढ़ापा आयेगा।
जानसे अच्छी जवानी जायगी॥

क्या सुरमा भरी आँखोसे आँसू नहीं गिरते?
क्या मेंहदी लगे हाथोंसे मातम नहीं होता?

जब अभिलाषाएँ त्यक्त कर दी तो—

हमें ख़ुदाके सिवा कुछ नज़र नहीं आता।
निकल गये है बहुत दूर जुस्तजूसे हम॥
हुए पस्त ऐसे उनकी ख़ाक भी उड़ते नहीं देखी।
रहे रहनेको कितने इस ज़मींपर आस्माँ होकर॥

गुल-ओ-बुलबुलको लक्ष्य करके—

हाय क्या झटपट कफ़समें बालोपर पैदा किये।
जब सुना हमने कि जाती है बहार आई हुई॥

---

*हसरत मोहानीने भी क्या खूब कहा है—

शब वही शब है, दिन वही दिन है।
जो तेरी यादमें गुज़र जाये॥

नशेमनमें गुज़रे कई मौसमे-गुल।
क़फ़समें जो टूटे थे वोह पर न निकले॥
चमनमें हम आये जो छुटकर क़फ़ससे।
महीनों नशेमनसे बाहर न निकले॥

उजाड़ते हुए सौ बार आशियाँ देखा।
चमनमे रहके तुझे खूब बागबाँ देखा॥
सूए-चमन जो चले लूटने बहारका लुत्फ़।
तो हमने दो क़दम आगे तुझे ख़िज़ाँ देखा॥
यह फूल लेके अनादिल[1] चले चमनसे कहाँ।
ज़रूर मेरी लहदका[2] कहीं निशाँ देखा॥

गोशेसे[3] नशेमनके आहोंका असर देखा।
सैयादका घर जलते बे-बर्को-शरर[4] देखा॥
यूँ हश्रमें सैरेकी फ़िर्दौसो-जहन्नुमकी[5]।
कुछ देर इधर देखा कुछ देर उधर देखा॥

ख़ुश किया यूँ बागमें लाकर मुझे सैयादने।
शाखके नीचे क़फ़स है आशियाँ बालाए-सर[6]॥
कोई सौ बार उड़े, सौ बार बैठे।
क़फ़ससे यूँ हम आये आशियाँ तक॥
मुँह बँधी कलियोंके जोबनका यह कहता है उभार—
"अपने सीनेसे हमें कोई लगाले बुलबुल॥"
क़फ़स दस्ते-सैयादमें, हम क़फ़समें।
यह काम आई है ख़ुश बयानी हमारी॥*

---

*इसी मज़मूनको असगर गोण्डवीने क्या खूब बाँधा है—

नग़मए-पुरदर्द छेड़ा हमने इस अन्दाज़से।
ख़ुद-ब-ख़ुद पड़ने लगी हमपर नज़र सैयादकी॥

[1]बुलबुलोंका समूह; [2]कब्रका, [3]कोनेसे; [4]बिजली-आगके बिना; [5]स्वर्ग-नरककी; [6]सिरके ऊपर।

हमने अपने आशियाँके वास्ते।
जो चुभे दिलमें वही तिनके लिये॥

साया भी शाख़े-गुलका न हमको हुआ नसीब।
ऐसे कई बहारके मौसम गुजर गये॥

वाए-किस्मत जब क़फ़सका दर खुला।
उड़गई ताक़त परे-परवाज़की[1]॥

अन्य फुटकर कलाम—

ज़ुल्फ़ोंमें आप बैठके मोती पिरोइए।
आँसू न पोंछिए किसी आशुफ़्ता[2]-हालके॥

जो खिला फूल, बना ज़ख़्म मेरे दिलका 'रियाज़'!
जो कली रह गई खिलनेसे बना दिल मेरा॥

बच जाय जवानीमें जो दुनियाकी हवासे।
होता है फ़रिश्ता कोई इन्साँ नहीं होता॥

यह मेरे दोशसे[3] होते नहीं जुदा दमे-नज़अ[4]।
गड़ेंगे मेरे फ़रिश्ते मेरे मज़ारमें क्या[5]॥

उम्रभर कातिबे-अअ्माल[6] फ़रिश्ते ही रहे।
पाके सुहबत भी न आया इन्हें इन्साँ होना॥

लिये नाक़ूस[7] कोई दैरवाला[8] आज आया है।
अगर सच है तो कअ्बेमें मज़ा वक़्ते-अज़ाँ होगा॥

रहमकर मालिक कि हैं दो-दो फ़रिश्ते भी लदे।
और फिर इसियाँका[9] भी बारे-गिराँ[10] बालाए-सर[11]॥

---

[1] उड़नेवाले परकी; [2] दुखियाके; [3] कन्धेसे; [4] मृत्युके समय भी; [5] इस्लाम धर्मके अनुसार हर इन्सानके कन्धोंपर किसमत कातिबीन नामक फरिश्ते सवार रहते हैं और यही दोनो उसकी नेकी-बदीका ब्योरा लिखते रहते हैं; [6] पुण्य-पाप-लेखक; [7] शख; [8] पुजारी; [9] पापका; [10] भारी बोझ; [11] सिरके ऊपर।

हाँ वही फिर कअ़बा बन जायेगा ऐ शैख़े-हरम !
बुतकदेका पहले नक़्शा खींच, फिर नक़्शा बिगाड़ ॥

हमें ठुकराते जायें जो वहाँ जायें।
पहुँच जायें यूँही हम आस्ताँतक[1] ॥
'रियाज़' ! आनेमें है उनके अभी देर।
चलो हो आयें मर्गे-नागहाँ[2] तक ॥

आँखों में अश्क आये तो हँसनेका लुत्फ़ क्या ?
इतना न गुदगुदाओ कि हम रो दिया करें ॥

मैं जो पहुँचा तो लिये उठके बगोलोंने क़दम।
नज्दमें[3] धूम मची "क़ैसका उस्ताद आया" ॥
कलीम ! जाके जहाँ होश अपना खो आये।
वहाँ तो रोज हम आँखें लड़ाने जाते हैं ॥*
कभी आजाती है कअ़बेमें हमें दैरकी[4] याद।
बैठे-बैठे कभी नाक़ूस[5] बजा देते हैं ॥

लगादो जरा हाथ अपनी गलीमें।
जनाज़ा लिये दिलका हम जा रहे हैं ॥
बाहम[6] शबे-विसाल उठाये हैं क्या मजे।
वोह भी यह कह रहे हैं—"इलाही सहर[7] न हो" ॥
वोह जुर्म ढूंड-ढूंड कर करता हूँ रात-दिन।
लिक्खें तो कातिबाने-अ़मल[8] पर अ़ताब[9] हो ॥

---

*इसी मजमूनसे लड़ता हुआ बिस्मिल शाहजहाँपुरीका शेर भी खूब है—
नहीं मालूम मूसा तूरसे क्यों बेकरार आये ?
मेरी मंजिलमें ऐसे मरहले तो बे-शुमार आये ॥

[1]प्रेयसीके द्वार तक; [2]नागहानी मौत; [3]अरबमे एक जगल है; [4]मन्दिरकी; [5]शख; [6]परस्पर; [7]सुबह; [8-9]करनी-लेखकों पर ईश्वर कोप करे।

शुक्रे-बेदाद[1] तो हो, शिकवए-बेदाद[2] न हो।
मेरे लबपर[3] हो तबस्सुम[4] कभी फ़रियाद न हो॥
हो वफ़ा[5] जिसमें वोह मअ़शूक कहाँसे लाऊँ?
है यह मुश्किल कि हसीं[6] हो, सितमईजाद[7] न हो॥

रखदूँ हरममें[8] दैरसे[9] लाकर अगर उसे।
नाकूस[10] भी ख़ुदाको पुकारे अज़ाँके साथ॥*

बज़्मे-महशरमें[11] न रखती उसकी रहमत[12] इम्तियाज़[13]।
लुत्फ़ होता रिन्द-ओ-ज़ाहिद सब बराबर बैठते॥

कलीम आये तो खुलके जलवा दिखाया।
हम आये तो पर्देसे बाहर न निकले॥

जीमें आता है अभी जाके ख़ुद उससे पूछूँ—
"बात कासिदकी तेरे मुँहकी कही है कि नहीं॥"

जो फिर रहा है खिज़्रका साया बना हुआ?
भटका हुआ यह मेरा कोई नामाबर न हो॥

कुर्बान अपने कसरते-इसयाँके[14] बार-बार।
महशरमें सबसे पहले हमारी पुकार है॥
मज़े लूटो कलीम! अब बन पड़ी है।
बड़ी ऊँची जगह किसमत लड़ी है॥

---

* बरहमन नालएनाकूस मस्जिदतक जो पहुँचादे।
बुरा क्या है मुअज़्ज़िन भी अगर बेदार हो जाये॥
—जालंधरी

[1]अत्याचारके लिए धन्यवाद; [2]अत्याचारकी शिकायत; [3]ओठोंपर; [4]हँसी; [5]नेकी, भलाई; [6]सुन्दर, ; [7]अत्याचार-आविष्कारी; [8]मस्जिदमें; [9]मन्दिरसे; [10]शंख, [11]प्रलयके बाद ख़ुदाके दर्बारमें, [12]ख़ुदाका रहम; [13]भेद-भाव; [14]पापोंकी अधिकताके।

बड़ी कोई नट-खट है या रब! क़ज़ा भी।
चुने बाँके-तिरछे जवाँ कैसे-कैसे ।।

सैरको निकलें वोह अपनी रहगुज़रसे[1] बे-हिजाब[2]।
और रक्खी हो हमारी लाश कफ़नाई हुई ।।

जब चले सूए-लहद[3] मुड़के न देखा घरको।
ऐसे रूठे कि किसीसे भी मनाये न गये ।।

जब चली आस्माँसे कोई बला।
सीधी मेरे मकानपर आई ।।

चली जाती है उनके घर मेरी नींद।
जाके फिर रात भर नहीं आती ।।

उतरनेवाले अभीतक न बामसे[4] उतरे।
तड़पनेवाले तड़पकर फ़लकको[5] छू आये ।।

जब चला मैं दो क़दम तो ज़ोअ़फ़से[6]।
खाके अपने सायेकी[7] ठोकर गिरा ।।
दिल गिरा अन्धे कुएँमें इश्कके।
साथ अपने मुझको भी लेकर गिरा ।।

आगे तो रक़ीबोंकी[8] उठा लेते थे सख्ती।
यह ज़ोअ़फ़ है उठता नहीं अब नाज़[9] किसीका ।।

होके बेताब बदल लेते थे अक्सर करवट।
अब यह है ज़ोअफ कि क़ाबू से है बाहर करवट ।।

नज़अ़में[10] यारसे पैमाने-वफ़ा[11] करते हैं।
इस दग़ाबाज़से हम आज दग़ा करते हैं ।।

---

[1]कूचेसे, रास्तेसे, [2]बेपर्दा; [3]कब्रिस्तानकी तरफ; [4]कोठेसे; [5]आस्मान-को; [6]निर्बलतासे; [7]परछाँईकी, [8]प्रतिपक्षिओंकी; [9]नखरा; [10]मृत्यु-समय; [11]नेकी करनेका वअ़दा।

जाना था कि आना था जवानीका इलाही !
सैलावकी[1] थी मौज[2] या झोंका था हवाका ?

राह चलते हुई है दौलते-दीदार[3] नसीब !
इसमें एहसान नहीं आपके दरबानोंका ॥

बुत ख़ुदा हों कि न हो, है मगर इतनी तौकीर[4]।
बुतकदा आज भी कअ़बा है मुसलमानोंका ॥

मुझको दरबॉने निकाला इस तरह।
उनके दरपर रह गया बिस्तर पड़ा ॥*

उनकी गलीमें रात मैं इस वजअ़से गया।
घबराके पासबान[5] गिरे पासबानपर ॥

गालियाँ भी नहीं तक़दीरमें उनके मुँहकी।
उनके दरबाँ कभी दो-चार सुना देते हैं ॥

जरूर कस्द[6] किया उसने बामे-लैलाका[7]।
बुलन्द[8] आज बहुत क़ैसका गुबार[9] गया ॥

दामनमें फूल लेके चले थे उदूके[10] घर।
हसरत पुकार उठी कि "हमारे मजारपर" ॥

जवाँ होने न पाये थे कि दिल आया हसीनोंपर।
अजल[11] यह कहती आई—"क्या करोगे तुम जवाँ होकर ?"

---

*दरपै पड़नेको कहा और कहके कैसा फिर गया।
जितने अ़रसेमें मेरा लिपटा हुआ बिस्तर खुला ॥
—ग़ालिब

[1]बाढ, बहाव; [2]लहर; [3]झलकरूपी दौलत; [4]गौरव; [5]दरबान; [6]इरादा; [7]लैलाके कोठे तक पहुँचनेकी; [8]ऊँचा; [9]वह बगोला जो रेगिस्तानमे धूलका उठता है; [10]प्रतिद्वन्द्वीके; [11]मृत्यु।

घटती नहीं तुरबतमें[1] भी फ़ुरक़तकी[2] अजीयत[3]।
यह दर्द वोह है मरके भी जो कम नहीं होता॥

किस लुत्फ़से खुली हुई आँखे है बादे-मर्ग[4]।
हम मिट गये मजा न मिटा इन्तजारका॥

मुँहको आया है कलेजा सौ बार।
हाय आलम[5] शबे-तनहाईका[6]॥
यह कोहकनके[7] भी काटे तो कट नही सकती।
पहाड़ हो गई फुरकतकी हमको भारी रात॥

कमजोर हुए अश्कोंसे घरके दरो-दीवार।
रोनेके लिए लेंगे किरायेका मकाँ और॥

यह टूट-टूटके तारे नही गिरे शबे-हिज्र[8]।
फ़लकने[9] साथ मेरे की है अश्कबारी[10] रात॥

यही दिन थे सौ-सौ तरह तुम सँवरते।
जवानी तो आई सँवरना न आया॥
सुनाकर वोह कहते है किस भोलेपनसे—
"हमें वअ़दा करके मुकरना न आया॥"

हश्रके रोज भी क्या ख़ूने-तमन्ना[11] होगा।
सामने आयेंगे या आज भी पर्दा होगा॥
शर्मे-इसयाँसे[12] नहीं उठती है पलकें ऊपर।
हम गुनहगारोंसे क्या हश्रमें पर्दा होगा?

---

[1]क़ब्रमे; [2]जुदाईकी; [3]तकलीफ; [4]मरनेके बाद; [5]हाल; [6]विरह-रात्रिका; [7]फरहादके; [8]विरहकी रातमे; [9]आस्माननें; [10]आँसु गिराये है; [11]इच्छाओका ख़ून; [12]अपराधोंकी शर्मसे।

यह आधी रातको उनका पयाम[1] आया है।
"हम आज आ नहीं सकते, अब इन्तज़ार न हो" ॥

तरीक़े-इश्क़के रहरौ[2] कभी-कभी अब भी।
जनाबे खिज्रको रस्ता बताने जाते हैं॥

अब क्या मिलेगा आँसुओंमें दिल निकल गया।
वह क़ाफ़िला भी तो कई मंज़िल निकल गया॥

लूटे मजे हयाके उठाये अदाके लुत्फ़।
पहरोंसे आज मुझको तसव्वुर[3] किसीका है॥

इश्क़में खूब दिन गुज़रते हैं।
रोज़ जीते हैं, रोज़ मरते हैं॥

ख़ुदाके हाथ है, बिकना न बिकना मैका ऐ साक़ी।
बराबर मस्जिदे-जामअ़के हमने अब दुकाँ रखदी॥

२० अप्रैल १९५२]

---

[1]सन्देश; [2]प्रीति-रीति पर चलनेवाले; [3]ध्यान, ख्याल।
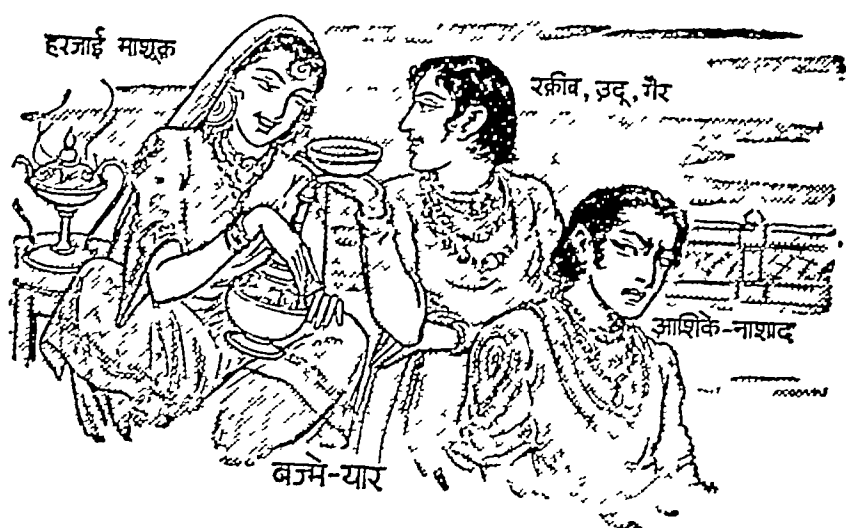
....**जी,** वन्दानवाज ! आप ही हजरते-'दिल' है, जो मग्रशूकोंकी मुट्ठीमे रहते है। कानपुरके एक मुशाइरे मे जब दिल साहवका नम्वर आया तो सयोजकने परिचय दिया—"आप हजरते-दिल है, जो आशिकोके पहलूमे रहते है।"

दिलने तुरन्त जवाव दिया—"अव तो मग्रशूकोकी मुट्ठीमे रहता हूँ।"

एक वार शाहजहाँपुरके आल इण्डिया किस्मके मुशाइरेमे—'दिल' 'नूह' नारवी, और 'सीमाव' अकवरावादी पास-ही-पास बैठे हुए थे। 'फैयाज़' शाहावादीने अपनी गजलका यह मिसरग्र पढा—

'उनके दिलकी धड़कनें सुनते है अपने दिलसे हम'

सुनते ही 'सीमाव' साहवने एग्रतराज किया—"क्या दिलकी धड़कने सुनी भी जाती है ?"

दिलने बरजस्ता जवाब दिया—"जी हाँ, मगर कानोसे नही, दिलसे।"

एक बार आप मुरादाबादके मुशाइरेमे गये तो जिस सज्जनके यहाँ आप ठहराये गये, उन्होने दिनके दो बजे तक न नाश्तेको पूछा, न खाना मँगवाया। सफरके हारे-थके, भूखसे परेशान। दिलसे जब भूख बर्दाश्त न हो सकी तो दौराने-गुफ्तगू अपने साथ गये शागिर्दको दो रुपये देकर फर्माया—"जरा बाज़ार जाकर एक बोरिया और एक सिगरेटकी डिब्बी ले आओ।"

मेजबानने हैरान होकर बोरिया मँगवानेकी वजह पूछी तो आपने कहा—"मेरी आँते उसपर कुल-होवल्लाह पढेगी।"

मेजबान बहुत झेपा, और अपनी गफलतके लिए नादिम-सा होकर दस्तरख्वान चुनवानेके लिए लपका।

हज़रते-दिलका पूरा नाम हकीम जमीरहसनख़ाँ है। 'एअ्तबारुल मुल्क'की उपाधिसे आप विभूषित है। शाइरीमे लखनवी स्कूलके स्नातक है। 'जलील' मानिकपुरीकी मृत्युके बाद अपने उस्ताद 'अमीर' मीनाईके आप पट्टशिष्य निर्वाचित हुए है।

'दिल' कौमके पठान है। आपके ख़ान्दानमे ब-कसरत-औलिया और दुर्वेश (साधु-फकीर) गुज़रे है। आपके बुजुर्गोमे दो महानुभाव ऐसे भी हुए है, जिन्होने करबलाकी मशहूर जगमे हजरत हुसेनके हमराह शरबते-शहादत नोश फर्माया था। आपके पूर्वज जहाँगीरके शासन-कालमे भारत आये थे, किन्तु उनके भक्तो-मुरीदोकी बहुत बडी सख्या देखकर हुकूमतको उनमे राजनैतिक गन्ध आने लगी। अत. उन्हे चुनारके किलेमे कैद कर दिया गया और वही उनकी वन्दी अवस्थामे ही १५६७ ई० मे मृत्यु हुई। उन्हीकी सन्तान १६३८ ई० के करीब शाहजहाँपुरमे आकर आबाद हो गई।

शाहजहाँपुरमे ही १८७५ ई० मे दिल पैदा हुए। वही आपने अरबी-

फ़ारसीकी शिक्षा प्राप्त की और वही आप रहते है। आपके पूर्वजोंमे दुर्वेशो, मौलवियों, धार्मिक विचारके व्यक्तियोंकी बहुतायत रही है। कई पुश्तोंसे यूनानी चिकित्सक भी होते आ रहे है। अतः आपने यूनानी चिकित्साका भी बाकायदा अध्ययन किया। आप शाहजहाँपुरके ख्याति प्राप्त हकीम है। लेकिन आपने इसे आजीविकाका साधन न बनाकर धर्मार्थ ही रखा। आपकी नि.स्वार्थ चिकित्सासे गरीब-अमीर सभी क़ौमके लोग लाभ उठाते है।

आजीविकाकी चिन्तासे आप स्वराज्य होनेसे पूर्व निश्चिन्त थे। अच्छी-खासी जमीदारी थी। ठेकेदारी आदिका भी अच्छा व्यवसाय था। और आज भी निश्चिन्त से-ही है। आपके बड़े साहबजादे वकालत करते है, और छोटे साहबज़ादे घरका कारोबार देखते है। आप इस ८२ वर्षकी वृद्धावस्थामे भी सुबहको मतब करते है, फिर शागिर्दोंके कलाम पर इस्लाह फ़र्माते है, और आने-जानेवालोसे मुलाकात करते-रहते है।

शाइरीका चस्का आपको १५-१६ सालकी उम्रसे ही लग गया था। लेकिन कामिल उस्ताद न मिलनेकी वजहसे शुरू-शुरूमे आप किसीसे मशविरा लिये बगैर ही शेअर कहते रहे। मगर योग्य उस्तादकी खोजमे पूर्ण प्रयत्नशील रहे। आखिर आपकी नजरे-इन्तिखाब 'अमीर' मीनाईपर पड़ी जो कि उन दिनों लखनवी स्कूलके ख्यातिप्राप्त उस्ताद थे।

प्रारम्भमे आप पत्र-व्यवहार-द्वारा उनसे सशोधन लेते रहे। फिर १८९८ ई० मे रामपुर जाकर उस्तादके दर्शनोंका भी सौभाग्य प्राप्त किया। आप किन्ही अनिवार्य कारणोसे उस्तादके यहाँ न ठहरकर अन्यत्र ठहरे। प्रात:काल उपस्थित हुए तो उस्तादने बहुत स्नेह-पूर्वक गले लगाया और अपने यहाँ न ठहरनेका कारण पूछा। दिलके यथोचित समाधान करने-पर उस्तादको फिर कुछ गिला न रहा और अपने पास बैठाकर शेअरो-अदब और इल्मो-फ़नपर वार्त्तालाप करते रहे। दिलकी विद्या-बुद्धि और शाइरीकी लगन और समझसे प्रसन्न होकर उस्तादने फर्माया—"तुम्हारी

शोखिए-तबअसे ज़ाहिर होता है, कि दुनिया-ए-शाइरीमें तुम्हारा मुस्तक़बिल (भविष्य) बहुत नुमायाँ (शानदार) होगा।"[१]

उस्तादकी भविष्यवाणी अक्षरशः सत्य प्रमाणित हुई। उर्दू-संसारके ख्याति प्राप्त—अल्लामा 'इकबाल', 'नियाज़' फ़तहपुरी, सर सुलेमान, 'रियाज़' खैराबादी, 'जलील' मानिकपुरी, 'सफी' लखनवी, 'आर्ज़ू' लखनवी, 'फानी' बदायूनी, 'जोश' मलीहाबादी, 'सीमाब' अकबराबादी, आल अहमद-सुरूर, 'मजनूँ' गोरखपुरी, 'यगाना' चंगेजी, आदि शाइरों, समालोचकोंने आपकी शाइरीकी मुक्त कण्ठसे सराहना की है।[२]

वार्त्तालापके प्रसंगमें हज़रत 'दाग़'का ज़िक्र आ गया तो उस्ताद (अमीर मीनाई) ने फर्माया—"जो लोग मुझे खुश करनेके लिए मेरे सामने 'दाग़'को बुरा-भला कहते हैं। मेरा जी चाहता है कि उनका मुँह नोच लूँ। भला 'दाग़'की कोई हमसरी (बराबरी) कर सकता है? हाय, कोई इस शानका शेअर कहकर तो सुनाये—

ख़ारे-हसरत बयानसे निकला।
दिलका काँटा ज़बानसे निकला[३]॥

'दिल' साहब उस्तादके यहाँसे विदा लेकर अपने ठहरनेकी जगह पहुँच ही पाये थे कि 'जलील' मानिकपुरी अपने साथ एक मुलाज़िमको लिये हुए वहाँ मौजूद मिले। मिठाईका थाल मुलाज़िमके सरपर था। 'दिल'ने आश्चर्य चकित होकर देखा तो 'जलील'ने फर्माया—"क़िबला-ओ-कअबाने यह शीरीनी और दस रुपये आपके लिए भेजे हैं।"

'दिल' साहबने उज्र पेश किया—"यह तो मेरा फर्ज़ था कि उस्तादकी खिदमतमें नज्र पेश करता न कि उस्ताद का।" 'जलील' साहबने

---

[१]तरानए-दिल पृ० ३; [२]इन सबकी सम्मतियोंके लिए देखें—'तरानए दिल' पृ० ३-१०; [३]'नकूश' शख्सियात नम्बर २, पृ० १४५०।

कहा—"उस्तादका इरशाद है कि मैं दिलको मिस्ल अपनी औलादके अपना बच्चा समझता हूँ। बच्चोंको शीरीनी खिलाना बडोका फर्ज है।" आखिर बहुत हील-हुज्जतके बाद रुपये वापिस करके मिठाई ले ली।[1]

'अमीर-मीनाई'-जैसा योग्य, अनुभवी, गुण-ग्राहक, मेहमाँ-नवाज, कृपालु उस्ताद पाकर 'दिल' निहाल हो गये। उस्तादके उपर्युक्त गुण 'दिलको' भी वरासतमे मिले। 'दिल' स्वभावतः शाइर है। शाइराना दिलो-दिमाग लेकर जन्मे है। अन्यथा आपका पारिवारिक वातावरण शाइरीके लिए कतई विपरीत था। फकीरों-मौलवियोके खान्दानमे पैदाइश, पठान-जैसी जगजू कौमका नसलन खून, रोते-झीकते रोगियो-का समूह, जमीदारीकी अकड़ फूं, ठेकेदारी करते हुए दिन-रात मज़दूरो-से दिमाग पिच्ची। मौलवीयाना मजहवी तालीम।

फिर भी शाइर, और शाइर भी कैसे? प्रथम श्रेणीके गजलगो शाइरोमे जिनका आसन हो। और अपने बुलन्द मर्त्तबेके लिहाजसे सम-कालीन शाइरोमे इज्जतो-एहतरामसे देखे जाते हो।

'दिल'ने उस शाइराना माहोलमे शाइरीका दामन पकडा, जो कि शोखी-ओ-रगीनीकी चरमसीमा छू रहा था और जिसके डाँडे 'इशा' और 'जुरअत'की सरहदोसे मिले हुए थे। 'अमीर मीनाई' जैसा उस्ताद पाकर भी जो कि 'दाग'के रगमे शराबोर हो रहा था। 'दिल' अपना दामन बचाकर साफ वेदाग निकल गये और उन्होने अपना जुदागाना रग इख्ति-यार किया। 'दिल' सजीदा और गम्भीर है, परन्तु उनका कलाम शुष्क और नीरस नही। अल्लामा नियाज फतहपुरीके शब्दोमे—

"यूँ तो उनके यहाँ शोखी भी है लेकिन तहजीबके साथ। छेड-छाड भी है, मगर हुदूदे मतानत (सजीदगीकी सीमा) के अन्दर। तज़निगारी (व्यग्य) भी है, मगर दिल-शिकन नही। बेबाकी भी है, लेकिन खुल-

---

[1]नकूश शख्सियात नम्बर २, पृ० १४५०।

खेलनेवाली नही। वे हँसते भी है, लेकिन तवस्सुमकी हदतक। वे ज़ब्त भी हाथसे खो देते है, लेकिन जामादरी (नग्नता)से इसी तरफ। यक़ीनन उनके यहाँ आपको वह जोशो-ख़ुरोश नज़र न आयेगा, जो इश्के-बेताब (प्रेमकी तडप) की ख़ुसूसियात (विशेपताओ)मे दाखिल है। न उनके कलाममे वह सोजो-गुदाज़ (जलन, तडप, वेचैनी) मिलेगा जो शाइरीको यकसर वैन और मर्सिया (शोक-सन्तप्त कविता) वना देता है। लेकिन इस वाव (विपय)मे वे मअज़ूर (लाचार) थे। क्योकि जो आज़ादीसे हँस नही सकता, वह दिल खोलकर रोता भी नही है। कुदरत इस कदर जालिम नही कि जिसे वह हँसने न दे, उसे रुला-रुलाकर हलाक कर डाले[1]।"

हजरते 'दिल'ने अवसे ४८-५० वर्ष पूर्व ही दुनियाए-शाइरीमें अपना जो स्थान वना लिया था; उसकी एक झलक अल्लामा नियाज़ फ़तह-पुरीकी प्रस्तावनारूपी दर्पणमे देखिए—

"सन् १९०९ का वाकेआ है। सैयद इल्तेफात रसूल (मरहूम) तअल्लुक़ेदार सँडीलाके यहाँ सालाना मुशाइरेकी तकरीवमे (वे मुवालिगा) हज़ारो शुअ़राका हुजूम है। और मै भी एक तमाशाई या तमाशा वनने-वाले शाइरकी हैसियतसे वगैर किसी काविले-इल्तेफात जगहको घेरे हुए इस महफिलमे एक फर्दे-हकीर (साधारण व्यक्ति) की हैसियतसे शरीक हूँ। 'इन्शा' की मशहूर गज़लका मशहूर मिसरअ—

"तुझे अठखेलियाँ सूझी है, हम वेज़ार वैठे है"

मिसरअ़ तरह था। महफिले-शेअर गर्म है, और दादो-तहसीन (प्रशसात्मक वाह-वाह)के नअरोसे वज्मे-मुशाइरा गूँज रहा है। लेकिन मै कि उस वक्त भी मुश्किल ही से कोई शेअर किसीका मुझे पसन्द आता था। ख़ामोश वैठा सिर्फ सुन रहा हूँ और देख रहा हूँ।

---

[1]तरानए-दिल पृ० २८।

जनाब 'फ़साहत' लखनवी मरहूम (अमानत लखनवीके पुत्र) ग़ैरतरहमे अपनी एक निहायत ही मअ्रकतुलआरा (अत्यन्त सफल) गज़लका मतलअ् सुनाते है—

खुदा जहाँसे मुझे सूरते-असा[1] न करे।
ठहर-ठहरके उठाऊँ कदम खुदा न करे॥

सारी महफिल दफअतन चीख पडती है। मै भी बेइख्तियार हो जाता हूँ। लेकिन शेअरसे नही, उसके मफहूम (भाव)से नही, बल्कि-जनाब फसाहतके तरीक़े-अदासे, उनके अन्दाजे-शेअर-ख्वानीसे।

इसी तरह जनाब अफज़ल (असीरके[2] बेटे) जो उस वक़्त सरामद शुअराए-लखनऊ (ख्याति प्राप्त शाइरोमे) शुमार होते थे। और दीगर अकाविरे-फन (वहुत-से तत्कालीन श्रेष्ठ शाइर) तरह और गैर तरहमे गजले सुनाते है और स्टेज (मच) पर अपने-अपने फराइज अदा करके बैठ जाते है। मगर यहाँ न दिलको जुम्बिश होती है, न रूहमे कोई इहतजाज (हृदय कमल खिलता था)।

दूसरा दिन तुलूअ होता है, और दोपहरसे दूसरी सुहबते-शेअर बरपा होती है। जो ज्यादा मखसूस, ज्यादा अहम (विशेष और महत्त्वपूर्ण) है। क्योकि इसमे सिर्फ उस्तादे-फन (उस्तादाना मर्त्तबेके शाइरों) ही को अपना-अपना तरही कलाम सुनाना है। कामिल दो घण्टोके शोरो-शगबके बाद एक शाइरने जो वजअ-कितअ (वेष-भूषा)शक्लो- शमाइलके लिहाज़से मुझे बहुत मतीन (गम्भीर) और सजीदा नज़र आया। बगैर किसी खास एहतेमाम या तेवरके तरहकी गजल शुरूअ की जिस वक़्त उसने यह शेअर पढा—

---

[1]हाथकी लाठीके समान; [2]'असीर' हज़रत दिल शाहजहाँपुरीके उस्ताद अमीर मीनाईके उस्ताद थे। आपका परिचय एव कलाम शेरो-सुखनके प्रथम भागमे दिया जा चुका है।

न वोह आरामे-जाँ आया, न मौत आई शबे-वअ़दा।
इसी धुनमें हम उठ-उठकर हज़ारों बार बैठे हैं॥

तो मैं कुछ सोचनेपर मजबूर हुआ। बअ़्ज अगले-पिछले वाकेआत सामने आ गये और दिमाग बार-बार यही दुहराने लगा कि—

"न वोह आरामे-जाँ आया, न मौत आई शबे-वअ़दा"

बे इख्तियार जी चाहा कि पूछूँ यह कौन साहब हैं। लेकिन खामोश रहा। यहाँ तक कि जब वे इस मक्तेपर पहुँचे—

वोह मशगूले-सितम है और हम मसरूफ़े-ज़ब्त ऐ 'दिल'!
न वोह बेकार बैठे हैं, न हम बेकार बैठे हैं॥

तो मैंने आखिरकार अपने करीब किसी साहबसे पूछ ही लिया कि यह 'दिल' कौन साहब हैं?······

यह था मेरा और हजरते-'दिल' शाहजहाँपुरीका अव्वलीन तआ़र्रुफ (प्रथम परिचय)।······जमाना गुज़रता गया, मुतालअ वसीअ (अध्ययन गहन) होता रहा। तजरुबात (अनुभवो)मे इजाफे (विस्तार) होते रहे। मुश्किल-पसन्द तबिअ़तका मेअ़यारे-तन्कीद (आलोचनात्मक स्तर) बुलन्द होता रहा। लेकिन—"न वोह आरामे-जाँ आया न मौत आई शबे-वअ़दा" का लुत्फ उसीतरह क़ायम था और हज़रते 'दिल'की शाइरीने जो जगह दिमागमे पैदा करली थी, वह बदस्तूर कायम रही"।[1]

हज़रते-'दिल'की जिस गजलका उल्लेख 'नियाज़' साहबने किया है, वह यहाँ दी जा रही है—

सरापा यास वोह क्यों बनके मातमदार बैठे हैं।
कि चेहरा ज़र्द है, लब खुश्क हैं, रुख़सार बैठे हैं॥

---

[1]तरानए-दिल पृ० १४-१६।

सुरूरे-कैफ़ बे पायाँ-से हम सरशार बैठे हैं।
दिमाग़ अब अ़र्शे-आ़लापर हैं, पेशे-यार बैठे हैं॥

शबाब आया कि उन नीची निगाहोंने ग़ज़ब ढाया।
यह फ़ित्ने सर उठानेके लिए तैयार बैठे हैं॥

हमींको यह तमन्ना है कोई पामाल कर डाले।
हमीं हसरतज़दा ऐ शोख़िये-रफ़्तार बैठे हैं॥

निकल आई हैं कलियाँ फ़स्ले-गुलकी आमद-आमद है।
जो बेपर थे, वह उड़नेके लिए तैयार बैठे हैं॥

न वोह आरामे-जाँ आया, न मौत आई, शबे-वअ़दा।
इसी धुनमें हम उठ-उठ कर हज़ारों बार बैठे हैं॥

उधर अन्दाज़े-बेमेहरी जो पहले था वह अब भी है।
इधर यह हाल जब देखो पसे-दीवार बैठे हैं॥

वह मशग़ूले-सितम हैं और हम मसरुफ़े-ज़ब्त ऐ 'दिल'!
न वोह बेकार बैठे हैं, न हम बेकार बैठे हैं॥

इसी तरहमें दूसरी ग़ज़ल——

अ़जब तर्ज़े-अदा है, यूँ पए इज़हार बैठे हैं।
कि हम ख़ामोश मिस्ले-नक़्शे-पाए-यार बैठे हैं॥

कोई ऐ नातवानी फिर अ़बस हमको उठाता है।
ब-हालेज़ार आये हैं पसे-दीवार बैठे हैं॥

तेरा कूचा है गो दारुश्शिफ़ा अहले-मुहब्बतका।
मगर हम हैं, कि अपनी जानसे बेज़ार बैठे हैं॥

यही ना गर्मिये-बर्क़े-तजल्ली ख़ाक कर देगी।
यह परदा भी उठाकर ता-लबे-दीदार बैठे हैं॥

चले दौरे-मए रंगीं, खुले बोतल, ढले साग़र।
हवा सनकी घटा उट्ठी है, क्यों मैख़्वार बैठे हैं॥

मिटानेसे कभी दाग़े-मुहब्बत मिट नहीं सकते।
यह वोह सिक्के हैं जो दिलपर हज़ारों बार बैठे हैं॥

हम उट्ठें हैं, तो उट्ठे हैं, ग़ुबारे-राहकी सूरत।
जो बैठे हैं तो महवे-शोख़िये-रफ़्तार बैठे हैं॥

ज़रा समझे, ज़रा सँभले हुए ऐ हज़रते-वाइज़!
यह मैख़्वारोंकी महफ़िल है, यहाँ मैख़्वार बैठे हैं॥

मुझे दर पर जो देखा बोल उठे ऐ 'दिल' वह दरवाँसे—
"यह क्या कहते हैं, क्या मतलब है, क्यों बेकार बैठे हैं?"

हज़रते-'दिल'से जब परिचय हुआ है, तो लगे-हाथ उनके कलामपर भी एक नज़र डाल ली जाए। आपके कलामका सम्पूर्ण सकलन २०—३०, १६ पेजी साइज़ पृ० २८८ का १९५५ ई० मे प्रकाशित द्वितीय सस्करण हमारे सामने है। इसमे प्रथम अध्यायमे १९३२ से १९५५ तक, द्वितीय अध्यायमे १९०५ से १९३२ तक और तृतीय अध्यायमे १९०५ ई० पूर्वका कहा हुआ कलाम है। सकलनमे गज़ले, रुबाइयाँ, नज़्मे, मुख़म्मस, सलाम दिये गये हैं। रुबाइयो, नज़्मो वगैरहमे भी आपका उस्तादाना कमाल ज़ाहिर होता है। मगर आपका वह ख़ास फन नही। मुँहका ज़ायका बदलनेको कभी-कभार तफरीहन कह लेते है। आप गज़लगो उस्ताद है अतः हम आपकी केवल गज़लोंका उल्लेख कर रहे हैं—

दिलका हबीब,

प्राय. गज़लगो-शाइर अपने दीवान या कुल्लियातका प्रारम्भ ईश्वरीय स्तुति (हम्द) से प्रारम्भ करते है। 'दिल'ने भी अपने दीवान 'नग्मए-

दिल'में हम्दिया कलाम कहा है। मगर इस कौशलसे कि यह बंजर और ऊसर ज़मीन भी लहलहा उठी—

नज़रोंसे निहाँ[1] क्यों रहते हो, जब जान लिया पहचान लिया।
मंशा-ए-हिजाब[2] आख़िर क्या है, तुमको तो ख़ुदा भी मान लिया॥

'दिल'का हबीब ख़ुदा है। ख़ुदाकी हम्दमे ही कही गई गजलका पहिला मतलअ़ है। मगर 'नजरोसे निहाँ' और 'मशाए-हिजाब'के नगीने जड देनेसे शेअ़र पढ़ते हुए ऐसा प्रतीत होता है, कि कोई नई-नवेली घूँघट निकाले, सिमटी-सी पर्देमे जा छिपी है, और सारे प्रयत्नोके बावजूद मुख-चन्द्रकी-झलक दिखा नही रही है।

मगर नज़रोसे ओझल या छिपकर कबतक रहा जा सकता है? निरन्तरकी साधना और चिन्तनसे प्रेमी अपने प्यारेको बिन देखे भी देख लेता है। उसकी आँखोमे अपने प्यारेकी ऐसी छवि उतर आती है कि हटाये नही हटती। वह छवि चाहे प्रत्यक्ष उजागर न हो, परन्तु प्रेमीका रोम-रोम अपने प्यारेके दिव्य रूपसे आलोकित हो उठता है—

सीनेमें है दिल, दिलमें तुम हो, मस्तूर[3] हो गो इन पर्दोमें।
है याद मुझे पैमाने-अज़ल[4] बे-दीद[5] तुम्हें पहिचान लिया॥

'नग्म-ए-दिल' इन्तेख़ाबके दो हम्दिया शेअ़र और पढिए और तगज्जुल-का लुत्फ़ उठाइए —

असरे-इश्क़से हूँ सूरते-शमअ़ ख़ामोश।
यह मुरक़्क़अ़ है, मेरी हसरते-गोयाईका॥

[शेअ़्रका आशय तो केवल इतना है, कि प्रेमकी प्रबलताके परिणाम-स्वरूप शमअ़ (जलती हुई मोमबत्ती)की तरह चुप हूँ। अपने

---

[1]छिपे हुए; [2]शर्मकी वजह, पर्देका कारण; [3]छिपे हुए, पोशीदा; [4]सृष्टिके प्रारम्भका वचन; [5]बिन देखे।

भावोंको व्यक्त करनेकी अभिलाषाका केवल-मात्र चित्र बनकर रह गया हूँ]

प्रेम-रसमे जब रोम-रोम भीग जाता है और प्रेमी अपने प्यारेकी चाहतमे विभोर होकर सुध-बुध खो बैठता है, तब उसकी सब वासनाये, कामनाये, यहाँ तक कि वाक्य-शक्ति भी विलीन हो जाती है। इश्क, प्रेम-ज्वालासे दग्ध है तो शमअ भी ज्वलित है। लेकिन कहाँ इश्क कहाँ शमअ ? सूर्यकी कणसे क्या तुलना ?

शमअ सबके सामने जलती है, इश्कका सुलगना कोई नही देख पाता। शमअ भाव प्रकट करनेकी क्षमता न रखते हुए भी सब कुछ कह देती है, इश्क वाणीका वरदान पाकर भी चुप्पी साध लेता है। शमअ सरे-महफिल काँपती है, लरजती है, आँसू बहाती है। इश्क सब कुछ बिसारकर अपने प्यारेमे लीन हो जाता है। शमअ बुझते-बुझते भी धुआँ देकर बदनामीका दाग छोड जाती है, इश्क उपलेकी आगकी तरह दहकता रहता है। इश्क और शमअमे कोई तुलना नही। फिर भी असरे-इश्कका बयान सूरते-शमअसे करना पडा। सोजे-इश्कके लिए शम-ए-महफिलसे मौजूँ और कोई मिसाल हो नही सकती।

शेअरके दूसरे मिसरेमे 'हसरते-गोयाई'के लिए—'मुरक़्क़अ' शब्द भी बहुत खूब जड़ा गया है। 'हसरते-गोयाई'का अर्थ है बोलनेकी इच्छा और 'मुरक़्के'का आशय है—बिखरी हुई या टुकडे-टुकडे हुई तसवीरोंका संकलन। भाव यह है कि जैसे बिखरे या टुकडे-टुकड़े हुए चित्रोका संकलन मौन रहता है, उसी तरह मेरी बोलनेकी कामनाएँ भी मूक है।

हुस्ने-खुदबींको हुआ और सिवा नाज़े-हिजाब।
शौक जब हदसे बढ़ा, चश्मे-तमाशाईका॥

[प्रेमीका जितना उत्साह देखने (चश्मे-तमाशाई)का बढता गया, उतना ही अधिक अभिमानी सौन्दर्य (हुस्ने-खुदबी)को अपने छिपनेपर घमण्ड (हिजाबे-नाज़) होता गया।]

भाव यह है, कि ख़ुदाको जितना अधिक देखने-जाननेका प्रयास किया जाता है, वह उतना ही अगम, अगोचर होता जाता है।

कहनेको चारों शेअर दिलने अपने महबूब ख़ुदाकी शानमे कहे है। मगर दिलके तगज्जुलका कमाल देखिए कि पढ़ने-सुननेवालेको अपनी दुनिया-के परी-पैकरका तसव्वुर होने लगता है।

दिलका हबीब खुदा है। इस रगके सात शेअ्र और मुलाहिज़ा हों—

मुझको यह देखना था जो होते वोह बे-हिजाब।
किस वहममें है काफ़िरो-दींदार, देखकर॥

वह ख़िलवत नशीं है, हक़ीक़त यही है।
तआरुफ़ क़दीमी, मगर ग़ाएबाना॥

पर्दा उठाके आयें, जिस शानसे भी आयें।
झगड़ा मगर मिटादें वह शेख़ो-बरहमनका॥

जानिबे-दैरो-हरम कान लगे रहते है।
काश, पर्दे ही-से सुनते तेरी आवाज कहीं॥

उठ गया पर्द-ए-हाइल फ़क़त इतना है ख़याल।
क्या कहें जलवागहे-नाज़में फिर क्या देखा?
अल्लाह-अल्लाह यह अजब शाने-ख़ुदआराई है।
हमने जिस गुलपै नज़र की तेरा जलवा देखा॥

वह कौन? जलवानुमा जो हिजाबे-नाज़में था।
तड़प रही है मेरी हर नज़र उसीके लिए॥

चाहतकी पवित्रता

उधरसे आने वालो, मैं भी मुश्ताके-ज़ियारत हूँ।
ज़रा तुम पाए-ख़ाकआलूद आँखोंसे लगा देना॥

[प्यारेके निवास स्थानकी तरफसे आनेवाले सौभाग्य-शीलो ! अपनी चरण-धूल मेरी आँखोमे आँज दो, ताकि मेरी आँखे भी वह मार्ग देख सके। मै भी अपने प्यारेके दर्शनोको जाना चाहता (मुश्ताके-जियारत) हूँ।]

इस शेअ्‌रके कई आशय निकलते है। एक तो यह कि प्यारेके धामसे आनेवालोके चरणोमे आँखे बिछाकर अपनी श्रद्धा और चाहतकी साध पूरी की जाय। दूसरे यह कि उस ओरसे आनेवाले यात्रियोंके पाँवकी धूल भी इतनी अक्सीर हो जाती है कि आँखोमे अजनकी तरह आँजनेसे घर बैठे प्यारेकी झलक दिखाई देने लगती है। तीसरे यह कि वहाँकी केवल धूल आँखोसे लगा लेना वहाँकी यात्राके समान ही महत्त्व रखती है।

इस तीसरे आशयका आनन्द उठानेके लिए 'नूह' नारवी साहबका यह सस्मरण पढिए—

"नवाब हामिदअलीखाँ साहबके मुशाइरए-रामपुरमे मुझे एक बार शरीक होनेका इत्तिफाक हुआ। उस वक्त मुशी अमीर-उल्ला साहब 'तस्लीम' जिन्दा थे। खत्मे-मुशाइरेके बाद चूँकि वे पीराना सालीके सबब (वृद्धावस्थाके कारण) शरीके-मुशाइरा न हुए थे। मै उनकी खिदमतमें पहुँचा। वे चारपाईपर आँखे बन्द किये हुए लेटे थे। मै जाकर पाँव दबाने लगा। उन्होने आँखे खोल दी और मेरे हालात पूछने लगे। जब उन्हे यह मालूम हुआ कि मै 'दाग' साहबका शागिंद हूँ तो फर्माया—"तुमने उन्हें देखा भी है या खतो-किताबतके जरिए शागिर्द हुए हो ?"

मैने कहा—"मै बहुत दिनोतक उनकी खिदमतमे रहा हूँ।"

यह सुनकर इर्शाद फ़र्माया कि—"मुझे सहारा देकर बिठा दो।"

मैने सहारा दिया और वह उठकर बैठ गये और कहने लगे—"मेरी उँगलियोको अपनी आँखोंपर रखो।"

मैने उनकी उँगलियाँ अपनी आँखोपर रखी, दो-तीन मिनटके बाद वे अपनी उँगलियोंको मेरी आँखोसे हटाकर चूमने लगे। और फर्माया—

"तुम्हारी इन आँखोने मेरे दोस्तको देखा है। इस वाइससे मैने बोसा लिया।
और यह कह कर आँखोमे आँसू भर लाये।[1]"

चाहतकी पवित्रता और लगन देखिए कि उठते हुए गुबारमे भी अपने प्यारेका तसव्वुर रखते है।

जब कोई-गर्दो-बाद उठा दश्ते-नज्दसे।
उसको निगाहे-कैसने महमिल बना दिया॥

[मजनू (कैस)की तल्लीनता और महवियतका यह आलम है कि जंगल (दश्ते-नज्द)से कोई बगोला (गर्दो-बाद) भी उठता है तो वह समझता है कि लैली अपनी ऊँटनीपर महमिलमे बैठी हुई आ रही है।]

उक्त शेअरका आनन्द वही भुक्त-भोगी उठा सकते है जो अपने प्यारेकी राहमे पलक-पाँवडे बिछाये रहते है। वर्षोसे न कोई पाती मिली है, न सन्देश। फिर भी मन और कान द्वारकी ओर लगे रहते है। और तनिक-सी आहटपर चौक उठते है आनेकी कोई आशा नही रह गई है, फिर भी मेले-तमाशे यहाँ तक कि दुर्घटनाओमे उसीकी सम्भावना बनी रहती है।

इश्के-सादिक और पुख्ता हो तो कतरेमे भी दरिया नज़र आता है। इसी भावको 'दिल' इस तरह व्यक्त करते है—

ऐ कैस! अपने जज़्ब-ए-दिलपर[2] निगाह कर।
सहराका हर गुबार है, महमिल लिये हुए[3]॥

प्रेमीकी अभिलाषा

सच्चे प्रेमीकी केवल यही साध होती है—

---

[1]निगार जनवरी-फरवरी १९५३ई० पृ० ३४।
[2]हृदय प्रेमसे कितना ओत-प्रोत है, यह देख!
[3]जगलका प्रत्येक कण लैलीकी झलक लिये हुए है।

जो दलीले-मंज़िले-इश्क हो, उसी रहनुमाकी तलाश है।
मुझे और कोई तलब नहीं, तेरे नक़्शे-पा की तलाश है॥

[जो प्रेम-मार्गसे भिज्ञ (दलीले-मजिले-इश्क) हो, ऐसे पथ-प्रदर्शककी खोज है। तेरे चरण-चिह्न (नक़्शे-पा)के अतिरिक्त मुझे और कोई अभिलाषा (तलव) नही है।]

'दिल'के इश्ककी पाकीज़गी देखिए कि वे न अपने हवीवका वस्ल चाहते है, न उससे बोसेकी तलव रखते है। वे सिर्फ तलव हवीवके 'नक़्शे-पा' की रखते है।

जहाँ अन्य शाइरोने वस्लो-बोसेकी तमन्ना और कोशिशोंमे दीवान-के-दीवान रँग डाले है। वहाँ 'दिल'के यहाँ समूचे दीवानमे 'वस्ल' और 'रकीब' शब्द खोजनेपर भी न मिलेगे। उन्होने अपने कलामको इन शब्दोसे अछूता रखा है। इस सम्बन्धमे आप स्वय लिखते है—

"बअज़ अहले नजरने ब-ज़रिए-तहरीर मुझसे सवाल किया कि 'लफ़्ज़ वस्ल' जो तमन्नाए-इश्क और तकाज़ाए-दिले-पुर-आर्ज़ू है। इस पुर कैफ़ और जज्बाती लफ्जको क्यो तर्क कर दिया गया? जवावन अर्ज़ कर चुका हूँ कि मै हमेशा महज़ूर रहा। बई वजह मैने इस लफ़्जको इस्तेअमाल करना मुबनी बर तसन्नोअ समझा। मेरे लव आरिज़े-महबूब तक कभी नही पहुँचे। जज्बात आस्ताँ-बोसी तक महदूद है। मेरे मजमूअए-कलाममे लफ़्ज़ 'रकीव' भी नज़र न आयेगा। मेरा महबूव सिर्फ मेरा महबूव है। हुस्ने-मअसूम खिलवत पसन्द है। जलवा सरेवाम नही।"[1]

[भावार्थ—कुछ महानुभावोके यह मालूम करनेपर कि—मैने 'वस्ल'-जैसे शब्दका प्रयोग क्यों नही किया? क्योकि शाइरीमे इश्कका दारोमदार ही वस्ल है। इश्कका मशा ही वस्ल होता है। शाइरीमे वस्ल ही तो प्राण फूँकनेवाला आनन्द दायक और महत्त्वपूर्ण शब्द है। उत्तरमे

[1]तरानये-दिल पृ० १२।

मैंने निवेदन किया कि मैं सदैव वियोगी रहा हूँ। फिर भी वस्ल शब्दका प्रयोग करता तो कलाममे कृत्रिमता आ जाती जो शाइरीके लिए उचित नही। मेरे ओठ प्यारेके कपोलो तक कभी नही पहुँचे। मेरे प्रेमकी उमगे प्यारेकी चौखटपर चुम्बन देनेतक सीमित रही। मेरे यहाँ 'रकीब' शब्द भी नही है, क्योकि मेरी प्रियतमा केवल मेरी प्रियतमा है। अत. मेरा कोई रकीब और उदू नही।]

प्रेममें तल्लीनता—

नज़र आते है वोह हर वक़्त आगोशे-तसव्वुरमें[1]।
हमारे दिलमें रहकर हमसे पर्दा हो नही सकता॥

उन्हींका जलवए-रअ़ना[2] है मंज़ूरे-नज़र[3] ऐ 'दिल'!
कोई उनके सिवा दिलकी तमन्ना हो नहीं सकता॥

दरियाए-मुहब्बतमें पहुँचाये ख़ुदा तह तक।
डूबेगी जहाँ किश्ती अपना वही साहिल है॥

किसीकी जुस्तुजूमें[4] इक मुकाम ऐसा भी आता है।
जहाँ मंज़िल तो क्या अपना निशाँ ऐ 'दिल' नहीं मिलता॥

तलाशे-दोस्त कुजा, आर्ज़ूए-दीद कुजा।
हमें तो उम्र हुई अपनी आर्ज़ू करते॥

गुम हूँ इस बेख़ुदीकी[5] मंज़िलमे।
रहनुमा[6] है न कोई महरमे-राज़[7]॥

इन हदोंसे गुज़र चुका है दिल।
अब नही शिकवए-नशेबो-फराज़[8]॥

---

[1]चिन्तन, ध्यानमे; [2]कमनीयरूप; [3]आँखोकी स्वीकृति; [4]खोजमे; [5]आत्म-लीनताकी स्थितिमे; [6]मार्ग-दर्शक; [7]भेदोसे परिचित, [8]पतन और उत्थानकी शिकायत।

जिन्दाँकी[1] क़ैद झेली, सहराकी[2] खाक छानी।
गुज़रा हूँ उन हदोंसे, क्या जाने अब कहाँ हूँ?

खुदी मिटे तो खुदा मिले—

मुद्दआ बर आयेगा, जब खाक हो जायेंगे हम।
इसका यह मतलब कि गुम होकर उन्हें पायेंगे हम॥

इन्तहाये-जुस्तजूमें खो गये होशो-हवास।
पूछते हैं राह हर गुम करदए-मंज़िलसे[3] हम॥

और अन्तमे प्रेमीकी वह स्थिति हो जाती है कि वह अपने प्यारेकी राहमे भटकता फिरे, स्वय उसका प्यारा उसके समीप आ जाता है। भिलनीकी झोपडीमे जब 'राम' पहुँच सकते है, तब आस्तानए-यारके खिच आनेकी आशा 'दिल' क्यों न करे?

मुहब्बतके जज्बात समझूँ मुकम्मिल।
खिच आये जबीं तक तेरा आस्ताना॥

और जब जज्बए-इश्ककी बदौलत आस्ताना नसीब हुआ तो फर्ते-मसर्रतसे—

सर अपना है, किसीके आस्ताँ पर।
जबीने-इज्ज़ पहुँची आस्माँ पर॥

[प्यारेके आस्ताँपर नत मस्तक होते हुए प्रतीत हो रहा था कि हमारा मस्तक आस्मानकी सरहदोको छू रहा है। ज़र्र-ए-नाचीज़ आफ़ताब बन रहा है।]

जब प्रेमीके द्वारे तक प्यारा चला आया, तब दुईभाव और पर्देका काम क्या?

---

[1]जेलखानेकी; [2]जगलकी; [3]मार्ग भटके हुए से।

उठ गया पर्दए-हाइल फ़क़त इतना है ख़याल।
क्या कहें जलवा-गहे-नाज़में फिर क्या देखा॥

[पर्दा उठा, फ़कत इतना खयाल (होश) है। उसकें जलवेमे क्या देखा ? कैसे कहे, क्योकर कहे ?]

हम क्या बतायें क्या थी, तेरी निगहकी गर्दिश।
इक वज्दकी-सी हालत पहरों रही हमारी॥

हज़रते-'दिल' बताये भी तो नही बता सकते। गुडका स्वाद गूँगा कैसे बताये ? जल्वेके अनुरूप वाणी कहाँसे लाये ? और वाणी हो भी तो वह मुखरित कैसे हो ? उसने तो कुछ देखा नही और जिन नेत्रोने देखा वे वाक्-शक्ति कहाँसे लाये ?

एक बार जलवा देखनेपर प्रेमीकी यही इच्छा रहती है, कि जलवा बार-बार देखे। उसका प्यारा उसके सम्मुख सदैव रहे, उसे वह एक टक निहारा करे—

हर दम है उसी महवे-तगाफ़ुलका तसव्वुर।
इश्क और किसी कामके क़ाबिल नहीं रखता॥

इश्क खुद बहुत बड़ा काम है। हर वक़्त उसीमे महव रहना होता है।[१] प्यारेके चिन्तनके अतिरिक्त और भी कुछ करने योग्य है, यह प्रेमीको सुध ही कब आती है और यही सुध-बुध अन्तमे वह स्थिति ला देती है कि प्यारा पासमे न होते हुए भी यही आभास होता ह कि वह समीप बैठा हुआ है—

वहम बातिल था, मगर वह मंज़रे-ऐशो-निशात।
पहलु-ए-आशिकमें हँगामे-सहर कोई न था॥

---

[१] "आठ पहर भीनो रहे प्रेम कहावे सोय" —कबीर

किन्तु यह तल्लीनता स्थायी नही होती, टूटती है, तो प्रतीत होता है कि यह सब स्वप्न था। काश यह तल्लीनता कभी भग न होती और अपने प्यारेको यूँ ही अपलक निहारते रहते।

कृष्ण द्वारिका चले गये है। राधा उनके वियोगमें सुध-बुध बिसार बैठी है। बुधजनोकी सम्मति है कि वह बावरी हो गई है। वही बावरी जब पानी भरने कालिन्दी-किनारे जाती है, तो प्रतीत होता है कि छोटा-सा छौना गेन्दबल्ला खेल रहा है। पकडनेको दौड़ती है, तो पेड़से टकराकर गिर जाती है। सुप्तावस्थामे आभास होता है कि वही छौना गोदमें लिटाये माथा सहला रहा है, परन्तु हायरे दुर्भाग्य वह इस आनन्दको तनिक भी सहेजकर नही रख पाती। चेतना आते ही इस भावनासे उठ बैठती है कि पूछूं "निर्मोही कहाँ चला गया था ?"

आँखे फाडकर देखती है और फिर बन्दकर लेती है कि अच्छा छलिया बन्द आँखोमे ही रह। तुझ नटखटको अब भागने न दूंगी।

परन्तु राधाकी यह साध पूरी नही हो पाती। कभी माखन-मिसरी खाते देख़ती है, कभी गौ-चराते देखती है, कभी बाँसरी बजाते देखती है, कभी अपने शरीरमे लीला गोदते देखती है, कभी रासलीला करते देखती है! देखती है और क्षण भरमे ठगी-सी रह जाती है।

द्वारिकामे सत्यभामाको अनुभव होता है कि कृष्ण उस, रातको उसीके महलमे रहे, किन्तु रुक्मणीका दावा है कि कृष्ण उस रातको उसके महलमे रहे। लेकिन कृष्ण न यहाँ रहे, न वहाँ रहे। यह सब प्रेम-विभोर होनेकी अनुभूतियाँ है।

इश्कके ऐसे ही शदीद आलममे हज़रते-'दिल'को यूँ महसूस होता है, कि उनका माशूक रातको उनके साथ है, और किसी वजहसे उठकर जाना चाहता है। तभी वे बेचैन होकर कह उठते है—

यह भीगी रात, यह ठंडा समाँ, यह कैफ़े-बहार!
यह कोई वक़्त है, पहलूसे उठके जानेका?

हज़रते-'दिल'का शाइराना कमाल देखिए कि उक्त शेरमे न तो वस्ल और बोसो-कनारके अल्फ़ाज आये है, न कही छेड़-छाड़ है, न कोई पोशीदा-राज़की तरफ़ इशारा किया है। फिर भी शेर मुँह बोलती तसवीर बन गया है। पढ़ते हुए महसूस होता है, मसूरीमे शान्दार कोठीमे ठहरे हुए है। और माशूक़ पहलूमे है। धीमी-धीमी फुहारे गिर रही है, चाँन्दनी खिली हुई है और रेशमी रजाईमे लिपटे पड़े है। अचानक माशूक उठकर जानेका खयाल ज़ाहिर करता है तो उसके इस भोलेपनपर अनायास मुँहसे निकल पड़ता है—

'यह कोई वक़्त है, पहलूसे उठके जानेका'?

बक़ौल नियाज़ फ़तहपुरी—"महबूबसे जिस अन्दाज़मे खिताब करके महाकातो-मौसीकियत (हृदयके भाव और सगीत)को मिला दिया गया है। वह किसी मामूली शाइरके बसकी बात नही ··· मै तो इसे पढनेके बाद आजकल (मई)की दोपहरकी गर्मीमे भी ख़ास किस्मकी खुन्की महसूस करने लगता हूँ।"[१]

'नियाज़' फ़तहपुरी-जैसे ७० वर्षीय वयोवृद्ध, जिनकी सुरुचिपूर्ण परख इतनी नपी तुली कि ब-मुश्किल जिन्हे कोई शेअर पसन्द आता है। वे भी ज्येष्ठकी आग उगलती दोपहरीमे शेअर पढते हुए खुन्की महसूस करे। इससे बढ़कर 'दिल'की मुसव्विरीकी सफलता और क्या हो सकती है?

मै तो उक्त शेअर पढ़कर आश्चर्य चकित रह गया कि 'दिल' जैसा गम्भीर, सकोची, शील स्वभावी व्यक्ति ऐसा रगीन एव रोमाँचकारी शेअर कैसे कह सका। ऐसे शेअर तो बगैर ससारी और वास्तविक अनुभवके कहना सम्भव नही। इतना गहरा और पूर्ण चिन्तन कि ध्यानावस्थामे

---

[१]तरानए-दिल पृष्ठ ४२।

प्यारेसे इस तरह महवे-गुफ्तगू हो जाये कि वास्तविक स्थितिका ज्ञान तक न रहे, सरल नही।

२-३ माहके वाद सहसा प्रतीत हुआ कि ऐसा शेअर 'दिल' जैसा शर्मीला और रिज़र्व किस्मका व्यक्ति ही कह सकता था। मेरा तो विश्वास है, कि उक्त शेअर चिन्तनसे नही स्वानुभवसे कहा गया है।

उक्त शेअर दिलने १९०५ ई० पूर्व आलमे-शवावमे कहा है। १९ वीं सदीका, अवसे ६५-७० वर्ष पूर्व उस युगका तसव्वुर कीजिए। पत्नी वुढापेकी तरफ कदम वढाये जा रही है। मगर अपनेसे वड़े जन—(सास-ससुर, जेठ-जिठानी, ननद-फूफस)के सामने न पतिसे वोल सकती थी, न मुँह खोल सकती थी, न अपने वच्चोको दुलार सकती थी। वच्चोंके लिए भूलसे वेटा-वेटी सम्वोधन निकल जाता तो वड़े-वूढे व्यग्य कसने लगते थे। न आजकी तरह पृथक-पृथक शयनागार थे, न यह आजकी दीदा-दिलेरी थी कि सवके सामने अपने वेड रूममे घुस गये। न जाने किन-किन उपायोसे पति-पत्नी क्षणिक समयके लिए रातके आवे-पिछले पहर एकान्त-मिलन पाते थे।

सास-ननदके उठनेसे पूर्व ही वहूको उठकर चक्की पीसना, दूध विलोना पड़ता था। अव इस स्थितिमे पत्नीका भोर होनेसे पूर्व उठकर जाना भी जरूरी और अनेक प्रयासोके वाद मिले सुनहरे अवसरको इतने शीघ्र विलीन होते देख 'दिल'का झुँझलाकर यह कहना भी लाज़िमी—

'यह कोई वक़्त है, पहलूसे उठके जानेका'?

मजाज़ी इश्क़

दिलके कलाममे मजाज़ी और हकीकी दोनो इश्कोकी झलकियाँ मिलेगी। इन्सानी परी-पैकरसे इश्क हुए वगैर हकीकी इश्क़का वास्तविक अनुभव हो नही सकता। वामे-इश्के-हकीकी तक पहुँचनेके लिए इश्के-

मजाजीके जीनेसे चढ़ना लाज़िमी है। चन्द इश्के-मजाज़ीके शेअ़र मुलाहिज़ा हों—

जिस जगह आँखें लड़ी थीं, है वोह मंजर सामने।
जिस जगह होश उड़ गये थे, वह ठिकाना याद है॥

जिस जगह दिल हो गया था, बिस्मिले-तीरे-नजर।
वोह जगह, वोह वक़्त, अब तक वोह ज़माना याद है॥

वह तलत्तुफ़ और वह उसका तलव्वुन हाय-हाय।
वोह निगाहें मिलते ही आँखें चुराना याद है॥

तीरे-नज़र—

कोई समझे तो क्या समझे ख़दंगे-नाज़का ईमाँ[1]।
यह चुभ जाता है जब दिलमें खटकता है, रगे-जाँमें॥

क्या पूछते हो शोख़ निगाहोंका माजरा।
दो तीर थे जो मेरे जिगरमें उतर गये॥

याद है, हाँ याद है, तर्ज़े निगाहे-मस्ते-यार।
एक ताज़ा पंखड़ीसे पारा-पारा दिल हुआ॥

अन्दाज़ चश्मे-ताब शिकन था कि अल्अमाँ।
इक पंखड़ीकी चोटसे दिल चूर हो गया॥

निगाहे-मस्तसे ओ मुड़के देखने वाले।
तुझे तो है, मुझे अपनी ख़बर नहीं, न सही॥

कुछ ख़बर हमको नहीं, कौन था वोह हज़रते-'दिल'!
चल दिया दिल अभी सीनेमें मसल कर कोई॥

---

[1] माशूकके छोटे तीरका कमाल।

प्रेयसीका व्यक्तित्व—

इक ज़ख्मे-खूं चिकांपे छिड़कना है, मुद्दआ।
हमको तो ख़ाके-कूचए-दिल्दार चाहिए॥
शायाने-संगे-दर नहीं, मेरा सरे-नियाज़।
आशुफ़्ता दिलको सायए-दीवार चाहिए॥

आँसूकी क्या बिसात? परन्तु वही प्रियतमाके दामनसे छू जाने पर—

पहुँचकर उनके दामन तक यह है, हर अश्कका आलम।
जिसे क़तरा समझते थे, उसे दरिया समझते हैं॥

प्रेयसीकी चाल—

'दिल'की प्रेयसी चलती है, तो लोगोंके कलेजे मसोसती हुई नही चलती, अपितु—

तुम तो सकूने-ख़ातिरे-नाशाद बन गये।
समझा था मैं कुछ और यह रफ़्तार देखकर॥

प्रेयसीका रूप—

महवे-बेख़ुद हूँ बहारे-रुए-ज़ेबा देखकर।
बाग़े-आलममें कहाँ पैदा है, उस गुलका जवाब॥

अल्लाह उनको अबरुए-ख़मदारपर यह नाज़।
तअ़्ने हिलालपर है, तो फ़िक़रे कमानपर॥

कब तक छुपाओगे रुख़े-ज़ेबा नक़ाबमें?
बर्क़े-जमाल रह नहीं सकता हिजाबमें॥

ऐ दिल! यह शाने-जल्वा-नुमाई तो देखना।
वोह बर्क़की तरह इधर आये उधर गये॥

सरे तूर एक बर्क़े-हुस्न लहराती नजर आई।
ज़रा शोख़ीसे झटका था किसीने अपने दामाँको॥

शर्मीली प्रेयसी—

क्या क़यामत था सवाले-दीदपर उनका जवाब—
"हश्रमें हमसे वहाँ कहना जहाँ कोई न हो"॥

विरह—

किसीकी याद थी आँखोंसे अश्क ढलते थे।
इसी ख़यालमें हम करवटें बदलते थे॥

वक़्ते-रुख़सत तसल्लियाँ देकर।
और भी तुमने बेक़रार किया॥

रोज़ आ-आकर तसल्ली दिलको दे जाता है कौन?
कुछ समझ ही में नहीं आता कि समझाता है कौन?

यासो-हिरास—

दिल निराशामे अधीर न होकर निराकुलता अनुभव करते है—

हक़ीक़तमे वही साअ़त[1] सकूने-दिलकी[2] साअ़त थी।
मेरी बालींपै[3] जब मायूसे-कोशिश[4] चारागर[5] होता॥

---

[1]घड़ी, वक़्त; [2]दिलके चैनकी; [3]सिराहने; [4]असफल; [5]वैद्य, हकीम;

शिकवा-शिकायत--

'दिल' आहो-नाले, शिकवा, शिकायतके क़ायल नहीं--

ता-ब-लब[1] शिकवे न आये थे कि ख़ुद हूँ मुनफ़इल[2]।
हुस्नकी मअसूम फ़ितरतको[3] पशेमाँ[4] देखकर॥

लरज़ उठता हूँ अब तक, जब वोह शिकवे याद आते हैं।
असर था किस क़यामतका तेरी चश्मे-पशेमाँमें[5]॥

ज़ब्तसे काम लीजिए, आहो-फ़ुग़ाँ न कीजिए।
नश्तरे-इश्ककी ख़लिश दिलमें रहे तो राज़ है॥

इख़फ़ाए-ख़लिश[6] दुश्वार बहुत, इज़हारे-ख़लिश[7] मुम्किन ही नहीं।
चुप रहनेमें दम घुटता है, कहता हूँ तो जी घबराता है॥

प्रेयसीकी दिलशिकनी न होने पावे--

उसे क़लक़ है, मेरा हाले-ज़ार सुन-सुन कर।
यह वक़्त था कोई तद्बीर चाराज़ू करते॥

जौरो-जफ़ाए-दोस्तका शिकवा न कीजिए।
इश्के-वफ़ा सरिश्तको रुसवा न कीजिए॥
मिट जाइए मगर कोई शिकवा न कीजिए।
घबराके राज़े-इश्कको रुसवा न कीजिए॥

आह सीनेमें घुटे उफ़ न ज़बाँसे निकले।
दर्द इस हदसे गुज़र जाय तो रुसवाई[8] है॥

---

[1]ओठोंतक; [2]लज्जित; [3]प्रेयसीके भोले स्वभावको; [4]शर्मसार; [5]शर्मसे झुकी हुई नज़रोंमे; [6]प्रेमकी फाँसको छिपाये रखना; [7]चुभनको प्रकट करना; [8]बदनामी।

हयाते-इश्क़[1] है, ऐ हमनशीं[2] खामोश जल जाना।
मिसाले-शमअ़ बज़्मे-दहरमें[3] तू हमको जलने दे॥

हुज़ूरे-दोस्त[4] शिकवाका तो क्या ज़िक्र।
गिराँ[5] है मुद्दआए-दिल[6] ज़बाँपर॥

निगाहे-शौक़ रही हम ज़बाने-दिल लेकिन—
किसी तरह न बना शरहे-आर्ज़ू करते॥

दिया था इश्क़ तो हिम्मत भी यह खुदा देता।
कि एक वक़्तमें हम तर्के-आर्ज़ू करते॥

चारासाज़—

क्या जाने क्या ख़यालसे छोड़ा ब-हाले-जार।
मुझपर बड़ा करम है, मेरे चारासाजका॥

दर हक़ीक़त जो अमानत है, निगाहे-नाज़की।
चाराफ़र्मा ! वोह ख़लिश क्योंकर निकालें दिलसे हम ?

दिलसोज़ अगर बनो तो दिखाये जिगरके दाग़।
तुम चारासाज़ हो तो, कहें माजराए-दिल॥

अल्लाह-अल्लाह ज़ेरेसर है बालशे-ज़ानूए-दोस्त।
होशमें आ चारागर ! अब होशमें आयेंगे हम ?

इस मर्ज़से कोई बचा भी है ?
चारागर इश्क़की दवा भी है ?

---

[1]प्रेम-जीवन; [2]साथी; [3]संसार रूपी महफिलमें; [4]प्यारेके समक्ष; [5]कठिन; [6]दिली इच्छा।

परम्परागत—

परम्पराके अनुसार 'दिल'के यहाँ कहीं-कहीं ऐसे शेअर भी नज़र आ जाते हैं—

हमने वह सब सुना जो सुना था न आज तक।
तुमने वह सब कहा जो कुछ आया ज़बान पर॥

क्या लुत्फ आगया तेरे अन्दाज़े-जौरमें।
मुझपर उसी तरह सरे-महफ़िल अ़ताब हो॥

ईमाँ है, यह उस शोख़की शमशीरे-अदाका।
जो सामने आजाय वोह सर अपना झुकाले॥

तेरी निगाह न थी शोख़ियोंसे जब आगाह।
यह जाँ निसार है, बिस्मिल है, उसी ज़मानेका॥

काश, हो वक़्ते-नज़र दोनोंको हैरत एक-सी।
हम उन्हें देखें वोह जब देखें सँवरकर आईना॥

हुस्नमें कुछ शोख़ियाँ आनेको हैं।
अब हयाकी पासबानी जायगी॥

पर्दा उठा दिया यह अजब उसने चाल की।
देखा तो हममें ताब न थी अर्ज़े-हालकी॥

शैख़, वाइज़, नासेह, ज़ाहिद—

परम्परानुसार 'दिल' ने भी शेख़, वाइज, नासेह और ज़ाहिदका ज़िक्रे-ख़ैर किया है। लेकिन न आप उनकी पगडी उछालते है, न चुँदियापर धौल जडते है, न मुँहपर शराबकी कुल्ली करते है, न मुँह चिढाते है, न उनकी शक्लो-शबाहतको हैवान-जैसी बनाते है, न उन्हे पाखण्डी-ढोंगी कहते है,

न उन्हे रूए-स्याह समझते हैं, और न उन्हे मनहूस समझकर नाक-भौं सिकोडते हैं, अपितु उन्हे रिन्दोमे बैठे देखकर खिल उठते हैं और उनकी उपस्थितिके कारण मदिरालयको खुल्द (जन्नत) समझते हैं—

तसवीरे-ख़ुल्द खिच गई साक़ीकी बज़्ममें।
ज़ाहिद-से पाकबाज़को सरशार देखकर॥

नासेहको सबसे बडा रोग नसीहत करनेका होता है। हजरत न मौका-महल देखते हैं, न किसीके व्यक्तित्वका ध्यान रखते हैं। मौके-ब-मौके नसीहत झाडने लगते हैं। उन्हे यह भी खयाल नही रहता कि जिनको हम नसीहत फर्मा रहे हैं, वह इज्जत, मर्तबे, अक्लो-शऊरमे अपनेसे कितने बुलन्द हैं ? अगर यह लिहाज़ रहे तो फिर उन्हे नासेह कौन कहे ?

हमारे देशमे नासेहो और सलाह देनेवालोकी कमी नही। चप्पे-चप्पेपर इनका अस्तित्व मिलता है। जनमके रोगी अनुभूत लटके नामी डाक्टरो-वैद्योको बताते हुए, मजनूं शक्लो-शबाहतके हजरात ताकतके गुरू पहलवानोको समझाते हुए, अनाडी खिलाड़ियोको दाँव-पेच बताते हुए और फटेहाल ज्योतिषी धनिकोको धनोपार्जनके मत्र बताते हुए सर्वत्र दृष्टिगोचर होते हैं। दूसरोसे अखबार पढवाकर सुननेवाले भी अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिपर अपना मत ही व्यक्त नही करते, सार्वजनिक स्थानोपर देशके नेताओकी आलोचनाये भी करते हैं। ऐसे ही अनाधिकारी नासेहोसे तग आकर ख्वाजा 'दर्द'ने सम्भवत यह शेअर कहा होगा—

तरदामनीपै शेख़ हमारी न जाइयो।
दामन निचोड़ दे तो फ़रिश्ते वज़ू करें॥

इस मजमूनपर अभीतक इससे बेहतर शेअर मेरे देखनेमे नही आया था। मगर देखिए, 'दिल'ने इसी भावको कितने नम्र शब्दोमे अछूते ढगसे व्यक्त किया है—

कभी तो ग़ौरकर आशुफ़्तगी-ए-दिलपै ऐ नासेह !
नज़र आती है, इक दुनिया मेरे चाके-गरेवाँमें ॥

[हजरते-नासेह ! आप जो मुझे वक़्त-बेवक्त नसीहत फर्माते रहते हैं। मैं चुपचाप सुनता रहता हूँ। मैंने कभी आपकी दिलशिकनी नही की। लेकिन आपने मेरी कभी वास्तविक स्थिति जाननेका प्रयास नही किया। यदि आपने मेरे द्रवित हृदयकी ओर ध्यान दिया होता तो मेरे फटे हुए वस्त्रो (चाके-गरेवाँ)मे एक आलम नजर आता।]

फटे हुए वस्त्रोमे कैसे-कैसे लाल छिपे होते है, इसे नासेहकी नज़र नही देख पाती। स्वर्गीय योगि-राज अरविन्द घोषको अलीपुर षडयन्त्र केसके सम्बन्धमे (सम्भवत. इ० स० १९११-१२ के लगभग) जब पुलिस तलाशी लेने आई, तो उनके कमरेमे चटाई बिछी देखकर पुलिस अधिकारी-को यह विश्वास ही नही हुआ कि पलगके होते हुए कोई चटाईपर भी सो सकता है। चारो ओर वैभवसे घिरा होनेपर भी कोई अपरिग्रह-वृत्त पालन कर सकता है? ऐसे ही फटेहाल चाक गरेवानोके लिए, सर इकबालने कितनी श्रद्धापूर्ण बात कही है—

न पूछ इन ख़िरकापोशोंकी इरादत हो तो देख इनको।
यदे-बैज़ा लिये बैठे है, अपनी आस्तीनोंमें ॥

[इन भिक्षुकसे दीखनेवाले फटे हाल व्यक्तियोकी कुछ न पूछिए। बहुत पहुँचे हुए लोग है। यदि जाननेकी अभिलाषा है तो इन्हे श्रद्धापूर्वक समीपसे देखिए। तब कही मालूम होगा कि इनमे कैसे-कैसे चमत्कार छिपे हुए है।]

दूसरोकी वास्तविक स्थिति न देख सके तो न सही, परन्तु नासेहको कुछ तो बुद्धि और ग़ौरसे काम लेना चाहिए। मगर यह दोनों चीज उसके पास है कहाँ ? उसकी इसी कोताहीसे खीजकर किसीने क्या खूब कहा है—

मस्जिदमें बुलाता है, मुझे नासेहे-नाफ़हम।
होता अगर कुछ होश तो मैख़ाने न जाते॥

अज्ञानताकी हद हो गई न ? नासेहको इतनी भी समझ नही कि बेहोश आदमी चल-फिर नही सकता। तभी तो मस्जिदमे बुला रहा है। ऐसे मूर्ख (नाफहम)से क्या कहा जाय ?

इसी भावको 'दिल' कितने सुबुक अन्दाजमे पेश करते हैं—

गुज़रा है, इश्क़ अपना इदराककी हदोंसे।
अब भी जनाब नासेह समझा-बुझा रहे हैं॥

अपने प्यारेकी चाहतमे प्रेमी सुध-बुध बिसार बैठा है, प्यारेकी ध्वनि-के अतिरिक्त उसे कुछ सुनाई नही दे रहा है। फिर भी हजरते-नासेह समझा-बुझा रहे हैं। इसी रगका एक शेअर और देखिए——

नहीं इम्तियाज़ नासेह! तेरी पन्दे-बरमहलका।
यह मुक़ामे-बेख़ुदी है मुझे छोड़दे यहाँसे॥

[हजरते नासेह ! मै इस स्थितिमे नही कि आपके समयोचित उप-देशको समझ सकूँ। मै इस समय बेख़ुदीके आलममे (आत्म-लीन) हूँ, मुझे एकान्तकी आवश्यकता है।]

और नासेहकी बाते सुनी भी क्या जाये ? कुछ समझमे आये तो यह मुसीबत भी झेली जाय।

न समझे आजतक हम पन्दे-नासेह।
यह आख़िर किस ज़बाँकी दास्ताँ है?

इस शेअरका पूरा लुत्फ उठाना है, तो उर्दूके प्रसिद्ध साहित्य-सेवी और शाइर प० हरिश्चन्द 'अख़्तर'का वह लतीफ़ा सुनिए जो आपने ३० दिसम्बर १९५६ को हजरत जगन्नाथ साहब आजादके दरे-दौलत-

पर सुनाया था और मेरे निवेदनपर अपने दस्ते-मुबारकसे मुझे लिख भी दिया था—

"एक छोटे-से गाँवमे दूसरे गाँवसे भगिन आई तो मौलवी साहबने पूछा—"अरी ओ हलालखोरी! अरी ओ हलालखोरी!! तुम्हारे कुरयहमे भी तकातुरे-बाराने-रहमत हुआ है?"

भगिन सुनकर बोली—"मौलवी साहब हम कुछ नही समझे, इन्सानोकी तरह बात कीजिए।"

मौलवी—'तू तफहीम करे या न करे, तुझ जर्रए बेमिकदारकी खातिर हम अपना शिआरे-तकल्लुम तो मुनकलिब करनेसे रहे।"

भला बताइए कोई समझे तो क्या समझे। दिल-जैसे सजीदा शाइरका भी जी चाहता है कि इन्सानी लबो-लहजेमे बात न करनेवाले नासेहको तफरीहन थोडी देरके लिए बनाया जाय। मगर बनाये भी तो किस बिरते पर? जिन इश्कके नतीजोकी तरफ नासेह इशारे कर रहा है, हकीकतमे उनका अन्देशा खुद दिलको भी न होता और अपने प्यारेकी तरफसे भी इश्ककी पुख्तगीका सबूत मिला होता तो निसकोच नासेहको झुटलाया और बनाया जा सकता था, मगर हायरी इश्ककी मजबूरियाँ—

मआले-इश्क पै 'दिल' मुत्मइन अगर होता।
तो छेड़के नासेहसे गुफ़्तगू करते॥

इश्ककी मजबूरियाँ और पासे-अदबकी वजहसे दिल भले ही नासेहके मुँहपर कुछ न कहे, मगर दिलमे यह जरूर महसूस करते है—

यह झक, यह बड़, कहीं जोहोश इंसानोमें होती है?
वही है बात नासेहमें, जो दीवानोमें होती है॥

स्वानुभव किये बिना ही जो मनमे आये, भाषणोमे अनर्गल प्रलाप करना, व्याख्यान-दाताओ (वाइजो)का अदना करिश्मा है। यदि उन्हे

तनिक भी अनुभूति हुई होती तो जन-साधारणका कितना अधिक मगल हुआ होता--

पये-जोशे-बयाँ दो घूँट पी लेते तो लुत्फ़ आता।
वह शै ऐ हज़रते-वाइज़ जो मैख़ानोंमें होती है॥

रिन्दोकी जिन्दादिली और मौज-मस्ती देखकर वाइज अपना अपमान (तहकीर) समझ रहे है। उनके नाकिस ख़यालमे रिन्द उन्हीको चिढानेके लिए सरमस्ती कर रहे है। इस गलत फहमीको दूर करनेके लिए 'दिल' फ़र्माते है—

नहीं मक़सूद रिन्दोंको तेरी तहक़ीर ऐ वाइज़!
यही तफ़रीह बाहम रोज मैख़ानेमें होती है॥

जो अपनी आँखका फूला न देखकर दूसरोकी आँखोमे लगे काजल और सुर्मेके दोष निकालते रहते है। घरोमे छिपी हुई सती नारियोके चरण-दर्शनकी अपेक्षा बाहर बहती हुई नालियोंको निहारते-फिरते है, उन महानुभावोके समक्ष 'दिल' अपने मनोभाव इन मधुर शब्दोमे व्यक्त करते है—

तेरी फ़र्दे-अमल हो पाक इस इसियाँसे ऐ वाइज़!
कोई पीता है, पीने दे, कहीं ढलती है ढलने दे॥

[अपने आचरणकी चादर पापोसे मैली न करके उसे स्वच्छ और पवित्र रख। स्वयको स्वच्छ और पवित्र रख। परकी ओर मत देख।]

मजहबी दीवाने सकीर्ण-हृदय, अनुदार और अन्ध विश्वासी होते है। वे आस्तिक जो ईश्वरको घट-घटवासी और सर्वव्यापक मानते है। अपने -पराये, भले-बुरे, ऊँच-नीच सभीमे उसका दिव्य स्वरूप क्यो नही देख पाते ? अपनी दृष्टि इतनी व्यापक और पवित्र क्यो नही बना पाते

कि जिसमे उसी (ईश्वर)का दिव्यस्वरूप दिखाई दे। वे क्यो अपनी ऐसी बदनज़र रखते है, कि जन्नतपर पड़े तो वह भी दोजख़ हो जाये। इसी ख़यालको रगे-तगज्जुलमे किस सादगीसे पेश किया है—

तेरी इस ज़ेहनियतसे[1], मैकदा[2] बेकैफ़[3] है, जाहिद !
समझता मिशरबे-साक़ी[4] तो फ़िर्दोसे-नज़र[5] होता ॥

यदि दृष्टि व्यापक हो जाय तो फिर मनुष्य उस स्थितिमे पहुँच जाता है, जिसे समदृष्टि या सर्वधर्म समभाव कहा जाता है—

तअय्युनातकी हदसे गुजर चुकी है नजर।
सरे-नियाज़ भी मुहताजे-आस्ताँ न रहा ॥

[मेरी दृष्टि धार्मिक सीमाओको लाँघकर इतनी व्यापक और उदार हो गई है कि अब मै किसी विशेष स्थानपर ही नतमस्तक होने (सज्दा करने)की नीति छोडकर सर्वत्र उसका दिव्य रूप देखता हूँ, और सर्वत्र उसे प्रणाम करता हूँ।]

इसी गजलका दूसरा शेअर है—

जो तहनशीं कोई उभरा तो आने-वाहिदमे।
उठी वह मौज कि साहिल ही का निशाँ न रहा ॥

[जो सम दृष्टि बनकर अपनेमे डूब जाता है, वह कभी उभरता है, तो उसके आत्म-सागरमे ज्ञानकी वह लहरे उठती है, कि थोडा-बहुत पर-द्रव्य जो आत्मासे लगा हुआ था, वह भी विलीन हो जाता है।]

उदार भावनाके दो शेअर और—

---

[1]विचारधारासे; [2]मदिरालय; [3]आनन्द रहित, नीरस; [4]मधुबालाका अन्तरंग, साक़ीकी नजर, [5]जन्नतकी नज़रवाला।

दैरो-कअ़बा, दश्ते-ईमन, हर तअ़य्युन इक हिजाब।
इन हदोंसे जब गुज़रिए, जलवागाहे-आ़म है॥

[मन्दिर, कअ़बा, दश्ते-ईमन कोई भी धार्मिक स्थान हो, यह सब बन्धन और सीमाये ईश्वरीय रूपके देखनेमे बाधक (हिजाब) है। इस सम्प्रदायवादके पर्देसे बाहर निकलिये तो उसका जलवा सुलभ है।]

तअ़य्युन बन्दगी-ए-इश्क़में ऐ दिल नहीं होता।
जिबीं अपनी जिधर झुकती, अदा सज्दा वहीं होता॥

मौनका प्रभाव—

इस व्याख्यानी युगमे जब कि भाषणोंकी महामारी चरम सीमाको पहुँची हुई है, और जनता त्राहि-त्राहि कर रही है। व्याख्यान-दाता नही समझते कि हजारों बकवाससे एक चुप कितनी प्रभावशाली होती है। हिटलरकी सैकड़ो जोशीली स्पीचोसे स्टालिनकी चुप कितनी कारगर होती थी? इसी चुपपर दिलके शेअ़र सुने—

जो हो ना-आश्नाए-राज़े[1] ख़ामोशी वह क्या समझे?
कि है नाक़ाबिले-तशरीह[2] ऐ दिल! दास्ताँ मेरी॥

रूदादे-शबे हिज्र[3] हूँ, गो कुछ नहीं कहता।
इस मंज़िले-ख़ामोशका आ़लम ही जुदा है॥

पेशे-दिलदार रहे, मुहर-ब-लब[4] हज़रते-'दिल'।
कि ख़ामोशीमें भी इक क़ूवते-गोयाई[5] है॥

अंजाम पूछना था, हमें सोज़ो-साज़का।
ऐ अहले-बज़्म शमए-सहर तो ख़मोश है॥

---

[1]चुपके भेदसे अनभिज्ञ; [2]खुलासा करनेकी हालतमे नही; [3]वियोग-रात्रिकी कथा; [4]ओठ सिले हुए; [5]वाणीकी शक्ति।

हमारी किश्तिए-उम्र आह डोलती थी इधर।
उधर नजूमे-फलक डूबते-उछलते थे॥

अब तो हर-हर नफ़्से-सर्द है अफ़सानए-दिल।
शिद्दते-ग़ममें कोई जोशे-तमन्ना देखे॥

शायरी मजबूरियाँ—

खींचती मौजे-हवादिस[1] जब सफ़ीना[2] ले चलीं।
दूर तक देखा किये साहिलको[3] मअ़सूमाना हम॥*

सियह-बख़्ती[4] तो पैवस्ते-जबीं[5] है।
मिटाऊँ दाग़े-नाकामी कहाँ तक?

सुभाषित—

ज़ेबाइशो-ज़ीनतकी[6] हाजत क्या[7], मुल्के-अ़दमके राही[8] को।
शायाने-लहद[9] जो था ऐ 'दिल'! हमराह[10] वही सामान लिया॥

ऐ ज़ौरो-तशद्दुदके ख़ूगर[11]! मज़लूमकी[12] आहोंपर भी नज़र।
इक रोज़ भड़ककर यह शोअ़्ले[13], पहुँचेंगे, तेरे काशाने[14] तक॥

तलाशे-मंज़िले-मक़सूदमें[15] न हो मायूस[16]।
बहुत वसीअ़[17] है, दुनिया तेरी नज़रके लिए॥

---

[1]तूफानोकी लहरे; [2]नौका; [3]घाटको, किनारेको; [4]दुर्भाग्य की कालिमा, [5]माथेमे समाई हुई है, [6]गौरव प्रदर्शनके सामानकी. शृंगारिक वस्तुओकी; [7]आवश्यकता; [8]मृत्युमार्गीको, [9]कब्रके योग्य; [10]अपने साथ, [11]जुल्म और हिंसाके अभ्यस्त; [12]अत्याचार पीडितकी; [13]अगारे; [14]निवासस्थानतक; [15]निश्चित स्थानकी खोज; [16]निराश; [17]विस्तृत।

*ज़ोर ही क्या था जफाए-बाग़बाँ देखा किये।
आशियाँ हम क्या बचाते, नातवाँ देखा किये॥
—सफ़ी लखनवी

उदास शम्म-ए-सहर डूबते हुए तारे।
ख़मोश दर्स[1] है, दुनिया-ए-बेख़बरके लिए॥

हुए महवे-नैरंगिये-बज़्मे-हस्ती।
घड़ी भरको आये थे मेहमान बनकर॥

स्वराज्य-प्राप्ति—

अ़ज़ाबे-जाँ है, ख़ुदा जाने क्यों यह आज़ादी।
सकून था जो क़फ़समे वोह आशियाँमें नहीं॥

मुक़द्दरने तो दुनिया ही बदल दी हम असीरोंकी।
कोई यह कह रहा है, अब क़फ़सको आशियाँ कहिए॥

सुखमें दुःख छिपा हुआ है—

पहलूए-गुलमें ख़ार भी हैं, कुछ छिपे हुए।
हुस्ने-बहार देख तो, दामन बचाके देख॥

वही चार तिनके पयामे-क़फ़स थे।
जिन्हें हम समझते रहे आशियाना॥[2]

अन्य शाइरोंके रंगमें—

ग़ालिब— क़ैदे-हयात बन्दे-ग़म अस्लमें दोनों एक हैं।
मौतसे पहले आदमी ग़मसे निजात पाये क्यों?

दिल— देखिये दिलको तसल्ली ज़ेरे तुर्बत हो तो हो।
जान खोकर, ख़ाक होकर, ग़मसे, फ़ुर्सत हो तो हो॥

---

[1]पाठ, सबक।

[2]कफस दूर ही से नजर आ रहा है।
क़यामत है, अपनी बुलन्द आशियानी॥
—खुर्शीद फ़रीदाबादी

गालिब— हमने माना कि तगाफुल न करोगे, लेकिन—
खाक हो जाएँगे हम, तुमको ख़बर होने तक॥

दिल— हज़रते-'दिल' ! उनकी ज़ीनत रंग लायेगी कुछ और।
वह सँवरते ही रहेंगे, ख़ाक हो जायेंगे हम॥

फानी— या रब ! तेरी रहमतसे मायूस नहीं 'फ़ानी'।
लेकिन तेरी रहमत की ताख़ीरको क्या कहिए॥

इकबाल— तेरे शीशेमें मै बाक़ी नहीं है ?
बता क्या तू मेरा साक़ी नहीं है ?
समन्दरसे मिले प्यासेको शबनम !
बख़ीली है, यह रज्ज़ाक़ी नही है ! !

ज़फरअली— यह है पहचान ख़ासाने-ख़ुदाकी इस ज़मानेमें।
कि ख़ुश होकर ख़ुदा उनको गिरफ़्तारे-बला करदे॥

बहारकोटी—वहीं हज़ारों बहिश्तें भी हैं, ख़ुदा वन्दा !
सिसक-सिसकके कटी ज़िन्दगी जहाँ मेरी॥

दिल— क्या जाने किस ख़यालसे छोड़ा ब-हाले ज़ार।
मुझपर बड़ा करम है मेरे चारासाज़का॥

असगर गोण्डवी—
दैरो-हरम भी कूचए-जानामें आये थे।
पर शुक्र है, कि बढ़ गये दामन बचाके हम॥

दिल— जानिबे-दैरो-हरम कान लगे रहते हैं।
काश, पर्दे ही-से सुनते तेरी आवाज़ कहीं॥
गोशे-दिलके लिए कुछ तूरकी तख़सीस नहीं।
हर जगह हम तेरी आवाज़ सुना करते हैं॥

अब हम अपने पसन्दीदा शेअ़्र तरानए-दिलसे सभी रगके चुनकर क्रमवद्ध दे रहे है।

कलाम दौरे-हाज़िर [१६३२ से १६५५ तक]

एहसासे-ख़ुदी[1] बाक़ी न रहे, तकमीले-जुनूँ[2] है उस हदमें।
ऐ वहशते-दिल[3] आगे ले चल, हरदश्त[4] तो हमने छान लिया॥

फिर ख़ौफ़े-तलातुम[5] क्या मअ़्नी जब किस्मतमें बर्बादी है।
जो मौज बढ़ी अपनी जानिब, आग़ोशमें इक तूफ़ान लिया॥

मस्जूदे-नजर[6] मेरा है यही, कूचेको तेरे क्योंकर छोड़ूँ?
मरना है यहीं, मिटना है यहीं, यह जान लिया यह मान लिया॥

फिर एअ़्तबारे-इश्कके क़ाबिल नहीं रहा।
जो दिल तिरी नजरसे गिरा दिल नहीं रहा॥

आई निदा[7] कि अब तेरी मंजिल क़रीब है।
जब इम्तियाजे-दूरिये-मंजिल[8] नही रहा॥

मौजें उभारकर मुझे जिस सिम्त ले चलीं।
हद्दे-निगाह तक कहीं साहिल[9] नहीं रहा॥

खेलती थी यूँ चमनमे शोख़िये-मौजे-नसीम[10]।
बेतकल्लुफ हर कलीको मुसकराना ही पड़ा॥

---

[1]स्वयका ज्ञान; [2]उन्मादकी पूर्ति; [3]हृदयकी घबराहट, पागलपन; [4]जगल; [5]बहावका भय; [6]मेरा उपास्य; [7]आवाज; [8]मज़िलकी दूरीकी विशेषता; [9]दरियाका किनारा; [10]चचल हवा।

दश्तसे[1] एक ग़ुबार[2] उठा, कोहसे[3] कुछ शरर[4] उड़े।
इश्कने रूह फूँक दी, फिर उन्हे दिल बना दिया॥

बर्क़[5] है या जमाल[6] है, सेहर[7] है या कमाल है।
हुस्ने-करिश्मासाज़ने[8] महवे-नजर[9] बना दिया॥

शौके-जमाल[10] इस तरफ़, तअ़नएतूर[11] उस तरफ़।
हमने सवाल क्या किया, तुमने जवाब क्या दिया॥

हदियए[12]-आशिकी यह है, हासिले-जिन्दगी यह है।
दाग़ भी दिलनशीं[13] मिला, दर्द भी ला दवा दिया॥

कोई तुलूए-सुबहका[14] हिज्रमें मुन्तज़िर[15] रहे॥
हमने चिराग़े-जिन्दगी शाम ही से बुझा दिया॥

दिल हुआ मुहब्बतमें सर्फ़े-इम्तेहाँ अपना।
छा गये ज़मानेपर, जब मिटा निशाँ अपना॥

हम इसे मुहब्बतका मोअ़जिज़ा[16] समझते हैं।
बन गया है, नासेह भी अब मिज़ाजदाँ अपना॥

अब हर आस्तानेसे वेनियाज़[17] है सिज्दे[18]।
जोशे-जिन्दगीमें सर झुक गया कहाँ अपना॥

---

[1]जंगलसे, [2]धूलका गुबार; [3]पर्वतसे; [4]चिनगारियाँ; [5]बिजली, [6]रूप, [7]जादू, [8]रूपके जादूने; [9]देखनेमे लीन; [10]रूप-देखनेकी लालसा; [11]तूरपर सौन्दर्य दिखानेपर मूसाकी जो हालत हुई, उसका उलाहना; [12]प्रेमकी भेंट; [13]दिलमे रहनेवाला; [14]प्रातः-काल होनेका; [15]विरह-रात्रिमे प्रतीक्षा करे; [16]चमत्कार; [17]वेपरवा, निस्पृह; [18]नमाज़मे झुकना (उपासनाये) ।

ख़ूने-नाहक़[1] रंग लाया दामने-बेदाद[2] पर।
आज मज़लूमोंको[3] जोशे-इन्तेक़ाम[4] आ ही गया॥

ता-ब-लब[5] शिकवे न आये थे कि ख़ुद हूँ मुनफ़इल[6]।
हुस्नकी मअसूम फ़ितरतको[7] पशेमाँ देखकर॥

हश्र आफरीं है कूए-मुहब्बतमें हर कदम।
हम तो बढ़े थे राहको हमवार देखकर॥

ऐ शौक़े-दीद[8]! क्या यही हद्दे-निगाह[9] है॥
हैरतज़दा हूँ संगे-दरे-यार[10] देखकर॥

ऐ हुस्न! जो सज़ाए-तमन्ना हो वह क़ुबूल।
लेकिन मेरी नज़रको फिर इकबार देखकर॥

तक़वा[11] भी आज हो गया क़ुर्बाने-मैकदा।
हर जामसे बहारके आसार देखकर॥

वक़्फ़े-उम्मीदो-यासे-मुहब्बतसे[12] हम रहे।
आसान जानकर कभी, दुश्वार देखकर॥

तौबाके एहतरामसे[13] थर्रा रहे थे हाथ।
दिल काँपता था जामको हर बार देखकर॥

अब क्यों शिकस्ते-अहदकी[14] हिम्मत है दफ़अतन[15]।
क्या हो गया मुझे निगहे-यार देखकर॥

---

[1]व्यर्थका रक्त-पात, [2]अत्याचारीके वस्त्रपर; [3]अत्याचार-पीडितोंको; [4]बदलेका भाव; [5]ओठों तक; [6]शर्मिन्दा, [7]सौन्दर्यके भोले स्वभाव-को पछताते देखकर; [8]देखनेका चाव; [9]दृष्टिका केन्द्र, [10]मअशूककी चौखटका पत्थर; [11]संयम्; [12]प्रेमकी आशा-निराशाके चक्करमें; [13]गुनाह न करनेकी प्रतिज्ञाके गौरवसे; [14]प्रतिज्ञा तोडनेकी; [15]एकाएक।

और तड़पाता है, उनका यह सवाल—
"क्या तुम्हीं हो मुब्तलाए-दर्दे-दिल[1]?"

मुझे यह देखना था वक़्ते-गिरियाँ[2]।
कि दामनमें है, गुंजाइश कहाँ तक॥

कही इक आख़िरी हिचकी ने ऐ 'दिल'।
मेरी रूदादे-हस्ती[3] थी जहाँ तक॥

आशुफ़्ता-नजर,[4] आगाज़े-जुनूँ[5], अंजामे-जुनूँको[6] क्या कहिए।
खुद उसने गरीबाँ चाक किया आया जो तेरे दीवानेतक॥

इस नतीजे तक तो पहुँचे सई-ए-लाहासिलसे[7] हम।
छा गये मंजिल पै हम गुजरे है जिस मंजिलसे हम॥

अब जिधरका हौसला हो, ले चल ऐ वारफ़्तगी!
हो चुके आजाद हर अंदेशाए-मंजिलसे हम॥

हर नजर रूदादे-हसरत[8] हर-नफस तमहीदे-यास[9]॥
बा-खबर है जिन्दगीये-हालो-मुस्तकाबिलसे[10] हम॥

चश्मे-गिरियाँ[11] जोशे-तूफाँ[12] हश्र-सामाँ[13] आहे-सर्द[14]।
छा गये महफिलपै हम जब उठ गये महफिलसे हम॥

मिरा हर अश्के-खूँ इक दास्ताँ है, काविशे-गमकी।
फ़राहम[15] कर रहा हूँ दिलके टुकड़े अपने दामाँमें॥

---

[1]दिलके दर्दसे पीडित; [2]रोते समय, [3]जीवन-कहानी, [4]परेशान नजर; [5]उन्मादका प्रारंभ; [6]पागलपनके परिणामको, [7]असफलताओंके प्रयाससे; [8]अभिलाषाओंकी कहानी; [9]निराशाकी भूमिका; [10]जीवनके वर्तमान और भविष्यसे परिचित; [11]अश्रु-पूर्ण नेत्र; [12]तूफानी जोश; [13]क़यामत ढानेवाली दयनीय स्थिति; [14]सर्द आहे लिये हुए, [15]एकत्र, इकट्ठे।

इस इज़्तराबपै[1] क़ुर्बान इक जहाने-सकून[2]।
कोई सँभाल रहा है तड़प रहा हूँ मैं॥

मेरी ख़ामोशिये-मजबूर पर भी एक नज़र।
ज़बाँसे जो न अदा हो वोह माजरा हूँ मैं॥

यह कूए-इश्क़की दुश्वारियाँ मआ़ज़ अल्ला।
क़दम-क़दम पै हैं काँटे, बरहना-पा[3] हूँ मैं॥

रफ़ीक़ मंज़िले-अव्वल ही से पलट आये।
समझ लिये कि बहुत दूर जा रहा हूँ मैं॥

सँभाल अपने दिले-मुत्मनइको[4] नासेह।
कि सरगुज़िश्ते-मुहब्बत[5] सुना रहा हूँ मैं॥

इसीसे कीजिए रफ़्तारका कुछ अन्दाज़ा।
निज़ामे-देहर[6] बदलता हुआ उठा हूँ मैं॥

एहसास दर्दे-इश्क़का ऐ 'दिल' मुहाल[7] है।
रक्खेगा आज हाथ मेरा चारागर कहाँ?

कोई चारासाज़ समझा न यह राज़े-इश्क अब तक।
कभी ज़ब्त मेरी फ़ितरत कभी बेक़रार हूँ मैं॥

तर हो न सका अब तक गोशा किसी दामनका।
हर अश्क सरे-मिज़गाँ समझा था कि दरिया हूँ॥

वह तुम कि ज़ब्ते-सोज़े-मुहब्बतपै[8] ख़न्दाज़न[9]।
वह हम कि आँसुओंसे भी दामन न तर करें॥

---

[1]तड़पनेपर; [2]चैनका संसार; [3]नंगे पाँव; [4]शान्त हृदयको, [5]मुहब्बतकी बीती घटना; [6]संसार-व्यवस्था; [7]कठिन; [8]प्रेम आगको छिपानेमें; [9]हँसते हुए।

जो देखते हैं चाके-ग़रीबाँको बार-बार।
वह सरगुज़िश्ते-इश्कपे[1] भी इक नज़र करें॥

दिले-नालाकश[2] यह ख़बर भी है, कि निज़ामे-देहर[3] बदल गया
हुआ हुस्न अब नज़र-आश्ना[4], रहे-इश्क पर्द-ए-राज़में[5]॥

अश्कोंको आज तक न हुई आबरू नसीब।
शर्मके सूए-दामने-तर देखता हूँ मैं॥

ग़ुबारे-राहे-पसे-कारवाँ[6] समझ लेते।
मेरा शुमार यहाँ तक भी कारवाँमें नहीं॥

सोज़ो-गुदाज़-इश्कको[7] दिलकश[8] बनाके देख।
तू जिस नज़रसे देख मुझे मुसकराके देख॥

गिरती है, बर्क़े-हुस्न[9] निगाहोंपै किस तरह।
तुझको यह देखना है, तो पर्दा उठाके देख॥

यह है, दौरे-हाज़िरमें रंगे-ज़माना।
फ़िसाना हक़ीक़त[10]- हक़ीक़त[11] फ़साना॥

उठी जब नज़र हुस्ने-दिलकशकी[12] बरहम[13]।
सरे-बन्दगी झुक गया मुजरिमाना[14]॥

असीरोंके हकमें यही फ़ैसला है।
कफ़सको समझते रहें आशियाना॥

---

[1]इश्ककी बीती हुई घटनाओंपर; [2]नाला खींचनेवाले दिल; [3]दुनियाका इन्तिज़ाम, [4]दृष्टिसे परिचित; [5]इश्ककी राह अब अप्रकट है; [6]काबाके यात्रियोंके पीछे उड़ी हुई धूल; [7]प्रेमकी व्यथा और तड़पको; [8]चित्ताकर्षक, [9]रूपकी बिजली; [10]कल्पना वास्तविकता समझी जाती है; [11]सचको झूठा समझा जाता है; [12]लुभावने रूपकी; [13]क्रुद्ध, [14]अपराधियोंके समान नत मस्तक।

मायूअजल[1] से हूँ माना, नाकामे-तमन्ना[2] रहना है।
जाते हो कहाँ रुख़ फेरके तुम, मुझको तो अभी कुछ कहना है॥

क़ुदरतकी चमन आराईका गो एक असर है दोनों पर।
ग़ुंचे हैं कि हँसते रहते हैं शबनम है कि रोती रहती है॥

जानिबे-ख़ानक़ाह भी एक नज़र जनाबे 'दिल'!
ग़र्क़मए-तहूरमें जाहिदे-पाकबाज़ है॥

कभी ज़ब्तेसोज़े-दिलसे[3], कभी गर्मिये-फ़ुग़ाँसे[4]।
जो शरर[5] उड़े चमनमें, वह मेरे ही आशियाँसे॥

मेरा हाल था जहाँ तक वह अदा हुआ ज़बाँसे।
जो कहेंगे अश्के-रंगीं वोह अलग है दास्ताँसे॥

दिले-ज़ारो-नालाकशको[6] कोई लाये अब कहाँसे?
जो दलीले-कारवाँ[7] था, वही गुम है कारवाँसे॥

न समझ सके हम अब तक वही फ़ैसला था दिलका।
जो कहा तेरी नज़रने जो सुना तेरी ज़बाँसे॥

मेरा हरनफ़स[8] ज़बाँ है, मेरी ख़ामुशी बयाँ[9] है।
यही शरहे-दास्ताँ[10] है, वोह सुनें जहाँ-जहाँसे॥

तेरी बेनियाज़ियोंने न किये क़ुबूल सिज्दे।
यही दाग़ था जबींपर जब उठे हम आस्ताँसे॥

कभी कैफ़े-आफ़रीं थे, मेरे सोज़े-दिलके नग़मे।
यही साज़ अब है मातम, इसे छेड़िए जहाँसे॥

---

[1]सृष्टिके प्रारम्भसे निराशावादी; [2]अतृप्त अभिलाषी; [3]प्रेमाग्निके दबानेसे; [4]आहोकी गर्मीसे; [5]चिनगारियाँ; [6]सन्तप्त हृदयको; [7]यात्री-दलका चिन्ह, मार्ग-दर्शक; [8]हर साँस; [9]वाणी; [10]कहानीका आशय।

तेरे नाज़ो-तमकनतकी यूँ ही ठोकरें गवारा।
यह जबीं मेरी जबीं है, न उठेगी आस्ताँसे॥

यह खलिश वही खलिश है जो न मिट सकेगी ऐ 'दिल'!
कोई खीचता है, नावक मेरे ज़ख्मे-खूँचुकाँसे॥

समझिए खाके-दिलको रायगाँ[1] दुनियाकी नज़रोंमें।
यही पामाल होकर इक जहाँ मअ़लूम होती है॥

अब उस कूचेमें बहरे-इम्तिहाँ मर मिटके पहुँचा हूँ।
जहाँ जिन्से-वफ़ा तक रायगाँ मअ़लूम होती है॥

मुहब्बतकी खलिशको[2] पूछिये दर्द-आश्ना दिलसे[3]।
कहाँ मस्तूर[4] रहती है, कहाँ मअ़लूम[5] होती है॥

लबे-खामोशसे इक उफ़ निकल जाना ब-मजबूरी।
कोई समझे तो यह इक दास्ताँ मअ़लूम होती है॥

मेरे मिटते ही रुख बदला हवाये-कूये-जानाँने।
यह सइये-आखिरी[6] भी राएगाँ[7] मअ़लूम होती है॥

उठें जो बहरे-करम[8] वोह निगाहे-बेपरवा[9]।
सकूने[10]-अहले-मुहब्बत है उम्र भरके लिए॥

तेरी कोशिशें हैं, तबाहकुन, न उभर सका कभी डूबकर।
कि तेरी खुदापै नज़र नहीं, तुझे नाखुदाकी तलाश है।
इसी सिलसिलेमें गुज़र गये, कई दौर मंज़िले-इश्क़के।
कभी रहनुमाकी खबर नहीं, कभी रहनुमाकी तलाश है॥

---

[1]व्यर्थ; [2]प्रेम-व्यथाको; [3]दु:खी हृदयसे; [4]छिपी; [5]प्रकट; [6]अन्तिम प्रयास; [7]नष्ट; [8]करुणा दिखाने को; [9]लापरवाह चितवन; [10]चैन।

वह कौनसे मुक़ाम थे ऐ ज़ब्ते-राजे-इश्क़!
हम जिन हदोंमें चाक गरेबाँ न कर सके॥

करेंगे इश्ककी रुसवाइयोंपर ग़ौर ऐ नासेह!
कभी फ़ुर्सत अगर हो जायगी चाके-गरीबाँसे[१]॥

वअ़देपै एअ़तबार मगर शाम ही से हम।
वोह मुन्तज़िर कि सुबहे-क़यामत नज़रमें है॥

अब तो जुनूँने-इश्क़की तकमील[२] हो गई।
दीवाना आज आपने भी कह दिया मुझे॥
वह कौन-सी कशिश थी कि बे इख़्तियार आज।
सर तेरे आस्ताँपै झुकाना पड़ा मुझे॥

निगाहे-शौक़को[३] शाख़े-निहाले-गुलकी तलाश[४]।
हवाए-तुन्दकी[५] यह ज़िद कि आशियाँ न बने॥*
किये निगाहने सिज्दे रहे-मुहब्बतमें।
वफ़ाका फ़र्ज़ यही था कहीं निशाँ न बने॥

हक़ीक़त कुछ नहीं वहमो-गुमाँ है॥
यह आ़लम दास्ताँ ही दास्ताँ है॥

---

[१]कुरतेका गला फाड़नेसे; [२]उन्मादकी चरम सीमा; [३]सुरुचिपूर्ण नेत्रोंको; [४]फूलोंकी हरी-भरी टहनीकी खोज; [५]तेज हवाको।

*इसी क़ाफ़िये-रदीफमें 'असर' लखनवीने अकर्मण्योंपर देखिए कितना तीखा व्यंग्य किया है—

यह सोचते ही रहे और बहार ख़त्म हुई।
कहाँ चमनमें नशेमन बने, कहाँ न बने?

तसल्ली नामावरकी है, नज़रमें।
समझता हूँ जो अन्दाज़े-बयाँ है॥
नहीं यह मंज़िलत बर्बाद होकर।
हवाओं पर हमारा आशियाँ है॥

गुबारे-कारवाँका ज़र्रा-ज़र्रा।
मेरी बर्बादियोंकी दास्ताँ है॥

कलाम दौरे-मुतवस्सित [१६०५ से १६३२ तक]

हम और संगे-दर[1] है किसी मस्ते-नाज़का[2]।
अल्लाहरे उरूज[3] जिबीने-नियाज़का[4]॥

यह मुज़्दा[5] था अजब मुज़्दा कि "आते हैं वोह बालीं पर"।
निकलकर दिलसे ऐ दिल ! रुक गया आँखोंमें दम मेरा॥

बार-हा डूबके उभरा मेरे दिलका नश्तर।
राज़ फिर भी न खुला इश्ककी गहराईका॥

नज़र आती है, मुझे हुस्नकी दुनिया बेहिस[6]।
किसको अफ़साना सुनाऊँ शबे-तनहाईका[7]?

मिटगया जब मिटनेवाला फिर सलाम आया तो क्या।
दिलकी बरबादीके बाद उनका पयाम आया तो क्या॥
छुट गई नब्ज़ उम्मीदें देने वाली है जवाब।
अब उधरसे नामावर लेके पयाम आया तो क्या?
आज ही मिटना था ऐ दिल हसरते-दीदारमें[8]।
तू मेरी नाकामियोंके बाद काम आया तो क्या॥

---

[1]चौखटका पत्थर; [2]मग्रूरूकका; [3]उन्नति, गौरव; [4]श्रद्धापूर्ण मस्तकका; [5]शुभ सन्देश; [6]अकर्मण्य; [7]विरह-रात्रिका; [8]दर्शनोंकी लालसामें।

काश अपनी ज़िन्दगीमें हम यह मंज़र[1] देखते।
अब सरे-तुर्बत कोई महशर-ख़िराम आया तो क्या॥
साँस उखड़ी, आस टूटी, छा गया जब रंगे-यास।
नामाबर लाया तो क्या, ख़त मेरे नाम आया तो क्या॥
मिल गया वह ख़ाकमें, जिस दिलमें था अरमाने-दीद[2]।
अब कोई ख़ुर्शीदवश[3] बालाए-बाम आया तो क्या॥
रोते-रोते जो हमेशाके लिए चुप हो गया।
उसके मदफ़न पर कोई शीरीं-कलाम[4] आया तो क्या॥

बहला रहे हैं अपनी तबीअत ख़िज़ाँ नसीब।
दामनपै खींच-खींचके नक़्शा बहारका॥

जब दिलमें दर्दे-इश्क़ उठा हम उछल पड़े।
समझे कि यह करम[5] है, किसी दिल-नवाज़का[6]॥

नारसाईका[7] सबब क्या है, यही जौक़े-तलब[8]।
बढ़ गये हम इस क़दर आगे, कि रहबर[9] रह गया॥

क्या कहूँ किस आर्ज़ूका ख़ून होकर रह गया।
दिलकी दिल ही में रही जब खिंचके ख़ंजर रह गया॥

यह गोया वाक़ेआते-बज़्मे-हस्तीका[10] खुलासा है।
तेरा यूँ दफ़अतन[11] ख़ामोश ऐ शमए-सहर[12] होना॥
उधर घबराके ग़म ख़्वारोंकी मायूसाना[13] सरगोशी[14]।
इधर बीमारका कुछ कहके सबसे बेख़बर होना॥

---

[1]दृश्य; [2]देखनेकी इच्छा; [3]सूर्यमुखी; [4]मधुरभाषी; [5]मेहर्बानी; [6]सहृदयका; [7]उनतक पहुँच नहीं होनेका; [8]चाह की अभिरुचि; [9]मार्ग-दर्शक; [10]ज़िन्दगीकी महफिलके वाकेआतका, [11]अकस्मात; [12]प्रातः कालीन दीपक; [13]निराशा भरी; [14]कानाफूसी।

अग़ाज़े - मुहब्बतसे अंजामे - मुहब्बततक।
गुज़री है जो कुछ हम पर तुमने भी सुना होगा॥

क्या सुनायें सरगुज़िश्ते-जिन्दगीए-पुरअलम[१]।
आशियाँ अब तो क़फ़स है, इससे पहले दाम[२] था॥

हर हक़ीक़त मुज़्तरिब दिलके लिए वह मौत थी।
इस्तलाहे-आममें तसकीन जिसका नाम था॥
अब वोह आग़ोशे-लहदमें सो रहा है, चैनसे।
जो सितमकश ना-शिनासे-राहतो-आराम था॥

मुहब्बत क्या है? दिलका बेकसो-मजबूर हो जाना।
सुकूनो-ज़ब्तकी मंज़िलसे कोसों दूर हो जाना॥

मआल[३] उस मुन्तज़िरका क्या हुआ जिसकी यह हालत थी॥
कभी घबराके सर धुनना, कभी मसरूर हो जाना॥

सुन ऐ मजरूह-दिलको[४] मुस्कराकर देखने वाले।
इसीका नाम है, नासूर-दर-नासूर हो जाना॥

नतीजे तक खिंचे क्या-क्या उमीदो-यासके[५] नक़्शे।
तलातुममें[६] थी किश्ती, सामने नज़रोंके साहिल[७] था॥

रहनुमाकी[८] क्या ज़रूरत इश्क़ कामिल चाहिए।
दिल जहाँ तड़पे समझ लेना यही है कूए-दोस्त[९]॥

किधर है, बर्क़े-सोज़ाँ काश यह हसरत भी मिट जाती।
बनायें तिनके चुन-चुनकर हम अपना आशियाँ कब तक?

---

[१]व्यथासे ओतप्रोत जीवनकी कहानी; [२]जाल; [३]परिणाम, नतीजा; [४]घायल दिलको; [५]आशा-निराशाके; [६]तूफानमें; [७]किनारा; [८]पथ-प्रदर्शक; [९]प्रेयसीका कूचा।

वही शोरिश, वही शोरिश है, दिलके खाक होने पर।
शरर तो बुझ गया उमडेगा आखिर यह धुआँ कब तक ?

अजल ही काश आ जाती सुकूने-मुस्तक़िल[1] बनकर।
शबे-ग़म करवटें बदले मरीज़े-नातवाँ[2] कब तक ?

गोशे-इबरत हो तो सुन लो मरमिटोंकी सर गुज़िश्त।
यह जबाने हालसे क्या जाने क्या कहनेको है॥

जुनूँका मकसदे-अव्वल है ऐ दिल! खाना-बर्बादी।
जब इस हदसे गुजरता है तो, पहुँचाता है, जिन्दाँमें[3]॥

नीची नजरें हैं, तबस्सुम लबपर।
खूब चर्के वोह दिये जाते हैं॥

हक़ तो यह है, कि खता तुमसे हुई ऐ मन्सूर!
थीं छुपानेकी जो बातें वोह बा-आवाज कहीं॥

बैठे तो गर्दकी तरह, उट्ठे तो दर्दकी तरह।
उम्र यूँ ही गुजार दी दश्ते-जुनूँ-नवाजमें॥

मिटे वोह दिल जो मुहब्बतमें बेकरार न हो।
वफ़ा-शिआर न हो, महवे-इन्तजार न हो॥
रवाँ है, अश्के-मुसलसल इधर भी एक नजर।
मेरी ज़बान पै मुम्किन है, एअतबार न हो॥

वह इक पयामे-अजल था मरीजे-ग़मके लिए।
किसीका हँसके यह कहना "खुदाको याद करो"॥

---

[1]स्थायी चैन; [2]निर्बल रोगी; [3]कैदमे।

ग़मे-फिराक़का ज़ाहिर असर नहीं न सही।
जिगर तो ख़ून हुआ, आँख तर नहीं न सही॥

यही है, सोज़े-दिले-अन्दलीबके मअ़नी।
क़फ़स तो फूंक दिया चन्द पर नहीं न सही॥

निगाहे-मस्तसे ओ मुड़के देखने वाले!
तुझे तो है मुझे अपनी खबर नही न सही॥

यह सोचता हूँ कि खुद जाके अर्ज़े-हाल कहूँ।
हवाए-शौक सही, नामाबर नहीं न सही॥

हया तो हज़रते-'दिल' और दिल लुभाती है।
किसीकी आँखमें शोख़ी अगर नहीं न सही॥

उड़ चला हर ज़र्रा सूये-कूये-दोस्त।
हो चुकी जब खाना वीरानी मेरी॥
पीछे-पीछे हसरतोंका क़ाफिला।
आगे-आगे है परेशानी मेरी॥

कहिए तो कह दूँ अर्शेबरींको[1] मुकामे-दोस्त।
हिम्मत मगर कुछ और है अपने ख़यालकी॥

है-है यह बेकसिये-मुहब्बत कि खाके-दिल।
अपनी नज़रके सामने बरबाद हो गई॥

हुज़ूरे-दोस्त यही इल्तजाए[2]-आख़िर है।
निगाहे-याससे[3] हम शरहे-आर्ज़ू[4] करते॥

---

[1]ईश्वरीय स्थानको; [2]अन्तिम निवेदन; [3]निराशा भरे नेत्रोंसे; [4]अभिलाषाओंका अर्थ समझाते।

यह मुद्दआ है कि दिन-रात अश्क बार रहूँ।
तगरना वह मेरे अश्कोंकी आबरू करते॥
कुजा[1] मरीजे-मुहब्बत, कुजा उमीदे-शिफ़ा[2]।
यह सब बजा मगर अपनी-सी चाराजू[3] करते॥

तलाशे-दोस्तमें ख़ुद खो गये मगर ऐ दोस्त!
यह हौसला है, अभी और जुस्तजू करते॥
तलाशे-दोस्त कुजा, आरज़ूए-दीद कुजा।
हमें तो उम्र हुई अपनी जुस्तजू करते॥

शौक़े-दिल जितना बढ़ा, गर्द और भी बढ़ती गई।
आगे-आगे फ़ँसके धोका-सा कुछ महमिलका है॥
पास रहकर यह तकल्लुफ़, साथ रहकर यह हिजाब।
मेरा उनका फ़ासिला गोया कई मंजिलका है॥
हुस्न क्या है? एक इशवा[4] जिसकी फ़ितरत[5] दिल फ़रेब[6]।
इश्क़ क्या है? एक नक़्शा इज़्तराबे-दिलका[7] है॥

कूचए-दिलबरमें अपना बैठना-उठना यह है।
नक़्शे-हसरत बनके बैठे, गर्द बन-बनकर उठे॥
हम सरे-मंजिल गिरे, ग़श खाके यह तो याद है।
क्या ख़बर किसने उठाया, कब उठे, क्योंकर उठे॥
हमको राहे-इश्क़में हर मरहला दुश्वार था।
ठोकरे खाकर कभी सँभले, कभी गिरकर उठे॥
है नमाज़े-इश्क़का ऐ 'दिल'! यह रुक्ने-आख़िरी।
आस्ताने-दोस्तसे क्योंकर हमारा सर उठे॥

---

[1]कहाँ-कैसी; [2]निरोग होनेकी आशा; [3]हकीम लोग; [4]जादू; [5]स्वभाव; [6]दिल लुभाना; [7]बेचैन दिल का।

पैरहन फाड लें गुंचे तो वह ज़ीनत ठहरे।
हम गरीबाँ ही करें चाक तो रुसवाई है॥

मंजिलका ख़्वाब देख रहे थे, खिज़ाँ नसीब।
चौंके तो कारवाँसे बहुत दूर हो गये॥

यह नतीजे हैं, हमारे नाल-ए-शबगीरके[1]।
बढ़ गये कुछ और हलके आहिनी-ज़ंजीरके[2]॥

फिर गई दफ़्अ़तन किसी की नज़र।
यह भी इक गर्दिशे-ज़माना है॥

यूँ मिटायेंगे दागे-नाकामी।
सर है और उनका आस्ताना है॥

हमदम! गमे-फुर्क़तकी, तशरीह[3] नहीं मुम्किन।
इक नश्तरे-सद-ईज़ा[4] हर-हर नफ़से-दिल[5] है॥

ऐ दिले-मुद्दआ़ तलब[6]! महवे-फ़रेबे-आरज़ू[7]!
हुस्न हो माइले-करम[8] यह तो खयाले-ख़ाम[9] है॥

वहार जाम बकफ झूमती हुई आई।
शिकस्ते-अ़हद न करते तो और क्या करते?

नज़रमें हिम्मते-जलवा अगर नहीं न सही।
कभी-कभी तेरी आवाज़ ही सुना करते॥

---

[1]रात भरकी आहोफुगाँके; [2]लोहेकी ज़ंजीरके; [3]खुलासा, भाष्य; [4-5]शरीरका रोम-रोम नश्तरकी सैकड़ो चुभन जैसा अनुभव कर रहा है; [6]अभिलाषी हृदय; [7]इच्छाओंके धोकोमें लीन; [8]कृपा करे; [9]व्यर्थ आशा।

कलाम दौरे-क़दीम [१६०५ ई० से पूर्वका]

हम नफ़स[1] मसरूफ़े-दरमाँ[2] ना-शिनासे-राज़[3] थे।
इश्क़की मजबूरियोंसे बा-ख़बर कोई न था॥

एक यह दिन है कि अपनी दुआ है राएगाँ।
एक वह दिन था कि नाला बे असर कोई न था॥

हुस्न ख़ूगर[4] है दिलरुबाईका[5]।
खुल गया राज़[6] ख़ुदनुमाईका[7]॥

हमें क़फ़समें क़लक क्या हो आशियानेका।
समझ लिये कि यही रंग है ज़मानेका॥

फ़क़त है वअ़दा ही वअ़दा नही वह आनेका।
पुकारता है यह अन्दाज मुसकरानेका।

हँसे जो ज़ख़्मे-जिगर और चोट खायेंगे।
लहू रुलायेगा, अन्दाज़ मुस्करानेका॥

चले वह नाज़से मुँह फेरकर तो हम यह समझे।
यह चाल हश्रकी है, वह चलन ज़मानेका॥

मुदाम दाग़े[8]-मुहब्बतसे[8] दिल रहे रोशन।
कभी चिराग़ न गुल हो गरीबख़ानेका॥

वह हम कि जादए-तसलीमसे क़दम न हटे।
वह तुम कि रंग उड़ाते रहे ज़मानेका॥

---

[1]इष्ट-मित्र; [2]इलाजमे व्यस्त; [3]वास्तविकतासे अनभिज्ञ; [4]आदी; [5]दिलकी चाहतका; [6]भेद; [7]बनने-सँवरनेका; [8]-[8]प्रेमाग्निसे सदैव।

गुबार बनके उठे छा गये ज़मानेपर।
मआल देख लिया ऐ फ़लक मिटानेका।

यह किसने सिज्दे किये हैं, कि फ़र्ते-नख़्वतसे।
दिमाग़ अर्शपै है, तेरे आस्तानेका॥

इधर तो ख़ुल्द नहीं फिर इधर कहाँ ऐ शेख़!
हुज़ूर! यह तो है रस्ता शराबख़ानेका॥

वह मेरी अर्ज़ कि दिल दाद-ए-वफ़ा हूँ मैं।
वह उनका क़ौल कि "क़िस्सा है किस ज़मानेका"?

रहेगा नक़्श मेरी तुरबते-शिकस्तापर।
करिश्मा वह तेरे दामन बचाके जानेका॥

शमअ़ गिरियाँ[1] रही परवानोंकी जाँ-बाज़ीपर।
हमने ऐ 'दिल'! यही महफ़िलमें तमाशा देखा॥

आ़शिक़े-सब्र-आज़मा[2] आ़लममें रुसवा हो गया।
ऐ ख़याले-पर्दादारी[3] राज़ अफ़शाँ[4] हो गया॥

हाथ दिलपर रखके यह कहना किसीका याद है—
"अब उसे अपना न कहना, यह हमारा हो गया"॥

सर अपना है, किसीके आस्ताँ पर।
जबीने-इज़्ज़ पहुँची आस्माँ पर॥

बहारे-गुल है, कितनी कैफ़-अंगेज़[5]?
झुकी पड़ती है, शाख़ें आशियाँ पर॥

---

[1]रोती; [2]सन्तोषी प्रेमी; [3]बातको छिपानेका ख़याल; [4]भेद खुल गया; [5]मतवाली।

हवा रहबर, ग़ुबारे-दश्त वहशत।
चला हूँ मिटने वालोंके निशाँ पर॥
जरीफ़ाना है मुझपर लुत्फ़े-सैयाद।
क़फ़स लटका दिया है आशियाँ पर॥
हवा ख़्वाहे-चमन चन्द और भी थे।
गिरी बिजली मेरे ही आशियाँपर॥

न बेगाना बनकर, न मेहमान बनकर।
रहे दिलमें पैकाँ मेरी जान होकर॥
असर है यह कूए-मुहब्बतका ऐ 'दिल'!
मिली तुझको राहत परीशान होकर॥
शबे-ग़म निकल जायगी हर तमन्ना।
कोई आह बनकर, कोई जान होकर॥

बअ़दे-फ़ना ग़ुबारने पाया अजब उरूज।
हम ख़ाक भी हुए तो रहे आस्मान पर॥
हम ख़ाकसार हैं, हमें जेबा है, फ़र्शे-ख़ाक।
वोह रश्के-माह है, वोह रहें आस्मानपर॥

अफ़सानए-मुहब्बत कुछ मस्लेहत समझकर।
हम कह सके वहीं तक, वह सुन सके जहाँ तक॥
नाक़ाबिले-बयाँ है, रुदादे-सोज़े-पिन्हाँ[1]।
शोअ़ले तो क्या भड़कते, उठता नहीं धुआँतक॥

किस क़दर दिलचस्प होगा मंजरे-नाज़ो-नियाज़।
तीर बरसायेगा कोई फूल बरसायेंगे हम॥

---

[1]पोशीदा प्रेमाग्निकी कहानी।

क्या है इस इकरारका मतलब, दिले-हसरत-नसीब !
मुसकराकर वह यह कहते है "जरूर आयेंगे हम" ॥

जबाने-हालसे कहती है, गमए-बज्म घुल-घुलकर।
"न समझो ग़ैर मुझको मैं शरीके-सोजे-महफिल हूँ" ॥

खयाले-चारासाजीसे किसीका हाथ है दिलपर।
पड़ा हूँ किस सलीक़ेसे अजब हुशियार गाफिल हूँ ॥

अल्लाहरे इक आईनए-पैकरका तसव्वुर।
हैरतसे मुझे अहले-नजर देख रहे हैं ॥
बाकी न रहे हजरते 'दिल' दीदकी हसरत।
वह चश्मे-मुहब्बतसे इधर देख रहे हैं ॥

पर्दा उठ जाये तो इजहारे-हकीकत हो जाय।
मुन्तज़िर मैं तो इधर हूँ, वह उधर है कि नही ॥
तुम पहिले चारासाजो ! उनकी नजरको देखो।
फिर मेरे दिलको देखो, मेरे जिगरको देखो ॥
हमसे गुदाजे-दिलकी रूदाद पूछना क्या ?
तुम अश्के-खूँ को देखो, दामाने-तरको देखो ॥
है इज्तिराबे-दिलपर क्यों इस क़दर तअज्जुब ?
अपनी अदाको देखो, अपनी नजरको देखो ॥
क्या देखते हो मेरे दम तोड़नेका आलम।
तुम मुड़के वक़्ते-रुख़सत शम-ए-सहरको देखो ॥
खूगरे-ना-मेहर्बानी है किसीके इश्कमें।
अब तमन्ना है, कि हमपर मेहर्बां कोई न हो ॥

लड़खड़ाते हैं क़दम मंजिल जब आ पहुँची करीब।
आ़लमे-ग़ुर्बतमें[1] मुझ-सा नातवाँ[2] कोई न हो॥
हमको उनसे है ग़रज, दुनिया हुई अपनी तो क्या।
वह अगर ना-मेहर्बां हों, मेहर्बां कोई न हो॥

शबे-हिज्र फ़र्ते-ग़ममें मुझे आगया तबस्सुम।
जिसे रो रही हो किस्मत वह ख़ुद अश्क़बार क्यों हो॥
हुई शामिले-मुकद्दर जब अजलसे तल्ख़कामी।
कोई जहर भी अगर दे, मुझे नागवार क्यों हो॥

ऐसी प्यारी-प्यारी सूरत आईना पाता कहाँ?
शादमाँ[3] है हुस्नका ख़ाका उड़ाकर आईना॥

बे असर कूए-मुहब्बतमें[4] शकेबाई[5] हुई।
इन्तहाए-पर्दादारी[6] वजहे-रुसवाई[7] हुई॥

अ़जब तशबीह है इक शाहिदे-यकताके दामनकी।
मेरी तख़्यीलने तसवीर खींची बर्क़े-ऐमनकी॥

कुजा[8] लुत्फ़े-चमन, अब फिर रहा है दाम[9] नजरोंमें।
बहार आई तो शाखें झुक गईं मेरे नशेमनकी॥

हजरते-'दिल'! जब बुढ़ापा आयेगा।
ख़ैर मक़दमको जवानी जायेगी॥

नहीं आता जो कोई वअ़दा ख़िलाफ़।
नींद भी ता-सहर[10] नहीं आती॥

---

[1]सफरमे; [2]असहाय-कमजोर; [3]प्रसन्न; [4]प्रेम-मार्गमे; [5]धैर्य रखना निष्फल हुआ; [6-7] भेदको छिपानेकी अधिक-से-अधिक कोशिश ही बदनामीका कारण हुई; [8]कहाँ, कैसा; [9]जाल; [10]सुबह तक।

आलमे-ख्वाबमें भी वह सूरत।
नजर आती नजर नहीं आती॥
क्यों न हो वे नियाजे-फ़अ़सायों दैर।
जब वह सूरत नजर नहीं आती॥

इससे पहिले ही क़फ़स अपना नशेमन हो चुका।
जब चमनमें झूमती बादे-बहार आनेको थी॥

मुझे अपने मुकद्दरपर हँसी बे-इख़्तियार आई।
सबा जब फूल दामनमें लिये सूए-मजार आई॥

अ़नादिलके लिए क्या कम थे शोअ़ले आतिशे-गुलके।
चमककर बर्क़ क्यों सूए-नशेमन बार-बार आई॥

निगाहे-बाग़बाँमें यह भी थी इक शर्ते-आराइश।
किसीका आशियाँ उजड़ा चमनमें जब बहार आई॥

अ़नादिलको हो मुज़्दा[1] हम तो हैं अफ़सुर्दा[2] दिल ऐ 'दिल'!
हमें क्या, कब ख़िज़ाँ रुख़सत हुई, किस दिन बहार आई?

तुझको रुख़े-पुरनूर छुपाना है, छुपाले।
देखेंगे बहरहाल तुझे देखने वाले॥

"गुबार बनके उठो, फिर फ़लकपै छा जाओ"।
यह कह रहा है, कोई ख़ाकमें मिलाके मुझे॥

यह और जख़्मे-जिगर पर नमक छिड़कना है।
वह देखते हैं, दमे-नजअ़[3] मुस्कराके मुझे॥

---

[1]शुभ सन्देश; [2]मुर्झाये हुए; [3]मृत्यु-समय।

वह ग़मनसीब हूँ ऐ दिल कि बज़्मे-हस्तीमें।
कभी किसीने न देखा नज़र उठाके मुझे॥

हमपर एहसाँ है इक सितमगरका।
उम्रभर सर नहीं उठानेका॥

दम है घुटनेके लिए, अश्क है ढलनेके लिए।
सूरते-शमअ़ बहरहाल हूँ जलनेके लिए॥

दारे-फ़नासे[1] चश्मे-ज़दनमें[2] गुज़र गये।
हम मिस्ले-बर्क़[3] आये थे, शक्ले-शरर[4] गये॥
कतरे गये तो क़ूवते-परवाज़ बढ़ गई।
उड़ते हुए चमनको मेरे बालो-पर गये॥
वह चश्मे-मुनफ़अ़िलसे[5] मुझे देखते न काश।
तस्कीन[6] देने आये थे बेचैन कर गये॥

ना-आश्नाए-सागरे-मै हो चुका हूँ मैं।
लेकिन वह जाम दें तो कुछ इन्कार भी नहीं॥

मुदाम क़ैसके आगे रही परेशानी।
हमींको राहे-मुहब्बतमें रहनुमा न मिला॥

इधर बज़्ममें वह रहे जलवागर।
उधर ता-सहर शमअ़ जलती रही॥
कोई वअ़दे-पै-वअदे करता रहा।
क़ज़ा रोज़ आ-आके टलती रही॥

---

[1]असार संसारसे; [2]पलक मारते; [3]बिजलीके समान; [4]चिनगारी-की तरह; [5]शर्मीली नजरोंसे; [6]तसल्ली, सान्त्वना।

जज्बए-जाँ-सोज़ हो हासिल, उस अफ़सानेसे क्या।
वजहे-खामोशी कहे फिर शमअ़ परवानेसे क्या॥

हँगामे-नजअ़ है, यही तद्बीर आखिरी।
हर चारा साज़ अब मेरे हक़में दुआ़ करे॥

रात-दिन बेखुदी-सी तारी है।
कुछ अ़जब जिन्दगी हमारी है॥

हो गई रुखसत गुलिस्ताँसे बहार।
क्या उदासी है, दरो-दीवार पर॥

हजरते-'दिल'! हर निशाते-जिन्दगी।
कर चुके कुर्बां निगाहे-यारपर॥

मिली राहत हुजूमें-यासो-ग़ममें खून रो-रोकर।
लगी दिलकी बुझाई है तो कुछ-कुछ दीदए-तरने॥
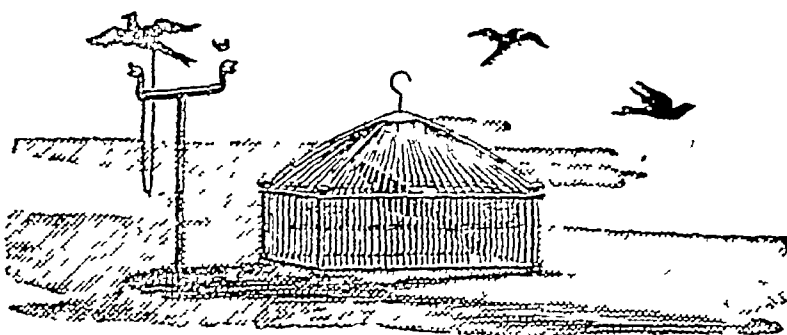
हम सफीरो! फ़स्ले-गुल आने तो दो।
खुद-ब-खुद हो जायेंगे तैयार पर॥

१५ अगस्त १९५७ ई०

जलील मानिकपुरी

[१८६४-१९४६ ई०]
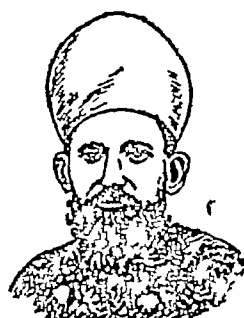
जलीलहसन 'जलील' १८६४ ई० मे मानिकपुर (अवध) मे उत्पन्न हुए। १०-११ वर्षकी उम्रमे समूचा कुरआन कठस्थ कर लिया। शिक्षाका जमाना बहुधा लखनऊमे व्यतीत हुआ। वहाँ आपने अरबी-फ़ारसीकी उच्च शिक्षा प्राप्त की। सुख़नगोईका शौक विद्यार्थी अवस्थासे ही था। २० वर्षकी उम्रमे अमीर मीनाईके शिष्य हुए, और उस्तादके जीवन-कालमे सदैव उनके साथ रहे। आपकी भक्ति और योग्यतासे उस्ताद इतने प्रभावित हुए कि अपनी उस्तादीकी गद्दी आपको ही सुपुर्द कर गये।

अमीर मीनाई रामपुरमे रहकर जब 'अमीरुललुगात' जैसे वृहत्कोशका निर्माण कर रहे थे, और उसके लिए एक विस्तृत कार्यालय खोला गया था, तब 'जलील'पर ही उसके सपादनका भार डाला गया था। बनारस, भोपाल आदिकी यात्राओमे भी आप उस्तादके कदम-ब-कदम साथ रहे। १९०० ई० मे जब हज़रत अमीर मीनाई हैदराबाद स्थायी रूपसे रहनेको चले गये तो भी आप उनके साथ ही रहे। वहाँ दो उर्दू-पत्रोके सपादनका कार्य आपके सुपुर्द हुआ। मिर्जा दागकी मृत्युके बाद १९०८ ई० मे तत्कालीन नवाब हैदराबादने अपना कविता-गुरु आपको स्वीकृत किया और मिर्जा दागके रिक्त स्थानपर प्रतिष्ठित किया। 'जलीलुलकद्र' खितावसे विभूषित किया। फिर वर्त्तमान नवाबने जब शासनकी वागडोर सँभाली तो उन्होने भी उस्तादीका गौरव आपको ही प्रदान किया, और आपके जीते जी

आपसे ही मशविरए-सुख़न लेते रहे। पहले आपको "नवाब फ़साहत जग बहादुर" ख़िताब अता किया गया। दुबारा "इमामुल मुल्क" की पदवीसे विभूषित किया। नवाब साहबके अतिरिक्त युवराज, शहज़ादे भी आप ही से इस्लाह लेते थे। पहला दीवान 'ताजे-सुख़न' १९१० मे प्रकाशित हुआ। दूसरा दीवान 'जाने-सुख़न' १९१६ मे छपा। तीसरा दीवान रूहे-सुख़न मुद्रणकी प्रतीक्षामे है। इनके अतिरिक्त बीसो महत्त्वपूर्ण पुस्तकोंके आप रचयिता है। ६ जनवरी १९४६ ई० मे आपने हैदराबादमे समाधि पाई।

आपके ख़ुद पसन्दीदा अशआरमे से चन्द शेअर निगार जनवरी १९४१ से यहाँ साभार दिये जा रहे है।

इन्तिख़ाब अज़ ताजे-सुख़न

मेरी वहशत[1] भी तमाशा हो गई।
जो इधर गुज़रा, खड़ा देखा किया॥

आज ही आ जो तुझको आना है।
कल ख़ुदा जाने मैं हुआ-न-हुआ॥

मज़ा लेंगे हम देखकर तेरी आँखें।
उन्हें ख़ूब तू नामावर[2]! देख लेना॥

यह रंग गुलाबकी कलीका।
नक़्शा है किसीकी कमसिनीका॥
मुँह फेरके यूँ चली जवानी।
याद आ गया रूठना किसीका॥

ऐ 'जलील'! आँसू बहाये तुमने क्यों?
उनको हँसनेका बहाना मिल गया॥

---

[1]उन्माद, दीवानगी; [2]पत्र-वाहक।

मैंने जो तुम्हें चाहा, क्या इसमें ख़ता मेरी।
यह तुम हो, यह आईना, इंसाफ़ ज़रा करना।।

जाते हो, ख़ुदा हाफ़िज़, हाँ इतनी गुज़ारिश[1] है।
जब याद हम आजायें, मिलनेकी दुआ करना।।

थी इश्क़ो-आशिक़ीके लिए शर्ते-ज़िंदगी।
मरनेके वास्ते मुझे जीना ज़रूर था।।
वोह बेख़ुदीकी आड़में लिपटे 'जलील' से।
क्योंकर कहूँ कि होश न था, था, ज़रूर था।।

दिन जो दुश्मनके फिरे मेरे भी फिरने चाहिएँ।
क्या ज़माना एक ही करवट बदलकर रह गया।।

चले हाय दमभरको मेहमान होकर।
मुझे मार डाला मेरी जान होकर।।

हम भूले हुए राह हैं ऐ कअबा-नशीनों!
जाते थे कहीं और, निकल आये कहीं और।।

यह जो सर नीचे किये बैठे हैं।
जान कितनोंकी लिये बैठे हैं।।

झूठे वअ़दे भी नहीं करते आप।
कोई जीनेका सहारा ही नहीं।।

वअदा करके वोह हाय जाते हैं।
रोग दिलको लगाये जाते हैं।।

---

[1]प्रार्थना।

निगाह[1] बर्क[2] नहीं, चेहरा आफ़ताब[3] नहीं।
वोह आदमी है, मगर देखनेकी ताब नहीं॥

अच्छा नहीं कि हो रुख़े-महबूब[4] बेनकाब।
पर्दा उठे तो डाल दूँ अपनी नज़रको मैं॥

इक शमअ़ है मज़ारपै वोह भी बुझी हुई!
क्या देखकर बुलाऊँ नसीमे-सहरको[5] मैं॥

ओ आँख चुराकर जानेवाले।
हम भी थे कभी तेरी नज़रमें॥

जिगर थामे हुए बैठे हैं जितने सीने वाले हैं।
मेरे पुरदर्द नाले भी बड़े बेदर्द नाले हैं॥

नसीबसे कहीं मरना किसीपै होता है।
मज़ा जो इसमें है, वोह उम्रे-जाविदाँमें[6] नहीं॥

आपने तसवीर भेजी मैंने देखी ग़ौरसे।
हर अदा अच्छी, ख़मोशीकी अदा अच्छी नहीं॥

हमारी बेख़ुदीका हाल वोह पूछें तो ऐ क़ासिद!
यह कहना होश इतना है कि तुमको याद करते हैं॥
'जलील' अच्छा नहीं आबाद करना घर मुहब्बतका।
यह उनका काम है जो ज़िंदगी बरबाद करते हैं॥

मज़े बेताबियोंके आ रहे हैं।
वोह हमको, हम उन्हें समझा रहे हैं॥

---

[1]आँखे; [2]बिजली; [3]सूरज; [4]प्रेयसीका मुख; [5]प्रातः-कालीन वायुको; [6]अमर जीवनमे।

चाल है मस्त, नज़र मस्त, अदामें मस्ती।
जैसे वोह आते हैं लूटे हुए मैख़ानेको ॥

बात साक़ीकी न टाली जायगी।
करके तौबा तोड़ डाली जायगी ॥

आते-आते आयगा उनको ख़याल।
जाते-जाते बेख़याली जायगी ॥

देखते हैं ग़ौरसे मेरी शबीह[1]।
शायद इसमें जान डाली जायगी ॥
ऐ तमन्ना! तुझको रो लूँ शामे-वस्ल।
आज तू दिलसे निकाली जायगी ॥
क़ब्रमें भी होगा रोशन दाग़े-दिल।
चाँदपर क्या ख़ाक डाली जायगी ॥

मेरी हर बातको उलटा वोह समझ लेते हैं।
अबकी पूछा तो यह कह दूंगा कि हाल अच्छा है ॥

नक़ाब कहती है—"मैं परदए-क़यामत हूँ।
अगर यक़ीन न हो देख लो उठाके मुझे" ॥
मैं डर रहा हूँ तुम्हारी नशीली आँखोंसे।
कि लूट लें न किसी रोज़ कुछ पिलाके मुझे ॥

आप और सोग[2] मेरा क्या कहना।
देखिए लबपै हँसी आई है ॥

थकके बैठूँ तो यह कहता है जुनूँ[3]—
"दो क़दम कूचए-रुसवाई[4] है" ॥

---

[1]तस्वीर; [2]शोक, रंज; [3]उन्माद; [4]बदनाम होनेका स्थान, प्रेयसीका कूचा।

भला तौबाका मैख़ानेमें क्या ज़िक्र ?
जो है भी तो कहीं टूटी पड़ी है ॥

हाय ! क्या हसरतकदा[1] था दिल हमारा ऐ 'जलील' !
हो गया दो रोज़में आबाद भी बरबाद भी ॥

आँखोंमें आके कौन, इलाही निकल गया ?
किसकी तलाशमें मेरे अश्के-रवाँ[2] चले ?

जब मैं चलूँ तो साया भी अपना न साथ दे ।
जब तुम चलो, ज़मीन चले आस्माँ चले ॥

इज़हारे-हालपै मुझे क़ुदरत नहीं रही ।
उनको यह वह्म है कि मुहब्बत नही रही ॥

आज आँसू तुमने पूछे भी तो क्या ?
यह तो अपना उम्र भरका काम है ॥

कह दो यह कोहकनसे[3] कि "मरना नहीं कमाल,
मर-मरके हिज्रेयारमें[4] जीना कमाल है" ॥
इस महवियतपै[5] आपकी कुर्बान मैं 'जलील' !
इतना नहीं ख़याल कि किसका ख़याल है ॥

मार डाला मुस्करा कर नाज़से ।
हाँ मेरी जाँ फिर इसी अन्दाज़से ॥

किसने कह दी उनसे मेरी दास्ताँ ?
चौंक-चौंक उठते हैं ख़्वाबे-नाज़से ॥

---

[1]अभिलाषाओंका घर; [2]बहते हुए आँसू; [3]फ़रहादसे; [4]विरहमें; [5]तन्मयतापै ।

दर्दे-दिल पहले तो वोह सुनते न थे।
अब यह कहते हैं—"जरा आवाज़से"॥

ज़िन्दगी क्या जो बसर हो चैनसे।
दिलमें थोड़ी-सी तमन्ना चाहिए॥

बनी है जानपै, जानेकी तुमने ख़ूब कही।
मेरा यह हाल, फिर आनेकी तुमने ख़ूब कही॥
मुझे ज़माना बुरा कह रहा है, कहने दो।
ग़रज़ है तुमसे, ज़मानेकी तुमने ख़ूब कही॥

मुहब्बत रंग दे जाती है जब दिल, दिलसे मिलता है।
मगर मुश्किल तो यह है दिल बड़ी मुश्किलसे मिलता है॥

उनसे इज़हारे-मुहब्बत[1] जो कोई करता है।
दूरसे उसको दिखा देते हैं तुरबत[2] मेरी॥

यह कौन ज़ेरे-ज़मीं उसको गुदगुदाता है?
कि मुस्कराती हुई हर कली निकलती है॥

दिलचस्प हो गई तेरे चलनेसे रहगुज़र[3]।
उठ-उठके गर्देराह लिपटती है राहसे॥

सब अपना हाल कहते रहे चारासाज़से[4]।
मैं था कि महवे-लज़्ज़ते-दर्दे-जिगर[5] रहा॥

इन्तिख़ाबअज़ जाने-सुख़न

ज़रा-ज़रा-सी शिकायत पै रूठ जाते हैं।
नया-नया है अभी शौक़ दिल रूबाई[6] का॥

---

[1]प्रेम-प्रदर्शन; [2]क़ब्र; [3]मार्ग; [4]चिकित्सकसे; [5]जिगरके दर्दकी लज्ज़तमें लीन, तन्मय; [6]दिल लेनेका।

रहे असीर[1] तो शिकवे[2] रहे असीरीके।
रिहा हुआ तो मुझे ग़म हुआ रिहाईका॥

कुछ इस अदासे यारने पूछा मेरा मिज़ाज।
कहना पड़ा कि शुक्र है परविर्दिगारका॥

ख़ूब इन्साफ़ तेरी अंजुमने-नाज़में[3] है।
शमअ़का रंग जमे ख़ून हो परवानेका॥

वअ़दा करके और भी आफ़तमें डाला आपने।
ज़िन्दगी मुश्किल थी, अब मरना भी मुश्किल हो गया॥

मुन्तज़िर मौसिमे-गुलके है तेरे दीवाने।
हाथ रक्खे हुए बैठे है गरेबानोंपर॥

या ख़ुदा दर्दे-मुहब्बतमें असर है कि नहीं।
जिसपै मरता हूँ उसे मेरी ख़बर है कि नहीं॥
आपसे आँख मिलाऊँ यह मेरी ताक़त है?
देखता यह हूँ कि अगली-सी नज़र है कि नहीं॥

मस्त करदे मुझे साक़ी! मगर इस शर्तके साथ।
होश इतना रहे बाक़ी कि तुझे याद करूँ॥

उन शोख़ हसीनोंपै जो आती है जवानी।
तलवार बना देती है एक-एक अदाको॥

दैरो-कअ़बेकी ज़ियारत[4] तो फ़क़त हीला[5] है।
जुस्तुजू तेरी लिये फिरती है घर-घर मुझको॥

यहाँ उड़ गई ख़ाक अहले-वफ़ाकी।
वहाँ इम्तहाने-वफ़ा हो रहा है॥

---

[1]क़ैद; [2]शिकायत; [3]नाज़की महफ़िलमे; [4]दर्शन; [5]बहाना।

सच पूछिए तो नाल-ए-बुलबुल है बेख़ता।
फूलोंमें सारी आग लगाई सबाकी है॥

मुझे तमाम ज़मानेकी आर्ज़ू क्यों हो?
बहुत है मेरे लिए एक आर्ज़ू तेरी॥

चमनके फूल भी तेरे ही ख़ोशाची[1] निकले।
किसीपै रंग है तेरा किसीपै बू तेरी॥

ग़रजके आश्ना[2] है साक़िया! सब बज़्मे-आलममें[3]।
जहाँ शीशा हुआ ख़ाली जुदा पैमाना होता है॥

हुस्न देखा जो बुतोंका तो ख़ुदा याद आया।
राह कअ़बेकी मिली है मुझे बुतख़ानेसे॥

हम-तुम मिले न थे तो जुदाईका था मलाल।
अब यह मलाल है कि तमन्ना निकल गई॥

आप पहलूमें जो बैठें तो सँभल कर बैठें।
दिले-बेताबको आ़दत है मचल जानेकी॥

मैं न समझा था कि मैं इतनी गिराँ क़ीमत हूँ।
पारसाई[4] हुई सदक़े[5] तो मिला जाम[6] मुझे॥

नसीमे[7]-सुबहसे कह दो कि गुल शम-ए-लहद[8] करदे।
कोई छुप-छुपके रोता है लिपटकर मेरे मदफ़नसे॥

शमअ़को तुम उठा दो ख़िलवतसे[9]।
यह हमेशाकी जलनेवाली है॥

---

[1]ख़ुशामदी; [2]मित्र, साथी; [3]संसारमें; [4]सदाचारता; [5]निछावर; [6]मदिरापात्र; [7]हवासे; [8]क़ब्रका दीपक बुझादे; [9]एकान्तसे।

मुझे जिस दम ख़यालेनरगिसे मस्ताना आता है।
बड़ी मुश्किलसे क़ाबूमें दिले-दीवाना आता है॥

हवास[1] आये हुए फिर खो दिये लैलाने मजनूँके।
यह कहना ताजियाना[2] था "मेरा दीवाना आता है" ॥

कोई साग़र ब-कफ़ है कोई महवे-चश्मे-साक़ी है।
हमारे हाथ देखे कौन-सा पैमाना आता है॥

मशीयत[3] जब युँही ठहरी तो मेरी क्या ख़ता नासेह!
हरम[4] को ढूँडता हूँ, सामने बुतख़ाना आता है॥

दर्दसे वाक़िफ़ न थे, ग़मसे शिनासाई न थी।
हाय क्या दिन थे तबीअ़त जब कहीं आई न थी॥

सच कहा ज़ाहिद यह तूने ज़हरे-क़ातिल है शराब।
हम भी कहते थे यही जब तक बहार आई न थी॥

अ़जब अदासे चमनमें बहार आती है।
कली-कलीसे मुझे बू-ए-यार आती है॥

कुछ इख़्तियार किसीका नहीं तबीअ़तपर।
यह जिसपै आती है बेइख़्तियार आती है॥

बयाबाँसे निकलना अब तेरे मजनूँका मुश्किल है।
यह काँटा भी उलझकर रह गया सेहराके[5] दामनसे॥

इन्तिख़ाब अज़ रूहे-सुख़न-(अप्रकाशित)

आराम गया, सब्र गया, दिलसे निकलकर।
कम्बख़्त तमन्ना भी निकल जाये तो अच्छा॥

---

[1]होश; [2]हण्टर; [3]ईश्वरीय इच्छा; [4]मस्जिदको; [5]जंगलके।

इस इत्तिफ़ाकको फ़ज़्लेख़ुदा समझ वाइज़!
कि हिज्रो-ए-मैं[1] तेरे लबपर थी मुझको होश न था॥

दुकाने-मैंपै पहुँचकर खुली हक़ीक़ते-हाल।
हयात[2] बेच रहा था वोह मै-फ़रोश न था॥

मुनहसिर मौसिमे-गुलपै नहीं सौदा मेरा।
आगया ज़िक्र तेरा और मै दीवाना हुआ॥

कासिद चला यहाँसे जो लेकर पयामे-शौक़।
कुछ कहते-कहते मैं कई मंज़िल निकल गया॥

हकीकतमें पता देता है दरपरदा मुहब्बतका।
'जलील'! उनका तुम्हारे नामपर ख़ामोश हो जाना॥

मिलती-जुलती है क़यामतसे शबाहत[3] लेकिन।
इक ज़रा रंग है गहरा शबे-तनहाईका[4]॥

पाए-साकीपै तौबा लोट गई।
हाथमे इस अदासे जाम लिया॥

मेरे आनेकी तो बन्दिश है मगर।
क्या करेंगे, मैं अगर याद आया॥

ऐ चर्ख़! कितने ख़ाकसे पैदा हुए हसीन?
तू एक आफ़ताबको चमकाके रह गया॥

लाया गुले-मुराद न झोंका नसीमका।
दामन मैं हर बहारमें फैलाके रह गया॥

---

[1]शराबकी बुराई; [2]ज़िन्दगी; [3]उपमा; [4]विरह-रात्रिका।

किसीका हुस्न अगर बेनक़ाब हो जाता।
निज़ामे-आ़लमे-हस्ती[1] खराब हो जाता॥

कौन बेकस ग़रीके-बहर[2] हुआ?
सर पटकती है मौजें साहिलपर[3]॥

आँखोंको छोड़ जाऊँ, इलाही मै क्या करूँ?
हटती नहीं नज़र रुख़े-जानाना[4] छोड़कर॥

हाय! वोह दर्द-आश्ना[5] था किस क़दर?
जिसने डाली है बिनाए-दर्दे-दिल[6]॥

आप आयें पूछने मेरा मिज़ाज।
मै तसद्दुक,[7] मै फिदाए[8]-दर्दे-दिल॥

मुहतसिबसे[9] मैकशीका[10] ढंग सीखा चाहिए।
मस्त है लेकिन ज़रा उसपर गुमाँ[11] होता नहीं॥

निकहते-गुलकी[12] परेशानी न पूछो बाग़में।
इस तरह ताइर[13] कोई बे आशियाँ होता नहीं॥

अगर यह सच है तो मरनेपै नाज़ है मुझको—
"तर आँसुओंसे रहीं उनकी आस्ती बरसों"॥

क़ासिद-पयामे-शौक़को देना न बहुत तूल।
कहना फ़क़त यह उनसे कि "आँखें तरस गईं"॥

---

[1]जीवन-व्यवस्था; [2]नदीमे डूबा; [3]किनारेपर; [4]प्रेयसीके मुखसे; [5]दर्दसे परिचित; [6]दर्देदिलकी नींव; [7]क़ुर्बान; [8]न्योछावर; [9]खुदाके यहाँ हिसाब लेनेवाला; [10]मदिरा-पानका; [11]शक; [12]फूलकी सुगन्धकी; [13]परिन्दा।

गुज़रीं जो इस तरफ़से हसीनोंकी टुकड़ियाँ।
कुछ रो गईं तो कुछ मेरे रोनेपै हँस गईं॥

आके दो दिनको फ़स्ले-गुल साक़ी!
मुब्तिला[1] कर गई गुनाहोंमें॥
ख़िज़्रको ढूंढ़ने मैं निकला था।
मिल गये मैकदेकी राहोंमें॥

तबस्सुम[2] था इस रंगसे उनके लबपर।
मैं समझा कोई जाम छलका रहे हैं॥

बहार एकदमकी है खुलता नहीं कुछ।
कि गुल खिल रहे हैं कि मुर्झा रहे हैं॥

सब बाँध चुके कबके सरे-शाख़ नशेमन।
हम हैं कि गुलिस्ताँकी हवा देख रहे हैं॥*

न इशारा, न कनाया, न तबस्सुम, न कलाम।
पास बैठे हैं मगर दूर नज़र आते हैं॥

उस गिरफ़्तारकी पूछो न तड़प, जिसके लिए।
दर क़फ़सका हो खुला ताक़ते-परवाज़[3] न हो॥

क्या! कहूँ मर-मरके जीनेका मज़ा।
ऐ ख़िज़्र! यह ज़िन्दगानी और है॥

---

[1]फँसा गई; [2]मुस्कान; [3]उड़नेकी शक्ति।

*असर लखनवीने इसी रंगमें क्या ख़ूब कहा है, मानों अकर्मण्यों और वहमियोंको चाबुक मारा है।

यह सोचते ही रहे और बहार ख़त्म हुई।
कहाँ चमनमें नशेमन बने, कहाँ न बने॥

हवा गुलिस्ताँकी खाके दिलको क़रार कुछ आ चला था लेकिन--
किसीकी फिर याद ताज़ा करदी गुलोंका मुँह चूमकर सबाने[1] ॥

ग़ज़ब होता तेरी सूरत जो बेपर्दा कहीं होती।
कि तुझपर जो निगह पड़ती निगाहे-वापिसीं होती ॥

सुजूदे-आस्ताने-यारसे[2] सैरी[3] नहीं होती।
किये जाते जिबींसाई[4] अगर बाक़ी जिबीं[5] होती ॥

नज़र पड़ती है तुमपर सबकी मुझको रश्क[6] आता है।
चलो ख़िलवतमें[7] चल बैठें निकलकर बज़्मे-महशरसे ॥

हवाए-ख़ुल्द[8] कहाँ मैकदा[9] कहाँ साक़ी!
यह आहेसर्द किसी मस्तने भरी होगी ॥

बिछड़कर कारवाँसे[10] मैं कभी तनहा नहीं रहता।
रफ़ीक़े-राह[11] बन जाती है गर्दे-कारवाँ[12] मेरी ॥

तुम याँसे गये क्या, मेरी दुनिया ही बदल दी।
वोह लुत्फ़ नहीं, वोह सहर-ओ-शाम नहीं है ॥

किसीमें ताब कहाँ थी कि देखता उनको।
उठी नक़ाब तो हैरत नक़ाब होके रही ॥

तुमने आकर मिज़ाज पूछ लिया।
अब तबीअ़त कहाँ सुलझती है ॥

---

[1]हवाने; [2]यारके द्वारपर मस्तक झुकानेसे; [3]मन नही भरता; [4]माथा रगडते-रहते, [5]माथा; [6]ईर्ष्या; [7]एकान्तमे; [8]जन्नतकी हवा; [9]मदिरालय; [10]यात्रीदलसे, [11]मार्ग-मित्र; [12]यात्रीदलकी धूल ।

बहारें लुटा दीं, जवानी लुटा दी।
तुम्हारे लिए जिन्दगानी लुटादी॥

अजब हौसला हमने गुंचेका[1] देखा।
तबस्सुमपै[2] सारी जवानी लुटा दी॥

दे रहे हैं मैं वोह अपने हाथसे।
अब यह शै इंकारके क़ाबिल नहीं॥

जमाना है कि गुजरा जा रहा है।
यह दरिया है कि बहता जा रहा है॥

जमानेपै हँसे कोई कि रोये।
जो होना है, वोह होता जा रहा है॥

रवाँ है उम्र और इन्सान ग़ाफिल।
मुसाफिर है कि सोता जा रहा है॥

हाय फिर छेड़ दिया जिक्रे-गुलिस्ताँ तूने।
खुश्क आँसू न हुए थे मेरे सैयाद अभी॥

बिजलीकी ताक-झाँकसे तंग आ गई है जान।
ऐसा न हो कि फूँक दूँ खुद आशियाँको मैं॥

ऊपर हमने आपके पसन्दीदा अशआरमे-से चन्द शेअर उद्धृत किये हैं। अब हम अपनी डायरीसे चुनकर चन्द अशआर और दे रहे हैं—

किधर चले मेरे अश्के-रवाँ[3] नहीं मअ़लूम।
भटक रहा है कहाँ कारवाँ, नहीं मअ़लूम॥

---

[1]कलीका; [2]मुस्कराहट, [3]बहते हुए आँसू।

उठा दिया तो है लंगर हवाके झोंकोंमें।
किधर सफ़ीना[1] है, साहिल[2] कहाँ, नही मअ़लूम ॥
तरानाकश भी हजारों है, नालाकश भी हजार।
मुझीसे क्यों है चमन बदगुमाँ, नहीं मअ़लूम ॥

बहार फूलोंकी नापायदार[3] कितनी है।
अभी तो आई, अभी उड़ गई, हँसीकी तरह ॥

नाजुक गुलोंपै रंगे-मसर्रत[4] भी बार[5] है।
आई हँसी कि चाक गरेबान हो गये ॥

कहाँ फिर लज्जतें यह जुस्तुजू-ए-नामुकम्मलकी[6]।
गनीमत है निशाने-जादए-मंज़िल[7] नहीं मिलता ॥

क्या पूछता है तू मेरी बरबादियोंका हाल।
थोड़ी-सी खाक लेके हवामें उड़ाके देख ॥

लगी थी उनके क़दमोंसे क़यामत।
मैं समझा साथ साया जा रहा है ॥

निगाहे-लुत्फ़ नहीं उनकी खैर है वर्ना।
कुछ और हाल हमारा खराब हो जाता ॥

अब क्या करूँ तलाश किसी कारवाँको मैं।
गुम हो गया हूँ पाके तेरे आस्ताँको मैं ॥
तेरे खयालमें आये जो उनसे कह देना।
मेरी समझमें तो कुछ नामावर! नहीं आता ॥

---

[1]नौका; [2]दरियाका किनारा; [3]अस्थायी, क्षणिक, [4]खुशी; [5]बोझ; [6]असम्पूर्ण खोजकी; [7]निर्दिष्ट स्थानकी राह का चिह्न।
'यह स्वर्गस्थ होनेसे पूर्व गज़ल कही थी, यही उनका अंतिम कलाम है।

खुदा मअ़लूम क़ासिद क्या सुनाये, दिल धड़कता है।
यह कहता है कि पैग़ामे-ज़बानी लेके आया हूँ॥

मरनेपै भी न बन्द हुई चश्मे-मुन्तज़िर।
अब इन्तज़ारकी कोई मुद्दत नहीं रही॥

तुम देखलो ख़ुद हाथ मेरे सीनेपै रखकर।
हाले-दिले-बेताब बयाँ हो नहीं सकता॥

जुदा होनेपै दोनोंका यही मअ़मूल ठहरा है।
वोह हमको भूल जाते है, हम उनको याद करते हैं॥

नहीं मअ़लूम किसकी जुस्तुजू थी मैं न कुछ समझा।
तुम्हारी याद आई रातको और बार-बार आई॥

साथ चलने दो मुझे भी रहरवाने-कूए-दोस्त।
कारवाँमें क्या ग़ुबारे-कारवाँ होता नही?

हसरतोंका सिलसिला कब ख़त्म होता है 'जलील'!
खिल गये जब गुल तो पैदा और कलियाँ हो गई॥

शाम होते ही कभी जान-सी आ जाती थी।
अब वही शब है कि मर-मरके जिये जाते हैं॥

यारतक पहुँचा दिया बेताबिये-दिलने मेरे।
इक तड़पमें मंज़िलोंका फ़ासला जाता रहा॥

हर वक़्त है मौतकी दुआ़एँ।
अल्लाह-रे लुत्फ़ ज़िंदगीका॥

माहो-अंजुमपर नज़र पड़ने लगी।
आपको देखे ज़माना हो गया॥

तुम जो याद आये तो सारी काएनात।
एक भूली-सी कहानी हो गई॥

वअ़्देका नाम लबपै न आये पयाम्बर !
कहना फकत यही कि बहुत दिन गुजर गये॥

२८ अप्रैल १९५२ ई०

हाफिज मुहम्मदअली 'हफ़ीज' जौनपुरके रहनेवाले थे। आपको स्कूली जीवनमे ही शाइरीका चस्का लग गया था। १८८३ ई० मे आप व्यवसायके लिए पटना चले गये, उन दिनो वहाँ मुशाइरोकी धूम रहती थी। आपकी भी प्रवृत्ति जाग उठी और मुशाइरोमे शिरकत फर्माने लगे। १८८९ ई० मे आप बाकाएदा 'वसीम' अजीमाबादीके शिष्य हो गये और कुछ अर्सेके बाद 'वसीम' साहबकी अनुमतिसे अमीरमीनाईकी शिष्य मण्डलीमे सम्मिलित हो गये। मृत्यु सन् मअलूम न हो सका। १९११ ई० तक आप जीवित थे।

कलीम राहमे घड़ी-दो-घड़ी रहे होंगे।
यहाँ तो जाके न फिर होश उम्र भर आया॥
किया है दस्ते-तसल्लीने[1] काम मरहमका।
धरा जो हाथ, मिटा दर्द, ज़ख्म भर आया॥

काम छोटोंसे निकलता है बड़ा।
यह सबक़ भी आँखके तिलसे मिला॥

इसियाँके[2] दाग़ मिट गये दिल पाक[3] हो गया।
टपके जो अश्क नामए-अअ़माल[4] धो गया॥

---

[1]सहानुभूतिपूर्ण करकमलोने; [2]पापोके, [3]पवित्र; [4]कर्म-लेखा।

दुश्मन न था शवाब[1] तो नादान दोस्त था।
बदनाम कर गया मुझे, बदनाम हो गया॥
मसरूफ़[2] कब हुए हैं वोह फ़िक्रे-इलाजमें।
जब दाग़े-दिल कलेजेका नासूर हो गया॥

दमे-रुख़सत तो मिल लेते गले आप।
तड़पता छोड़कर मुझको चले आप॥

दिल साफ़ न हो तो क्या सफ़ाई।
इस मैलसे ख़ूब थी लड़ाई॥
है किसीके ख़यालसे बातें।
यूँ पसन्द आ गई है तनहाई॥

आदमीसे जो मोहब्बतमें न हो थोड़ा है।
इतनी-सी जानपै हिम्मत है यह परवानेकी॥
शमअ़ सर धुनती है, रोती है खड़ी बालीपर।
ज़िंदगीसे कहीं मौत अच्छी है परवानेकी॥

जो आबरू रही तरदामनोंकी[3] हश्रमें शेख़!
तो पानी-पानी तेरी पाकदामनी होगी॥

अदा परियोंकी, जोबन हूरका, शोख़ी ग़िज़ालोंकी[4]।
ग़रज माँगेकी हर इक चीज है इन हुस्नवालोंकी॥

मज़ा है जोशे-जवानीमें पारसाईका।
वोह नाख़ुदा है जो किश्ती बचाये तूफ़ाँसे॥

—ख़ुमख़ानए जावेद भाग २

---

[1]यौवन; [2]दत्तचित्त, व्यस्त; [3]मदिरासे भीगे वस्त्रवालोंकी; [4]हरिनोंकी।

'हफ़ीज' जौनपुरी भी अपने कई उस्ताद-भाइयोंकी तरह 'दाग' की रीस करनेवाले थे। उन्होंने लखनवी रगको तर्क करके, मीर, आतिश, जलाल, दाग़-जैसे ख्यातिप्राप्त उस्तादोके रगका अनुसरण किया है और किसी हदतक सफल भी हुए है, चुनाचे फर्माते है—

शेअ़र हर रंगमें कहना है तेरा काम 'हफ़ीज'।
आज हम मान गये, मान गये, मान गये॥
छोड़िए तर्जे-कुहन[1] अब ऐ 'हफ़ीज'!
शाइरीका है मजा ईजादमें[2]॥

'मीर'के अन्दाजपर किसने गजल लिक्खी 'हफीज'!
मुझको जेबा[3] है अगर इस बातका दअ़वा करूँ॥

आपके यहाँ आतिशकी फ़कीराना शानकी झलक भी मिलती है—

अ़जब नहीं है कि हों छोटी ताअ़तें[4] मकबूल[5]।
कनीजें[6] होती हैं शाहोंको[7] खुर्दसाल[8] पसन्द॥
किसीमें है यह सिफ़त? जाऊँ किसके दरपर मैं।
करीम! तेरे सिवा है कोई सवाल पसन्द॥
'हफीज'! जाहो-हशमसे[9] किसीके क्या मतलब?
फ़कीरे-मस्त हूँ, अपना है मुझको माल पसन्द॥

ऐ क़नाअ़त[10] तेरी मुट्ठीमें है उनकी आबरू।
शर्मसे बहरे-दुआ़[11] जो हाथ उठ सकते नहीं॥

---

[1]पुराना ढग; [2]आविष्कारमे; [3]उचित, शोभा देता है; [4]इबादते, उपासनाये; [5]स्वीकृत, पसन्द; [6]बॉदियाँ; [7]बादशाहोको; [8]छोटी आयुकी; [9]प्रतिष्ठा, रोअब, जाहो-जलालसे; [10]सब्र, [11]प्रार्थनाके लिए।

जिहादे-नफ़्सकी[1] सर[2] हो मुहिम[3] तो क्या कहना?
ज़हे नसीब मिले मर्तबा जो ग़ाज़ीका॥
रहके दुनियामें कोई काम न उक़बाका[4] किया।
यूँ सफ़रमे है कि कुछ जादे-सफ़र[5] पास नहीं॥

देखिये तो हर इक जगह है वोह।
ढूँढिये तो कहीं नहीं मिलता॥

इबादत हुई, कुछ न ताअ़त हुई।
फ़क़त अब करमका[6] सहारा रहा॥

अनल्हक़ जो मंसूरने कह दिया।
उधर ही का तो यह इशारा रहा॥

दुनियाका कारख़ाना है इक तिलस्मे-इबरत[7]।
दौलत जहाँ गड़ी थी मुर्दे वहाँ गड़े है॥

कहीं-कहीं जलालका रंग झलकता है—

कोसकर क्या जता गये एहसाँ।
यह दुआ सबको दी नहीं जाती॥
काश इक दिन वोह भूलकर आता।
याद जिसकी कभी नहीं जाती॥

और 'दाग़' की रवानी, तीखापन, शोख़ी और शरारत तो उनके कलामकी ख़ुसूसियत है—

"मेरा दिल आ गया है इक हसींपर।"
यह सुनना था कि वोह बोले "हमींपर"॥

---

[1]इंद्रिय-दमनका संघर्ष; [2]विजय; [3]लड़ाई, [4]परलोकका; [5]मार्ग-व्यय; [6]ईश्वरीय-दयाका; [7]नसीहत पानेकी जगह भय की माया।

यह फ़िक़रे, यह चालें, यह बाते, यह घातें।
तुझे ओ दग़ाबाज़! हम जानते हैं॥

मिली हैं हिम्मतेआली[1] वोह बादानोशोंको[2]।
मिले बिहिश्त तो दे दें यह मैफ़रोशोंको[3]॥

या वोह बिगड़े हुए तेवर मेरे पहचान गये।
या कुछ बात ही ऐसी थी कि झट सान गये॥

कभी था वस्लका इक़रार हमसे।
करे तो आप आँखे चार हमसे॥

तेरा रास्ता शामसे तकते-तकते।
मेरी आस टूटी सहर[4] होते-होते॥

लगाओ दिल किसीसे हज़रते नासेह तो खुल जाये।
मुहब्बत इसको कहते हैं, मुहब्बत ऐसी होती है॥

यह आज आते ही जानेकी तुमने ख़ूब कही।
हँसे न थे कि रुलानेकी तुमने ख़ूब कही॥

दिलके आनेकी यह लिख रखिए शिनाख़्त।
पहले चेहरेकी बहाली देखिए॥

अभीसे सोच-समझ लो, नहीं तो हश्रके दिन।
मेरे सवालका तुमसे जवाब हो कि न हो॥

तुम अपना शबाब, अपनी सूरतको देखो।
मेरी आरज़ू, मुद्दआ कुछ न पूछो॥

---

[1]उदारता; [2]मद्यपोंको, [3]मदिरा-विक्रेताओंको, [4]सुबह।

ख़ैर मुझमें वफ़ा नहीं, न सही।
यह तो फ़र्माइए कि है किसमें?

ज़बाने-ग़ैरसे की गुफ़्तगू हमीं चूके।
वोह कह उठे—"यह शरीफ़ोंकी बोल-चाल नहीं॥"

शेख़ बरसातमें जाकर लबे-जू[१] पीते है।
क़िब्ला-रू[२] बैठते है, करके वज़ू[३] पीते है॥

मेरे शबाबकी[४] तौबापै जा न ऐ वाइज़!
नशेकी बात नहीं एअ़तबारके क़ाबिल॥

अभी जीना पड़ा कुछ दिन हमें और।
टला फिर वअ़दए-बातिल[५]-किसीका॥

मीरका रंग—

क़फ़स क्या नशेमनसे कुछ दूर था।
मगर रह गये बालो-पर देखकर॥

बैठे-बैठे रास्ता क़ासिदका दिनभर देखना।
तारे गिनना शामसे या जानिबे-दर देखना॥

जिस रोज़ रुका नामा-ओ-पैग़ाम तुम्हारा।
मर जायगा ले-लेके कोई नाम तुम्हारा॥

हम कबके मर चुके थे जुदाईमें ऐ अजल!
जीना पड़ा कुछ और तेरे इन्तज़ारमें॥

बावजूद इसके उस्तादकी बोली भी बोलते रहे है—

---

[१]नहर किनारे; [२]क़अ़बेकी तरफ़ मुँह करके; [३]नमाज पढ़नेके लिए मुँह हाथ धोना; [४]जवानीकी; [५]झूठा वअ़दा।

अल्लाहरे उनके फूलों-से गालोंकी ताज़गी।
धूप आईनेकी देखके कुम्हलाये जाते हैं॥

शोख़-चश्मोंको[1] वही ख़ाक हुए पर भी है ज़िद।
घास आहू[2] मेरी तुरबतकी[3] चरे जाते हैं॥

फ़स्ले-गुल आते ही पर लग गये वहशतको मेरी।
तख़्तपर ले उड़ीं परियाँ तेरे दीवानेको॥

कहाँ किसके मातममें यह रात गुज़री।
कलाईके गजरे जो मुरझा रहे हैं॥

चन्द तुलनात्मक—

आतिश— सफ़र है शर्त मुसाफ़िर-नवाज़ बहुतेरे।
हज़ार-हा-शज्र सायादार राहमें हैं॥

हफ़ीज़— साया बहुत मिलेगा दरख़्तोंका राहमें।
घरसे निकलके धूपमें कुछ दूर जलके चल॥

जलाल— पीनेसे काम रखते हैं, रिन्दे-सियाह मस्त।
कम्बल ही तान लेंगे जो अब्रे-करम नहीं॥

हफ़ीज़— फ़क़ीरेमस्त किसी फ़स्लके नहीं पाबन्द।
पिएँगे तानके कम्बल सहाब हो कि न हो॥

दाग़— बात करनी तक न आती थी तुम्हें।
यह हमारे सामनेकी बात है॥

---

[1]चचलनेत्रवालोको; [2]हिरन; [3]क़ब्रकी।

हफीज़— मेरे सामने आज बातें बनाना।
ज़बाँको थी लुकनत यह है बात कलकी॥

हबीब व महबूब
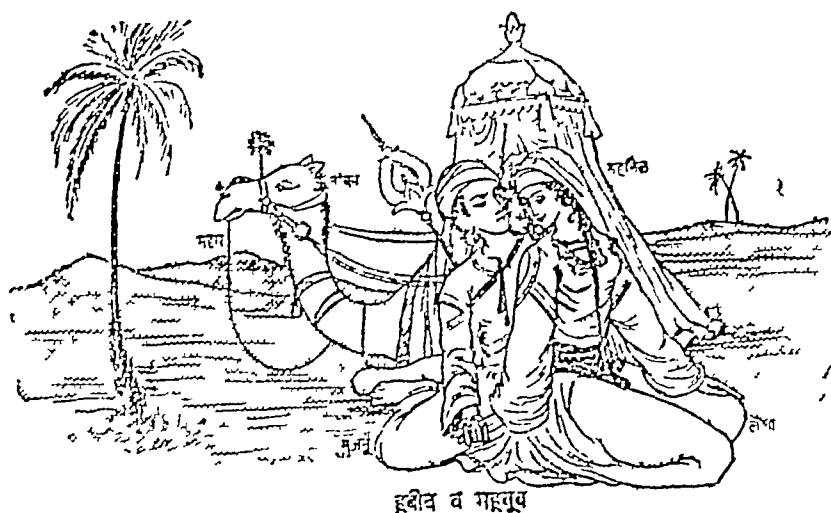
दाग— अपनी तसवीरपै नाज़ाँ हो तुम्हारा क्या है ?
आँख नरगिसकी, देहन गुंचेका, हैरत मेरी॥

हफीज— अदा परियोंकी, सूरत हूरकी, आँखें ग़िज़ालोंकी।
गरज माँगेकी हर इक चीज है इन हुस्नवालोंकी॥

—शेरउलहिन्द पहला भाग

१२ अप्रैल १९५३

पण्डित रतननाथ दर 'सरशार' काश्मीरी ब्राह्मण थे, और १८४० ई० के लगभग लखनऊमे पैदा हुए थे। अभी आप पूरे चार वर्षके भी न हो पाये थे कि आपके पिता प० बैजनाथ दरका साया आपके सरसे उठ गया। रिवाजके अनुसार अरबी-फारसीकी तअलीम पाई। बादमे अंग्रेजी शिक्षा भी प्राप्त की। प्रथम खेरी स्कूलमे शिक्षक नियत हुए।

उन्ही दिनो लखनऊसे 'अवधपच' हास्यरसका पत्र प्रकाशित होने लगा था। 'सरशार' बचपनसे ही शोख और चचल थे। अपनी तबिअतके अनुकूल प्रत्रका प्रकाशन देख आपका दिल भी लिखनेको मचल पडा। फिर क्या था, एक-से-एक निराले मजमून कलमसे निकलने लगे। चन्द माहमे ही आपकी ख्याति इतनी फैली कि मुशी नवलकिशोरने १८७८ ई० मे हास्यरसका 'अवध' पत्र प्रकाशित किया तो उसके सपादकपद पर आपको ही प्रतिष्ठित किया गया।

प्रतिद्वन्द्वी पत्रके प्रकाशित होनेपर 'अवधपच'का धैर्य छूट गया और उसने 'अवध' पर छीटा-कशी शुरू कर दी। सरशार कब दबनेवाले थे वोह दन्दाँ-शिकन जवाबी हमले किये कि कुछ न पूछिए। पढनेवाले लहालोट हो गये।

उन्ही दिनो आपने अपनी अमर कृति 'फसानए-आज़ाद' धारावाही

रूपसे 'अवध' मे प्रारभ कर दी। 'फसानए-आजाद' से पूर्व उर्दूमे परियो, जिनों आदिकी कहानियाँ प्रचलित थी। स्वप्नमे भी ऐसे कथा-साहित्यका किसीको आभास न था। एक दो अक निकलते ही धूम मच गई और समस्त उर्दू-ससार वाह-वाह कर उठा। लोगोकी उत्सुकता यहाँतक बढी कि यह क्रम कई वर्षतक 'अवध' मे 'सरशार' को चलाना पडा। फिर भी लोगोकी यही इच्छा रही कि 'फसानए-आजाद' का सिलसिला बरावर जारी रहे। वादमे यह वृहदाकार उपन्यास वड़े साइज़के ५ भागोमे पुस्तकाकार भी प्रकाशित किया गया।

'फसानए-आजाद' उर्दू-गद्यकी अमूल्य निधि है। 'सरशार'से पहले इस तरहकी रगीन गुलावी उर्दू लिखना कब किसीको नसीव हुआ? तत्कालीन रीति-रिवाज, वेष-भूषा, वोल-चाल, रहन-सहन, खान-पान, हुस्नो-इश्क, वस्लो-हिज्रका ऐसा दिलकश और हू-ब-हू चित्रण किया कि मिसाल नहीं मिलती। उस समयके विलासी, अकर्मण्य और अक़्लसे खारिज नवावो-रईसोकी पतनोन्मुख दशाके, मुसाहवोकी खुशामद-परस्तीके, बेगमातके तौर-तरीक़ोके, आवारा और शोहदोके लुचपनके, बिगड़े दिलोकी तीतर-वटेर-पतगवाजीके मुँह वोलते ऐसे रेखाचित्र खीचे है कि दाद देनेको उपयुक्त शब्द नहीं मिल पा रहे है।

लफ्जोकी तराश, मुहाविरोकी सफाई, उदाहरणों-उपमाओकी छटा, थिरकते शब्द, फडकती हुई भाषा, वयानकी शोखी, अछूते मज़ामीन, हाज़िर जवावीके कमाल, सब पढ़नेसे ही सबध रखते है।

गद्यके साथ-साथ आपको शाइरीका भी शौक था, शाइरीमे आप अमीर मीनाईके शिष्य थे, किन्तु जो कमाल आपको गद्य लिखनेमे था, वह शाइरीमे हासिल नही हुआ। कभी-कभी मनवहलावको शाइरी भी कर लिया करते थे। आप गद्य-लेखकके नाते ही प्रसिद्ध भी है। यहाँ अमीर मीनाईके शिष्यो-के प्रसगमे आपका उल्लेख आवश्यक हुआ, इसीसे वतौर नमूना चन्द अशआर 'खुमखानए-जावेद'से दिये जा रहे है।

जीवनके अंतिम दिनोमे आप लखनऊ छोडकर हैदराबाद दकन चले गये थे। जहाँपर महाराजा किशनप्रसाद 'शाद' प्रधान मन्त्री हैदराबादने आपकी खूब आव-भगत की और सम्मानपूर्वक अपने यहाँ रखा। लेकिन सुरापानकी अधिकताके कारण आप अस्वस्थ होते चले गये और ५५-५६ वर्षकी आयुमे ही १९०३ ई० मे स्वर्गवासी हो गये। आपके निधनपर किसीने यह तारीख़ कही थी—

'सरशार' फ़सीह-ओ-नुक्तापरवर न रहा।
सरमाय-ए-नाज़ अहले जौहर न रहा॥
एअ्जाज़े-क़लमके जिसके सब क़ाएल थे।
वोह नस्रका उर्दूकी पयम्बर न रहा॥

चन्द शेअ्‌र—

सियहबख़्त[1]-सियह-रोज़गार हम भी हैं।
जवाबे-ज़ुल्फ़े-परेशाने-यार[2] हम भी हैं॥

क्या क़हर[3] है कि मुफ़्तमें बुलबुल तो क़ैद हो।
गुलचीं जो फूल तोड़े, उसे कुछ सज़ा न हो॥
उस बुलबुले-असीरकी[4] हालतपै रोइए।
जो फ़स्ले-गुलमें[5] बन्दे-क़फ़ससे[6] रिहा न हो॥

बुतोंके दरपै सबकी जिबिहसाई[7] होती जाती है।
इन्हींके क़ब्ज़ेमें अब तो ख़ुदाई होती जाती है॥

---

[1]अभागे (काले कुदिनवाले); [2]प्रेयसीकी जुल्फे स्याह है तो क्या हुआ, हम भी तो स्याह बख़्त और स्याह रोजगार है, उससे कम किस बातमे है? [3]जुल्म, अन्धेर; [4]कैदी बुलबुलकी; [5]बहारके दिनोंमे, [6]पिंजरेसे; [7]माथा घिसना।

सुना है आज गैर दरबाँने तो कल वोह भी सुन लेंगे।
मेरी बातोंकी अब उनतक रिसाई[1] होती जाती है॥
शिकायतपर कुदूरतकी[2] दिखाते है वोह आईना।
इशारा है कि अब दिलमे सफाई होती जाती है॥

दिल लोट गया सुनते ही गुफ़्तार[3] किसीकी।
सुनता ही नहीं अब वोह मेरा यार किसीकी॥

ऐ शेख़! तुझे खुदाकी सौगन्द।
रिन्दोंकी गर्दमें बाँधले बन्द॥
ले मुँहसे लगाले जामे-बादा।
इक बून्द ही पी, न पी ज़ियादा॥

१६ अप्रैल १९५३

---

[1]पहुँच; [2]द्वेष-भावकी, [3]बातचीत।

पं० जगमोहन नाथ रैना 'शौक़'

[१८६३ ई० ......]

पण्डित जगमोहननाथ रैना साहब 'शौक' काश्मीरी ब्राह्मण है। आप इन्दौरमे जुलाई १८६३ मे उत्पन्न हुए और १८६० ई० से १६२० ई० तक उत्तरी भारतमे डिप्टी कलेक्टर रहे। १६२० के बाद पेन्शन ली और आजकल अपने सुपुत्र चन्द्रमोहन रैना तहसीलदारके साथ शाहजहाँपुरमे रहते है।

आपको शाइरीका शौक १८८४ ई० मे हुआ, और तत्कालीन लखनवी रगके ख्याति प्राप्त उस्ताद 'अमीर मीनाई' से मशविरए-सुखन लेते रहे। लेकिन वह कलाम आपका नष्ट हो गया। १६०१ से १६१५ तक आप कार्याधिक्यके कारण इस ओर ध्यान ही न दे सके। १६१६ से इस ओर पुन प्रवृत्ति हुई। आपका 'पयामे-शौक' गजलोका सकलन हमारे समक्ष है। इसमे १६१६ से १६४० तक कही गई २६६ ग़जले दी गई है।

आपका कलाम लखनवी रगके कघी, चोटी, अँगिया-मिस्सीसे अछूता है फिर भी अमीर मीनाईके स्कूलकी छाप यत्र-तत्र नजर आती है। आपकी भाषा सरल और प्रवाहयुक्त है। इश्किया कलामके साथ तसव्वुफकी चाश्नी भी खूब है। डिप्टी कलेक्टरीकी पेन्शन लेते हुए और तहसीलदारके पिता होते हुए भी १६३० के असहयोग आन्दोलनके समय आपका देश-भक्त हृदय यह कलाम कहनेसे बाज न आया—

जाँगुज़ी[1] कबसे है दिलमें जज़्बए-हुब्बेवतन[2]।
दोस्तो रोज़े-अज़लसे[3] मै वफ़ादारोंमें हूँ॥
बादए-हुब्बेवतन[4] मुझको पिलादे साक़िया।
बिन पिये मुद्दत हुई मैं तेरे मैख़्वारोंमें हूँ॥

यद्यपि आपका १९१६ से १९४० तक कहा हुआ यह कलाम हमें शाइरीके नये दौरमें देना चाहिये था, किन्तु शौक साहब अमीर मीनाईके शिष्य है और कलाम भी उसी युगका है, अत इसी खण्डमें देना उपयुक्त समझा गया।

पड़े हैं मस्त मतवाले न कहते हैं न सुनते हैं।
नई बस्ती नया आ़लम है यह शहरे-ख़मोशाँका[5]॥

ख़ुदाईका है दअ़्वा इन बुतोंको देखिये क्या हो?
इधर भी एक सिज्दा आओ बहरे-इम्तिहाँ[6] कर लें॥

कुजा बुतख़ाना[7]-ओ-कअ़्बा, कुजा ख़ुम ख़ाना[8]-ओ-साक़ी?
कहाँसे 'शौक' शौक़े-दीद लाया है कहाँ मुझको?
रफ़्ता-रफ़्ता ता-दरेजानाँ[9] बैठते-उठते यूँ पहुँचे।
ठोकरें खाते गिरते-पड़ते सुबह-से-ता-शाम चले॥

ख़ूँ-शुदा दिलको जलाते है, जलानेवाले।
आग पानीमें लगाते हैं, लगानेवाले॥

किस क़दर दिलचस्प थी रूदादे[10]-शौक़।
सारे आ़लममें कहावत हो गई॥

---

[1]प्राणोको रुचिकर, हृदयमे छिपी हुई; [2]देश-प्रेमकी भावना; [3]सृष्टिके प्रारम्भसे; [4]देश-प्रेमकी मदिरा, [5]कब्रिस्तानका; [6]परीक्षा-स्वरूप; [7]कहाँ मन्दिर-कअ़्बा; [8]मदिरालय; [9]प्रेयसीके कूचेका; [10]कहानी।

दैरको[1] आओ चले इक ठिकाना है वही।
मिल ही जायेगा वहीं कोई तो रहबर[2] अपना॥

शोअ़लए-शमअ़ने[3] उठ-उठके जलाया आख़िर।
'शौक़' यह हश्र हुआ बज़्ममें परवानेका॥

बुतकदा छोड़ते तो छोड़ दिया।
अब ठिकाना नज़र नहीं आता॥

हम ढूँडने गये तो सनमख़ाना मिल गया।
तुझको तलाशसे भी न वाइज़! ख़ुदा मिला॥

कैसा बुतख़ाना, कहाँका दैर, कैसी ख़ानक़ाह[4]।
जिस जगह सिज्दा किया हमने वोह कअ़बा हो गया॥

ज़रा जी भरके उसको देख लेता मैं दमे-आख़िर।
नज़र आता क़फ़ससे काश मुझको आशियाँ अपना॥

बनाया सिज्दागाहे-हुस्न हमने दैरो-कअ़बेको।
वही जलवा है दोनों जा, इधर आ देखनेवाले॥

किसीका जलवागहेनाज़[5] जब नज़र आया।
सरे-नियाज़[6] वहींपर झुका दिया हमने॥

रह-रहके पूछते हैं वही बाग़बाँसे हम।
ले जायें चार तिनके कहाँ आशियाँसे हम॥

जाते कअ़बेमें बुतपरस्तीको।
यह भी इक फ़र्ज़ था, अदा करते॥

---

[1]मन्दिरको; [2]पथप्रदर्शक; [3]दीपककी लौ ने; [4]दरगाह; [5]सौन्दर्य्य स्थल; [6]नम्रमस्तक।

बुतकदा छोड़नेवाले तो न थे।
ख़ैर मिलती है तो जन्नत ही सही॥

न पूछो हम-सफ़ीराने-चमन[1]! मैं कौन हूँ क्या हूँ।
ग़रज़ जो कुछ हूँ इक साज़े-शिकस्ताकी[2] सदा[3] मैं हूँ॥

सब पूछते हैं, शहरे-ख़मोशाँमें[4] कौन हो?
हैराँ हैं क्या बतायें मुसाफ़िर कहाँके हैं॥

मुल्के-अ़दमको[5] क़ाफ़िले जाते हैं रात दिन।
ज़ाहिर मगर किसीके निशाने-क़दम नहीं॥

रास्ता तो उधरका पूछ लेते।
ऐ मुल्के-अ़दमके जानेवालो॥

इसीको इन्तहाए-इश्क़[6] क्या ऐ 'शौक़'! कहते हैं।
कि मुझको ख़ुद नहीं मअ़लूम क्या है आर्ज़ू[7] मेरी॥

अपनी ही ख़बर नहीं है हमको।
बेकार किसीकी जुस्तुजू[8] है॥

इलाजे-दर्दे-जिगर 'चारासाज़[9]' रहने दे।
मज़ा इसीमें है सोज़ो-गुदाज़[10] रहने दे॥

पता किससे पूछें कि मंज़िल कहाँ है।
कहाँतक मुसाफ़िर भटकता रहेगा॥

कुछ बताते ही नहीं शहरे-ख़मोशाँवाले।
क्यों पसन्द उनको यह उजड़ा अ़दम-आबाद आया॥

अब उसकी जुस्तुजू क्या है न जाने वोह कहाँ पहुँचा?
निशाने-कारवाँ[11] मंज़िल-ब-मंज़िल देखनेवाले॥

---

[1] चमनके साथियो, [2] टूटे हुए वाद्यकी; [3] आवाज़; [4] क़ब्रिस्तानमें; [5] परलोकको; [6] प्रेमकी अन्तिम सीमा; [7] इच्छा; [8] खोज, तलाश; [9] हकीम; [10] दिलमें व्यथा, [11] यात्री दलका पता।

आँखों-आँखोंमे वह क्या कुछ कह गये।
लबपै आते ही गिला जाता रहा॥

इक 'नहीं' ने बात सारी काट दी।
लुत्फ़े-अर्ज़े-मुद्दआ[1] जाता रहा॥

जामे-दिल[2] बादए-उल्फ़तसे[3] भरा रहता है।
वाह क्या जर्फ़[4] है टूटे हुए पैमानेका॥

नातवानी[5] तुझे अब कोई कहाँतक रोये।
जोअ़फ़से[6] नालए-बेताब[7] भी लरजाँ[8] निकला॥

अजलसे पहले गर हुस्ने-अजल मिलता तो मैं कहता।
जरा-सी वहशते-दिल और दीवानेमे रख देना॥

दिलसे पूछो क्या हुआ था, और क्यों ख़ामोश था।
आँख महवेदीद[9] थी इतना मुझे भी होश था॥

दिखाके जलवए-बातिलकी इक झलक ऐ हुस्न!
ख़ुदाके बन्देको नाहक गुनाहगार किया॥

न जाने क्या समझकर मै दरे-मस्जिदतक आया था।
यह किस धोकेमे मैंने भी जिबी आकर यहाँ रख दी॥

हर शैमे तेरा नक़्शा हर गुलमे तेरा जलवा।
इन आँखोंके खुलते ही क्या-क्या नजर आता है॥

रहा जब मुद्दतों दैरो-हरममे।
समझमें आई बहकाया गया हूँ॥

---

[1]अभिलाषा कहनेका आनन्द, [2]हृदय-पात्र; [3]प्रेम मदिरासे, [4]हौसला; [5]निर्बलता; [6]कमजोरीसे, [7]तडपती आहे; [8]काँपती, [9]देखनेमे लीन।

आये थे रोते हुए हम आलमे-ईजादमें[1]।
वाकिफे-राजे-निहाँ[2] थे सिर्फ़ गोयाई[3] न थी।।

नसीमे-सुबहको[4] शिकवा[5] है मेरे नालोंसे।
खमोश गुंचोंको क्यों गुदगुदा दिया मैंने।।

दिल अगर हो मुतमइन[6] तो फिर कोई मुश्किल नहीं।
दूर हो जाती है उलझन खुद सुलझ जानेके बअद।।
इज्तिराबे-दिलकी[7] हालत, हमनशीं[8] मुझसे न पूछ।
इक नया अफ़साना छिड़ जाता है अफसानेके बअद।।

प्रूफ देखते-देखते विदित हुआ कि आपका स्वर्गवास हो चुका है। खेद है कि पत्र लिखनेपर भी आपकी मृत्यु-तारीख हमें आपके सुपुत्रसे मालूम न हो सकी।

दिनको तारे दिखा दिये तूने।
ऐ शबे-इन्तिज़ार[9] क्या कहना।।

१८ जुलाई १९५२

[1]संसारमे; [2]वास्तविकतासे परिचित; [3]बोलनेकी शक्ति; [4]प्रातःकालीन बयार, [5]शिकायत; [6]आश्वस्त; [7]हृदयकी तड़प, बेचैनीकी; [8]साथी, पड़ोसी; [9]प्रतीक्षाकी रुचि।

सैयद अनवर हुसेन 'आर्ज़ूके पूर्वज औरंगजेबके शासनकालमे हिरातसे भारत आये और अजमेरमे रहने लगे। १८५७के विप्लवसे पूर्व वे लखनऊ चले गये और वही स्थायी रूपसे बस गये।

१८ फ़रवरी १८७२ ई० मे 'आर्ज़ू' लखनऊमे उत्पन्न हुए। ५ वर्षकी आयुमे मदर्से भेजे गये। अ़रबी-फ़ारसीकी आपने शिक्षा प्राप्त की।

आपके पिता मीर जाकिरहुसेन 'यास' और बडे भाई यूसुफहुसेन 'कयास' अच्छे शाइरोंमे शुमार किये जाते थे। घरेलू वातावरणका प्रभाव आपपर भी पड़ा, और आप भी चुपके-चुपके शेअ़र कहने लगे। एक रोज अपने एक शिष्यकी गजल आपके पिता 'यास' साहबने आपके वड़े भाई 'कयास'को सशोधनके लिए दी। सशोधनके समय आप भी वड़े भाईके समीप बैठे हुए थे। आप नही चाहते थे कि आपके इस शौकका पता किसीको लगे। मगर आपके मुँहसे यकायक निकल गया "भाईसाहब यह शेअ़र इस तरह कहा जाय तो कैसा रहे ?"

भाईसाहबने आश्चर्यके साथ आपकी ओर देखा और सशोधन इतना पसन्द आया कि शेअ़र उसी तरह बना दिया। शेष अशआ़र भी आपकी सम्मतिपूर्वक सशोधित किये गये। यह सशोधित गज़ल जब आपके पिता 'यास' साहबकी नजरोसे गुज़री और उन्हें वास्तविक बात बतलाई गई

तो वे उसी रोज आपको 'जलाल'[1] के पास ले गये, और उन्हींके चरणोमे छोड़ आये। आर्ज़ू तब १३ वर्षके थे।

उन दिनो शेअरो-सुख़नके चर्चे आम थे। मुहल्ले-मुहल्ले और गली-कूचोमे मासिक मुशाइरे होते रहते थे। नवीन अभ्यासियोके लिए तो यह शिक्षण-शिविरका काम देते थे। सबसे पहले एक मुशाइरेमे जो गजल 'आर्ज़ू' ने पढी उसके दो शेअर ये है—

हमारा ज़िक्र जो ज़ालिमकी अंजुमनमें[2] नहीं।
अभी तो दर्दका पहलू किसी सुख़नमें[3] नहीं॥
शहीदे-नाजकी[4] महशरमें[5] दे गवाही कौन?
कोई लहूका भी धब्बा मेरे क़फ़नमें नहीं॥

उन दिनो उत्साह बढानेवाले भी सर्वत्र मिलते थे। मुशाइरोमे तो किशोर 'आर्ज़ू'को उचित दाद मिली ही। बाहर भी लोग उन्हे प्रोत्साहन देने लगे। एक रोज एक साहबने यह मिसरअ देकर—

"उड़ गई सोनेकी चिड़िया रह गये पर हाथमें।"

फर्माया कि "अगर दस बरसमे भी तुम इसपर मिसरअ लगा दोगे तो मै तुमको शाइर मान लूगा।" 'आर्ज़ू'ने अर्ज़ की—"दस बरसतक जिन्दा रहनेकी उम्मीद यहाँ किसे? यही नही मअलूम कि एक साँसके बअद दूसरी आयेगी भी या नही। मै अभी कोशिश करता हूँ, मुम्किन है कि मिसरअ लग जाये।"

---

[1] 'जलाल' उन दिनो ख्यातिप्राप्त प्रामाणिक उस्तादोमे थे और उनका सर्वत्र तूती बोल रहा था। 'जलाल'का परिचय शेर-ओ-सुख़न भाग १, पृ० ५९३-६०५ मे दिया जा चुका है।

[2] महफिलमे, [3] वार्त्तालापमे; [4] प्रेयसीपर बलिदान हुए प्रेमीकी; [5] ईश्वरके न्यायालयमे।

थोड़ी देरमे ही दूसरा मिसरअ ऐसा चस्पाँ किया कि पहला-बे-मअनी-सा मिसरअ् भी चमक उठा—

दामन उस युसूफ़का[1] आया पुरज़े होकर हाथमे।
उड़ गई सोनेकी चिड़िया रह गये पर हाथमें॥

'आर्ज़ू'की किशोरावस्थामे ऐसी प्रतिभा देखकर विद्वानोने भविष्य-वाणी की कि 'आर्ज़ू' अपने समयके शाइरोमे श्रेष्ठ होगा। अभी ब-मुश्किल १८ वर्षके हुए थे कि उस्तादने अपने सभी शिष्योकी गजलोके सशोधनका भार आपपर डाल दिया, और उस्तादकी मृत्यु (१९०९ ई०) के बअद आप ही को लोगोने उनका जॉनशीन (उत्तराधिकारी) मान लिया।

'आर्ज़ू'के तीन सकलन—१ 'फुगाने आर्ज़ू' २ 'जहाने आर्ज़ू' ३ 'सुरीली-बॉसुरी'—प्रकाशित हो चुके है। 'फुगाने आर्ज़ू'मे उनकी प्रारम्भिक १५ वर्षकी अवस्थासे लेकर ३५ वर्षकी अवस्थातककी २६४ गजलोका सकलन है। १९४५ मे प्रकाशित इसकी द्वितीयावृत्ति हमारे सामने है। 'जहाने आर्ज़ू'मे ३५ वर्षकी अवस्थाके बाद कही हुई १८४ गजले है। १९४६ मे प्रकाशित इसकी द्वितीयावृत्ति हमारे सामने है। 'सुरीली बॉसुरी' खेद है कि हमे प्राप्त न हो सकी। उसमे आपकी ऐसी सरल गजलो और गीतोका सकलन है, जिनके निर्माणमे एक भी अरबी-फारसी शब्दका प्रयोग नही हुआ है। आपने नाटक कम्पनियोके लिए ड्रामे भी काफी लिखे है। भारत-विभाजनके बाद आप पाकिस्तान चले गये थे। वहाँ १९५१ ई० को आपने समाधि पाई।

---

[1]सौन्दर्यमे ओत-प्रोत एक पैगम्बर थे।

कब दस्तेनिगर[1] ग़ैरका है जौहरे-ज़ाती[2]।
ममनून[3] नहीं पंजए-गुल[4] बर्गे-हिनाका[5]॥

दरयूज़ागरे-हिर्स[6] न बन राहेतलबमें[7]।
दिल इश्कसे खाली है तो कासा[8] है गदाका[9]॥

सदमा न सही मेरा, नादिम[10] तो हुए होंगे।
आँखोंमें न हों आँसू, माथेपै अ़रक़[11] होगा॥

आके कासिदने[12] कहा जो, वही अक्सर निकला।
नामावर[13] समझे थे हम, वह तो पयम्बर[14] निकला॥
वाए-ग़ुरबत[15] कि हुए जिसके लिए ख़ाना-ख़राब।
सुनके आवाज़ भी घरसे न वह बाहर निकला॥

नादाँकी दोस्तीमें जीका ज़रर[16] न जाना।
इक काम कर तो बैठे, और हाय कर न जाना॥
नादानियाँ हज़ारों, दानाई इक यही है।
दुनियाको कुछ न जाना और उम्रभर न जाना॥
नादानियोंसे अपनी आफ़तमें फँस गया हूँ।
बेदादगरको[17] मैंने बेदादगर न जाना॥

दिलका जिस शख़्सके पता पाया।
उसको आफ़तमें मुब्तिला[18] पाया॥
नफ़अ़ अपना हो कुछ तो दो नुकसाँ।
मुझको दुनियासे खोके क्या पाया?

---

[1]आश्रित, दूसरोंका मुहताज; [2]निज-गुण; [3]आभारी; [4]फूलोंकी पखड़ी; [5]मेहदीके पत्तोंका; [6]तृष्णाके कारण दर-दरका भिखारी; [7]अभिलाषाके मार्गमें; [8]पात्र; [9]भिक्षुकका; [10]शर्मिन्दा; [11]पसीना; [12]पत्रवाहकने; [13]पत्र ले जानेवाला; [14]ईश्वरीय-सन्देश लानेवाला; [15]हायरी मुसाफिरी; [16]नुकसान; [17]अत्याचारीको; [18]फँसा हुआ।

बेकसीमें[1] भी गुजर ही जायगी।
दिलको मैं और दिल मुझे समझा गया॥

ऐ निगहे-दिलफ़रेब[2]! क्या यह सितम कर दिया?
हौसले जब बढ़ चले रब्तको कम कर दिया॥

आज़ारे-जुदाईसे[3] वाक़िफ़ न था दिल पहले।
जब तल्ख़ हुआ जीना उल्फ़तका मज़ा जाना॥

ऐ 'आर्ज़ू'! इस बाग़मे फूलोके क़फससे[4]।
बेहतर हमें अपना वोह नशेमन[5] कि है ख़सका॥

ख़मोशी मेरी मअ़नीख़ेज़ थी ऐ 'आर्ज़ू'! कितनी?
कि जिसने जैसा चाहा, वैसा अफ़साना बना डाला॥

होके महवेदीद[6] खोये 'आर्ज़ूने होश भी।
कोई पूछे तो यह ओ दीवाने! तूने क्या किया॥

बर्क़ने[7] की हर तरफ़ मेरे नशेमनकी तलाश।
चार तिनकोंकी बिनापर बाग़ सारा जल गया॥

कामयाबी ख़ुदग़रज़की 'आर्ज़ू' बेफ़ैज़[8] है।
वोह हवा क्या जो सुराग़े-कुश्तए-मंजिल[9] हुआ॥

यह मेरी तौबा नतीजा है बुख़्ल साक़ीका[10]।
ज़रा-सी पीके कोई मुँह ख़राब क्या करता?
यही थी ज़ीस्तकी[11] लज़्ज़त यही थी इश्क़की शान।
शिकायते-तपिशो-इज़्तिराब[12] क्या करता॥

---

[1]असहायावस्थामे; [2]हृदयको लुभालेनेवाली निगाह; [3]विरह-रोगसे; [4]पिंजरेसे; [5]घोसला; [6]देखनेमे लीन; [7]बिजलीने; [8]व्यर्थ, बेफायदा; [9]वह पवन किस कामकी, जो मार्गके दीपकको बुझाकर रख दे; [10]साक़ीकी कंजूसीका परिणाम; [11]जीवनकी; [12]विरहज्वर, दाह और बेचैनीकी शिकायत।

मुझे मिटा तो दिया क़ब्ल अ़हदेपीरीके[1]।
मुलूक और दो रोज़ा शबाब[2] क्या करता॥

यह बहरे-इश्कका[3] तूफ़ान और ज़रा-सा दिल।
जहाज़ उलट गये लाखों हुबाब[4] क्या करता॥

पड़े न होते जो ग़फ़लतके 'आर्ज़ू'! पर्दे।
ख़ुदा ही जाने यह जोशेशबाब क्या करता!

एक शौके-दिल इधर है, लाख अन्देशे उधर।
सोचकर कुछ ख़तमें लिखना फिर मिटाना ख़ुद-ब-ख़ुद॥

हौसले फिर बढ गये टूटा हुआ दिल जुड़ गया।
उफ यह ज़ालिम मुस्करा देना ख़फा होनेके बअद॥

अपना जो बनाना है तो ओ दुश्मने-ईमाँ!
इतना भी न कर ज़ुल्म कि आजाये ख़ुदा यअ़द॥

ऐसी हसरत ही से बाज़ आना है ख़ूब।
जो मुझे मरग़ूब[5] उनको नापसन्द॥

ऐसी अँधेरी रातके सद्के हज़ार चाँद।
शर्मानेवाला जिसमें सरक आये डरके पास॥

उफरे बेदोद पढ़के सारा ख़त।
कह दिया यह नहीं हमारा ख़त॥

हिम्मते-कोताहसे[6] दिल तंग ज़िन्दाँ[7] बन गया।
वर्ना था घरसे सिवा इस घरका हर गोशा[8] वसीअ़[9]॥

---

[1]वृद्ध होनेसे पूर्व, [2]यौवन, [3]प्रेम-नदीका; [4]बुलबुला; [5]प्रिय; [6]हिम्मतोंकी कमीके कारण; [7]तंग कारागृह, सकीर्ण हृदय; [8]कोना; [9]विशाल।

छोड़ दे दो गज़ ज़मीं, है दफ़न जिसमें इक गरीब।
है तेरी मश्के-ख़िरामेनाज़को[1] दुनिया वसीअ़[2]॥
है यह सब क़िस्मतकी कोताही[3] वगर्ना 'आर्ज़ू'।
बढ़के दामाने-तलबसे[4] हाथ है उसका वसीअ़॥

जादह[5]-ओ-मंज़िल[6] जहाँ दोनों है एक।
उस जगहसे है मेरा सहरा[7] शुरुअ़॥
वक़्त थोड़ा और यह भी तै नहीं।
किस जगहसे कीजिए क़िस्सा शुरुअ़॥
देखा ललचाई निगाहोंका मआल[8]।
'आर्ज़ू' लो हो गया पर्दा शुरुअ़॥

जो मेरी सरगुज़िश्त[9] सुनते है।
सरको दो-दो पहर वह धुनते है॥
क़ैदमें माजराए-तनहाई[10]।
आप कहते है, आप सुनते है॥
आशियाँ कबतक और ख़ुद कबतक।
वोह सिड़ी है जो तिनके चुनते है॥

झूठे वअ़देका भी यक़ीन आ जाये।
कुछ वोह इन तेवरोंसे कहते है॥

मुझ ग़मज़दाके पाससे सब रोके उठे है।
हाँ आप इक ऐसे है कि ख़ुश होके उठे है॥

---

[1]अठखेलियोंके अभ्यासके लिए; [2]विस्तीर्ण, [3]कमी, हीनता, [4]अभिलाषीके आँचलसे; [5]-[6]मार्ग और पडाव; [7]जगल, [8]परिणाम; [9]आत्म-कहानी, [10]एकाकी जीवनकी बात।

मुँह उठके तो सब धोते हैं ऐ दीदए-ख़ूंबार[1]!
बिस्तरसे हम उठे हैं तो मुँह धोके उठे हैं॥

आरामके थे साथी क्या-क्या जब वक़्त पड़ा तो कोई नहीं।
सब दोस्त हैं अपने मतलबके दुनियामें किसीका कोई नहीं॥

न तौबा[2] की है बज़ाहिर न छुपके पी है शराब।
बरी हूँ दागेरियासे[3] वह पाकदामाँ[4] हूँ॥

तुम हो कि एक तर्ज़े-सितमपर नहीं क़रार।
हम हैं कि पाबन्द हरेक इम्तेहाँके हैं॥
हों सर्फ़[5] तीलियोंमें क़फ़सके[6] तो ख़ौफ़ है।
तिनके जो मेरे उजड़े हुए आशियाँके हैं॥

ख़ुदावन्दा! एवज़ मिन्नतपज़ीरीके[7] वोह जौहर दे।
ख़ुद अपने दर्दका इस दुःखभरी दुनियामें दरमाँ[8] हूँ॥

इस आ़लमे-इम्काँमें[9] क्या है जो है नामुम्किन।
ढूंड़ो तो मिले उनक़ा,[10] चाहो तो ख़ुदा मुम्किन॥

पर्दा जो दुईका उठ जाये फिर दो न रहें अफ़साने यह[11]।
धोका है यह नामे-दैरोहरम, बुत एक ही है बुतख़ाने दो॥

लाता नहीं पैग़ाम कोई इसपै यह है हाल।
क़ासिदको दिया करता हूँ इनआ़म हमेशा॥

---

[1]रक्त रोनेवाले नेत्र; [2]प्रतिज्ञा; [3]दिखावटी धार्मिकतासे; [4]पवित्र; [5-6]पिंजरा बनानेके तीलियों केलिएकाम आये; [7]प्रार्थना एव स्तुति की स्वीकृति के बजाय; [8]इलाज; [9]संसारमे; [10]एक पक्षी जिसका अस्तित्व नहीं; [11]दीवानमे शब्द यहाँ 'दो' है। मालूम होता है किताबत गलतीसे दो जगह 'दो' हो गया है। हमने दूसरे 'दो'को 'यह' बना देनेकी बेअदबी की है।

सितमसे शमअ़ सरापा बयानेराज़[1] हुई।
कटी ज़बान तो कुछ और भी दराज़[2] हुई॥

फैल गई बालोंमें सफ़ेदी चौंक ज़रा करवट तो बदल।
शामसे ग़ाफ़िल सोनेवाले देख तो कितनी रात रही॥

खुद चले आओ या बुला भेजो।
रात अकेले बसर नहीं होती॥
हम खुदाईमें हो गये रुसवा।
मगर उनको ख़बर नहीं होती॥
किसी नादाँसे जो कही जाये।
बात वह मुख़्तसर नहीं होती॥
जबसे अश्कोंने राज़[3] खोल दिया।
चार अपनी नज़र नहीं होती॥
आग दिलमें लगी न हो जबतक।
आँख अश्कोंसे तर नहीं होती॥

क़फ़ससे ठोकरें खाती नज़र जिस नख़्लतक[4] पहुँची।
उसीपर लेके इक तिनका बिनाए-आशियाँ रख दी॥
सुकूनेदिल[5] नहीं जिस वक़्तसे इस बज़्ममें[6] आये।
ज़रा-सी चीज़ घबराहटमें क्या जानें कहाँ रख दी॥
बुरा हो इस मुहब्बतका हुए बरबाद घर लाखों।
वहींसे आग लग उट्ठी यह चिन्गारी जहाँ रख दी॥
किया फिर तुमने रोता देखकर दीदारका[7] वअ़दा।
फिर एक बहते हुए पानीमें बुनियादे-मकाँ[8] रख दी॥

---

[1]प्रेम-भेद बतानेको उद्यत; [2]बड़ी लम्बी; [3]प्रेम-भेद; [4]वृक्षतक; [5]हृदयको चैन; [6]महफिलमे, [7]सूरत दिखानेका; [8]मकानकी नींव।

दरेदिल[1] 'आर्ज़ू' दरवाजए-कअ़बेसे बेहतर था।
यह ओ ग़फलतके मारे! तूने पेशानी कहाँ रख दी?

शरअमें अपनी वाइजो! हुक्म है मैकशीके दो।
"दे जो कोई हलाल है, खुद जो पिये हराम है"॥

अब मुझको फाएदा हो दवा-ओ-दुआ़से क्या?
वोह मुँहपै कह गये—"यह मरज ला-इलाज है"॥

इज़्ज़त कुछ और शै है, नुमाइश कुछ और चीज।
यूँ तो यहाँ ख़रोसके[2] सरपर भी ताज है॥

मेरे ग़मने होश उनके भी खो दिये।
वोह समझाते-समझाते ख़ुद रो दिये॥

इक जाम-ए-बोसीदा हस्ती[3] और रूह[4] अज़लसे[5] सौदाई[6]।
यह तंग लिबास न यूँ चढ़ता खुद फाडके हमने पहना है॥

हिचकीमें जो उखड़ी साँस अपनी घबराके पुकारी याद उसकी—
"फिर जोड़ ले यह टूटा रिश्ता इक झटका और भी सहना है"॥

नतीजा एक ही निकला कि थी क़िस्मतमें नाकामी।
कभी कुछ कहके पछताये कभी चुप रहके पछताये॥

रहने दो तसल्ली तुम अपनी, दुख झेल चुके दिल टूट गया।
अब हाथ मलेसे होता क्या, जब हाथसे नावक[7] छूट गया॥

दो तुन्द[8] हवाओंपर बुनियाद है तूफ़ाँकी।
या तुम न हसीं होते या मै न जवाँ होता॥

लुत्फे-बहार कुछ नहीं, गो है वही बहार।
दिल क्या उजड़ गया कि जमाना उजड़ गया॥

---

[1]हृदय-द्वार, [2]मुर्गके, [3]शरीररूपी गली-सडी पोशाक, [4]आत्मा; [5]प्रारम्भसे; [6]दीवानी, [7]तीर, [8]तेज।

दफ़अ़तन[1] तर्के-मुहब्बतमें[2] भी रुसवाई[3] है।
उलझे दामनको छुड़ाते नहीं झटका देकर॥

दिलकी कशिशको[4] अब भी, गुलशनसे है तअ़ल्लुक़[5]।
कुछ पत्तियाँ क़फ़स तक उड़-उड़के आ रही हैं॥

इम्तेहाँ इश्क़में मंज़ूर है, ग़मख़्वारोंका।
इक ज़रा होशमें आजाऊँ तो दीवाना बनूँ॥

रोनेपै मेरे हँसते क्या हो? बेसमझे न दीवाना जानो?
दिल किससे लगाया है तुमने? तुम दर्द किसीका क्या जानो?

बातोंसे तसल्ली थी दिलको, वअ़देपै भरोसा हो न सका।
फिर हो गई वैसी ही हालत, जब पाससे वोह समझाके उठे॥

शबनमके[6] आँसुओंपर क्या हँस रहे हैं गुंचे[7]!
उनसे तो कोई पूछे कबतक हँसा करेंगे?

क्या सोज़े-मुहब्बतने[8] जफ़ा[9] ज़ब्तसे[10] की है।
दर[11] बन्द है और चारों तरफ़ आग लगी है॥

ताज़े वोह फिरसे हो गये, ग़म जो फ़लकने थे दिये।
जिसने कि हँसके बात की, हम भी पलटके रो दिये॥

कहके यह और कुछ कहा न गया—
कि "हमें आपसे शिकायत है"॥

खींच लाया था यह किस आ़लमसे किस आ़लममें होश?
अपना हाल अपने लिए जैसे कोई अफ़साना था॥

---

[1]यकायक, एकदम; [2]प्रेम-त्यागमें, [3]बदनामी; [4]आकर्षणको; [5]सम्बन्ध; [6]ओसके; [7]कलियाँ; [8]प्रेम-अग्निने; [9]आफत, बदी; [10]सन्तोष, सब्रमे, [11]द्वार।

वस्लका[1] ख़्वाहिशमन्द बने क्यों, हुस्नका सच्चा परवाना।
दिलसे लगी है लाग तो इकदिन, ख़ुद शोअ़ला[2] बन जायेगा॥

इश्क़पर भी छा गई रअ़नाइयाँ[3]।
उफ़ तेरी तोड़ी हुई अँगड़ाइयाँ॥

वोह तो कुछ मुसकराके हो गये चुप।
एक उलझनमें पड़ गया हूँ मैं॥

उलफ़त भी अ़जब शै है, जो दर्द वही दरमाँ[4]।
पानीपै नहीं गिरता, जलता हुआ परवाना[5]॥

कुछ सहारा चाहती है आ़शिक़ीकी जिन्दगी।
बेनियाज़ी[6] तेरे सदक़े[7] नाज़[8] बेजा ही सही॥

मुझे रहनेको वोह मिला है घर कि जो आफ़तोंकी है रहगुज़र[9]।
तुम्हें ख़ाकसारोंकी[10] क्या ख़बर, कभी नीचे उतरे हो बामसे[11]?

जो तेरे अमलका चराग़[12] है, वही बेमहल[13] है तो दाग़ है।
न जलाके सुबह्से बैठ उसे, न बुझाके सो उसे शामसे॥

जमा हुए है कुछ हसीं, गिर्द मेरे मजारके।
फूल कहाँसे खिल गये दिन तो न थे बहारके॥

छीना था छलकता हुआ जाम, उसने झटककर।
क्या मुफ़्तका धब्बा मेरे दामनमें लगा है॥

(
तजरुबे सब हेच हैं, कानून सब बेकार हैं।
हर जमाना इक नया पैग़ाम लेकर आये है॥
)

---

[1]मिलनका; [2]अंगारा; [3]मोहिनी; [4]इलाज; [5]पतंगा; [6]बेपरवाही, उपेक्षा; [7]न्योछावर; [8]सौन्दर्य-अभिमान; [9]मार्ग; [10]धूलमें मिले हुओंकी, सेवकोंकी; [11]ऊपरसे, कोठेसे, [12]सदाचार-दीप; [13]अव्यवस्थित।

धूप सह लेना है अच्छा, बारे-एहसाँ कौन उठाये ?
छाँव इक गिरती हुई दीवार है मेरे लिए ॥

जो देखेगा रोते मुझे, तुमको हँसते।
मेरी बात छोड़ो तुम्हें क्या कहेगा ?
आँख उसने फिराके रुत पलट दी।
हँसते हुए फूल रो रहे हैं॥

बैठे तकते तो हैं, कनअँखियोंसे।
यह नहीं पूछते, खड़े क्यों हो ?

चुभते हुए देखा है न काँटा, न कोई फाँस।
ऐ साँस बता दे, यह है काहेकी खटक-सी॥

यह है तेरे घायलका अब साँस लेना।
छुरी इक कलेजेमें जैसे चुभो ली॥

किसने भीगे हुए बालोंसे यह झटका पानी।
झूमकर आई घटा टूटके बरसा पानी॥

आये दिन अच्छा नहीं एक बावलेको छेड़ना।
मर मिटेगा 'आर्ज़ू' जिस दिन उसे झक आगई॥

अपने लिए मतवाली है कैसी, यह न पूछो।
वोह आँख कि जो दूसरोंकी नींद उड़ा दे॥

रहते न तुम अलग-थलग हम न गुजरते आपसे।
चुपके-से कहनेवाली बात कहनी पड़ी पुकारके॥

पूछी थी छेड़कर जो बात, कहने न दी वोह बात भी।
तुमने खटकती फाँसको छोड़ दिया उभारके॥

तारा टूटते देखा सबने, यह नहीं देखा एकने भी।
किसकी आँखसे आँसू टपका, किसका सहारा टूटा है॥

चुप एक पहेली है, सोचोगे तो बूझोगे।
तुमसे वही कहना है, जो सबसे छुपाना है॥

बता देगी भेद 'आर्ज़ू'! नींद उड़कर।
कि जो रात छोटी थी, अब क्यों बड़ी है॥

दो घड़ीको दे-दे कोई अपनी आखोंकी जो नींद।
पाँव फैला दूँ गलीमें तेरी सोनेके लिए॥

मिट भी सकती थी कहीं, वे रोये छातीकी जलन।
आगको पिघला लिया फाहा भिगोनेके लिए॥

—फ़ुग़ाने-आर्ज़ूसे

आगई मंज़िले-मुराद[1], बाँगेदराको[2] भूल जा।
ज़ाते-ख़ुदामें यूँ हो महव[3], नामे-ख़ुदाको भूल जा॥*

सबकी पसन्द अलग-अलग, सबके जुदा-जुदा मज़ाक़।
जिसपै कि मर मिटा कोई, अब उस अदाको भूल जा॥

ज़ख़्मसे कम नहीं है, उसकी हँसी।
जिसको रोना भी अब नहीं आता॥

---

[1]अभिलषित यात्रा-स्थान; [2]घण्टीकी आवाज; [3]लीन।

*होश किसीका भी न रख जलवागहे-नियाज़में[1]।
बल्कि ख़ुदाको भूल जा सिज्द-ए-बेनियाज़में[2]॥

—'असग़र' गोंडवी

---

[1]ईश्वरके प्रासादमें, प्रेम-मन्दिरमें; [2]भक्तिकी तल्लीनतामें।

क्यों किसी रहबरसे[1] पूछूँ अपनी मंज़िलका पता।
मौजे-दरिया[2] ख़ुद लगा लेती है साहिलका[3] पता॥
राहबर रहज़न[4] न बन जाये कहीं, इस सोचमें।
चुप खड़ा हूँ भूलकर रस्तेमें मंज़िलका पता॥*
मैं चुप आसरा लगाये, और उन्हें यही बहाना—
"कि यह मुँहसे कुछ तो कहता, जो उमीदवार होता"॥†

इश्क़मे सौ बार नाला आके लबतक रह गया।
बात अकेलेकी नहीं थी दो दिलोंका राज़ था॥
वोह कहते है "मैं तेरे घर मेहमाँ था"।
यह सच है तो ऐ बेख़ुदी[5] मैं कहाँ था?
नैरंगियाँ चमनकी तिलिस्मे-फ़रेब हैं।
उस जा भटक रहा हूँ जहाँ आशियाँ न था॥
पाबन्दियोंने खोल दी आँखें तो समझे हम।
आकर क़फ़समें बस गये थे आशियाँ न था॥
जो दर्द मिटते-मिटते भी मुझको मिटा गया।
क्या उसका पूछना कि कहाँ था कहाँ न था॥
अबतक वह चारासाज़िए[6] चश्मेकरम[7] है याद।
फाहा वहाँ लगाते थे, ज़रका[8] जहाँ न था॥

---

[1]पथ-प्रदर्शकसे; [2]दरियाकी लहरे; [3]दरियाके किनारेका; [4]लुटेरा; [5]आत्म-लीनता; [6-7]चिकित्सककी कृपा; [8]चोट, घाव।

*छोड़ा न रश्कने कि तेरे घरका नाम लूँ।
हरइकसे पूछता हूँ कि जाऊँ किधरको मैं॥—ग़ालिब

†कहते हैं जब रही न मुझे ताक़ते-सुख़न—
"जानूँ किसीके दिलकी मैं क्योंकर कहे बग़ैर?"—ग़ालिब

हमको इतना भी रिहाईकी ख़ुशीमें नहीं होश।
टूटी जंजीर कि ख़ुद पाँव हमारा टूटा॥

पहले बाला-ए-ज़मीं[1] थे आ बसे[2] अब जेरेख़ाक[3]।
तूलने मीआ़दके बदला है, ज़िन्दाँ[4] दूसरा॥

उढ़ा दी बादियए-ग़ुरबतमें[5] चादर गर्द ने आकर।
मिला आख़िर वही लिखवाके लाये थे कफ़न जैसा॥

जो कोई हद हो मुअ़य्यन[6] तो शौक़, शौक़ नहीं।
वोह कामयाब है जो कामयाब हो न सका॥

बुरी सरिश्त[7] न बदली जगह बदलनेसे।
चमनमें आके भी काँटा गुलाब हो न सका॥

अ़दू[8] न थी मगर अन्धी ज़रूर थी बिजली।
कि देखे फूल न पत्ते न आशियाँ देखा॥

ज़मानेसे नाज़ अपने उठवानेवाले।
मुहब्बतका बोझ आप उठाना पड़ेगा॥
सजा तो बजा है, यह अन्धेर कैसा?
ख़ताको भी जो ख़ुद बताना पड़ेगा॥
मुहब्बत नहीं, आगसे खेलना है।
लगाना पड़ेगा, बुझाना पड़ेगा॥

ख़ुदारा! न दो बदगुमानीका मौक़अ़।
कहलवाके औरोंसे पैग़ाम अपना॥
हविसकार[9] आ़शिक भी ऐसा है जैसे—
वह बन्दा कि रखले ख़ुदा नाम अपना॥

---

[1] ज़मीनके ऊपर, [2] बस गये; [3] ज़मीनके नीचे; [4] क़ैदख़ाना; [5] विदेशकी काननमें, [6] निश्चित, [7] आदत, चलन; [8] शत्रु; [9] कामलोलुप।

पलक झपकी कि मंजर[1] खत्म था बर्क़े-तजल्लीका[2]।
जरा-सी नेअ़मते-दीद[3], उसका भी यूँ रायगाँ[4] जाना॥
समझ ले शमअ़से ऐ हमनशीं[5]! आदाबे-ग़मख़्वारी[6]।
जबाँ कटवानेवालेका है मन्सब,[7] राजदाँ[8] होना॥

अल्लाह, अल्लाह हुस्नकी यह पर्दादारी देखिए।
भेद जिसने खोलना चाहा, वोह दीवाना हुआ॥

मेहमाँ-नवाज[9], बादियए-गुरबतकी[10] ख़ाक थी।
लाशा[11] किसी ग़रीबका उरियाँ[12] नहीं रहा॥
आँसू बना जिबींका अ़रक़[13] जब्ते-अश्कसे।
बदला भी ग़मने भेस तो पिनहाँ[14] नहीं रहा॥

जबाँका फ़र्क़ हक़ीक़त बदल नहीं सकता।
यह कोई बात नहीं, बुत कहा ख़ुदा न कहा॥

क़रीबे-सुब्ह यह कहकर अजलने[15] आँख झपका दी—
"अरे-ओ हिज्रके मारे तुझे अबतक न ख़्वाब आया"॥
दिल उस आवाजके सदके, यह मुश्किलमें कहा किसने—
"न घबराना, न घबराना, मैं आया और शिताब[16] आया"॥
कोई क़त्ताल[17]-सूरत देख ली मरने लगे उसपर।
यह मौत इक ख़ुशनुमा पर्देमें आई या शबाब[18] आया॥*

---

[1]दृश्य; [2]सौन्दर्यरूपी बिजलीका; [3]देखनेकी अनुकम्पा; [4]व्यर्थ; [5]पड़ौसी, साथी; [6]सहानुभूतिकी रीति; [7]ओहदा; [8]भेदी; [9]अतिथिका सत्कार करनेवाली; [10]विदेशके अरण्यकी, यात्रा-मार्गकी; [11]शव; [12]नग्न, बेकफन; [13]मस्तकका पसीना; [14]छिपा हुआ; [15]मृत्युने, [16]शीघ्र; [17]घायलकरनेवाली; [18]यौवन।

*सँभाला होश तो मरने लगे हसीनोंपर।
हमें तो मौत ही आई शबाबके बदले॥—अज्ञात

मुअिम्मा[1] बन गया राजे-मुहब्बत[2] 'आर्ज़ू' यूँ ही।
वोह मुझसे पूछते झिझके, मुझे कहते हिजाब आया॥*

जिसमें कैफ़े-ग़म[3] नहीं, बाज आये ऐसे दिलसे हम।
यह भी देना है कोई? मै तो न दी, सागर दिया!
'आर्ज़ू' इकरोज ढा देता मुझे मेरा ही ज़ोर।
यह भी उसकी कारसाजी दिलमें जिसने डर दिया॥†

एक दिलमें ग़म ज़माने भरका, क्योंकर भर दिया।
खूए-हमदर्दीने[4] कूज़ेमें समुन्दर भर दिया॥
आँख थी साक़ीकी जानिब, हाथमें जामे-तेही[5]।
मै तो किस्मतमें कहाँ? अश्कोंने साग़र भर दिया॥

साथ हर हिचकीके लबपर उनका नाम आया तो क्या?
जो समझ ही में न आये वह पयाम[6] आया तो क्या?
मैसे हूँ महरूम अब भी, गो शरीके-दौर हूँ।
पाए-साक़ी-से जो ठोकर खाके जाम आया तो क्या?

आशिक़ीने मत पलट दी हुस्नने खोये हवास।
उसने जितनी दुश्मनी की और प्यारा हो गया॥

---

[1]पहेली; [2]प्रेम-भेद; [3]ग़मका मतवालापन; [4]हमदर्दीकी आदतने, [5]खाली गिलास; [6]सन्देश।

*ग़लत फ़हमियोंमें जवानी गुज़ारी।
कभी वोह न समझे, कभी हम न समझे॥
—सबा अकबराबादी

†मेरी हविसको ऐशे-दो आलम ही था क़ुबूल।
तेरा करम कि तूने दिया दिल दुखा हुआ॥
—फ़ानी बदायनी

जवाब देनेके बदले वोह शक्ल देखते है।
यह क्या हुआ मेरे चेहरेको, अर्ज़े-हालके बअ़द ॥*

अदाशिनास निगाहोंने ऐसा कुछ देखा।
जवाबकी न तमन्ना रही सवालके बअ़द ॥

नातवाँ[1] बीमारेग़म[2], उसपर थपेड़े मौतके।
बुझ गया आख़िर चिराग़े-सुब्ह, लहरानेके बअ़द ॥†

आफ़तमें पड़े दर्दके इज़हारसे हम और।
याद आ गये भूले हुए कुछ उसको सितम और॥
हम 'आर्ज़ू' इस शानसे पहुँचे सरे-मंज़िल।
ख़ुद लग़ज़िशे-पा[3] ले गई दो-चार क़दम और॥

माँग जो खोके आन-बान न माँग।
क़त्ल हो जा मगर अमान[4] न माँग॥

आलूदगीये-गर्देतमअ़से[5] ख़ुदा बचाये।
जाते हैं झाड़ते हुए दामन चमनसे हम॥

---

[1]कमजोर; [2]प्रेम रोगी; [3]पाँवोकी लड़खड़ाहट; [4]जीवन-रक्षा; [5]अभिलाषारूपी धूलकी लिप्ततासे।

*तेरे सवालपर चुप है इसे ग़नीमत जान।
कहीं जवाब न दे-दे कि मैं नही सुनता॥
—शाद अज़ीमाबादी

†जब उखड़ी साँस तो बीमारेगम सँभल न सका।
हवा थी तेज़ चिराग़े-हयात जल न सका॥
चिराग़े-हुस्न तेरा और मेरा चिराग़े-दिल।
वह जलके बुझ न सका और यह बुझके जल न सका॥
—नानक लखनवी

मिली है इसलिए दो-चार दिनकी आज़ादी।
कि सर्फ़[1] करता है देखें यह इख़्तियार कहाँ?

'आर्ज़ू'! हो चुकी सौ मर्तबा दुनिया बेदार[2]।
और मैं सोई हुई तकदीर लिये बैठा हूँ॥

मेरी नाकामियाँ रोती हैं खुद मेरी जवानीपर।
हूँ एक जामे-तमन्ना[3] और मए-इशरतसे[4] खाली हूँ॥

उनकी बेजा भी सुनूँ, आप बजा भी न कहूँ।
आख़िर इन्सान हूँ मैं भी, कोई दीवार नहीं॥

सुरूरे-शबका[5] नहीं, सुब्हका ख़ुमार[6] हूँ मैं।
निकल चुकी है जो गुलशनसे वोह बहार हूँ मैं॥
करमपै[7] तेरे नजर की तो ढह गया वह गुरूर।
बढ़ा था नाज़[8] कि हदका गुनाहगार[9] हूँ मैं॥

कौन दीवाना कहे इश्कके दीवानेको।
गिरते देखा न बुझी शमअ़पै परवानेको॥[10]

---

[1]ख़र्च; [2]जाग्रत्, [3]अभिलाषारूपी गिलास; [4]ऐश्वर्यरूपी मदिरासे; [5]रात्रिकालीन नशा; [6]नशेका उतार; [7]कृपाओंपर; [8]घमंड; [9]पापी।

[10]बुझी हुई शमअ़पर परवाना तो नहीं जलता, परन्तु भारत-ललनाएँ अपने मृतक पतियोंके साथ जलती रही हैं। शेख़ सअ़दीने भारतकी सैर करते हुए लिखा था—

चूँ ज़ने-हिन्दी कसे दर आशिकी मर्दाना नेस्त।
सोख़्तन बर शमअ़े मुर्दन कारे हर परवाना नेस्त॥

प्रेममें हिन्दकी स्त्रियोंसे बढ़कर कोई नहीं। परवाना तो जलती हुई शमअ़पर ही जलता है, परन्तु भारतककी नारियाँ बुझे हुए चिराग़ (मृतक पति) पर जल मरती हैं।

उनको तो हर इक बातपर हँस देनेकी आदत।
क्या निकला ज़बाँसे हम इस उलझनमें पड़े हैं॥

न यह कहो "तेरी तकदीरका हूँ मैं मालिक"।
बनो जो चाहो खुदाके लिए, खुदा न बनो॥
अगर है जुर्मेमुहब्बत तो खैर यूँ ही सही।
मगर तुम्हीं कहीं इस जुर्मकी सज़ा न बनो॥
मिले भी कुछ तो है बेहतर तलबसे इस्तगना[1]।
बनो तो शाह[2] बनो, 'आर्ज़ू'! गदा[3] न बनो॥

दैरो-हरम[4] हुए तो क्या, है ये मकान बेमकीं[5]।
सर तो वहाँ झुकेगा जो तेरा हरीमे-नाज़[6] हो॥

क़ैद मज़बूत नहीं, दामो-कफ़सकी[7] सैयाद!
रख वोह बर्ताव कि दिल माइले-परवाज़[8] न हो॥

रुकके लिया जो दम तो फिर, खाम[9] है शौके-जुस्तुजू[10]।
जिसकी मददका हो यकीं, उसका भी आसरा न देख॥

हर दानेपे इक क़तरा, हर कतरेपै इक दाना।
इस हाथमे सुमरन है, उस हाथमें पैमाना॥
कुछ तंगिये-जिन्दाँसे[11] दिलतंग नही वहशी[12]।
फिरता है निगाहोंमे, वीराना-ही-वीराना॥

फ़स्ले-गुल बागमें दिलकश नहीं सैयाद! अभी।
पर है बेज़ोर न कर क़ैदसे आज़ाद अभी॥

---

[1]निस्पृहता; [2]बादशाह, [3]भिक्षुक; [4]मन्दिर-मस्जिद; [5]रिक्त (ईश्वरसे शून्य); [6]स्थान (प्रेयसीका मकान); [7]जाल और पिंजरेका बंधन; [8]उडनेको उद्यत; [9]व्यर्थ, [10]तलाशका शौक, [11]कारा-गृहकी संकीर्णतासे; [12]पागल।

हुस्ने-सीरतपर[1] नज़रकर, हुस्ने-सूरतको[2] न देख।
आदमी है नामका गर ख़ू[3] नहीं इन्सानकी॥
ध्यान आता है कि टूटा था, गलतफ़हमीमें अ़हद[4]।
यादगार इक है तो धुँधली-सी मगर किस शानकी॥

उठ खड़ा हो तो बगोला है, जो बैठे तो गुबार[5]।
ख़ाक होकर भी वही शान है, दीवानेकी॥
'आर्ज़ू'! ख़त्म हक़ीक़तपै हुआ दौरे-मजाज़।
डाली कअबेकी बिना, आड़से बुतख़ानेकी॥

क्यों शौक़े-तलबसे बाज़ रहें, अंजामेमुहब्बत क्यों सोचें?
इक दिलका बहलावा तो है, सब दर्द-सरी बेकार सही॥

सबब बग़ैर था हर जब्र क़ाबिले-इलज़ाम।
बहाना ढूँढ लिया, देके इख़्तियार मुझे॥
किया है आग लगानेको बन्द दरवाज़ा।
कि होंठ सीके बनाया है राज़दार मुझे॥

ज़ाहिद! वोह उन आँखोंकी टपकती हुई मस्ती।
पत्थरमें गढ़ा डालके पैमाना बना दे॥

यह तो बात उनके समझनेकी है ऐ ग़ैरते-इश्क़!
हम कहें क्यों? न उठेगा ग़मे-हिज्राँ हमसे॥

नालाँ ख़ुद अपने दिलसे हूँ दरबाँका[6] क्या कहूँ!
जैसे बिठा गया है, कोई पाँव तोड़के॥
क्या जाने टपके आँखसे किस वक़्त ख़ूने-दिल।
आँसू गिरा रहा हूँ जगह छोड़-छोड़के॥

---

[1]सुन्दर स्वभावपर; [2]सुन्दर मुखको; [3]स्वभाव, आदत; [4]प्रतिज्ञा; [5]धूल; [6]पहरेदारको।

भले दिन आये तो आज़ार[1] बन गया आराम।
क़फ़सके तिनके भी काम आ गये नशेमनके॥
मिटाके फिर तो बनानेपर अब नहीं क़ाबू।
वोह सर झुकाये खड़े हैं, क़रीब मदफ़नके[2]॥*

हमें इक रोज यह भी देखना है 'आर्जू' मरकर।
कि ख़ुश होता है कौन और कौन मातमदार होता है॥

क्यों उसकी यह दिलजोई[3], दिल जिसका दुखाना है।
ठहराके निशानेको क्या तीर लगाना है?
अन्दाज़े-तग़ाफुलपर[4] दिल चोट तो खा बैठा।
अब उनकी निशानीको, उनसे भी छुपाना है॥
कम-ताक़तिये-नाला अश्कोसे मदद ले-ले।
बेरब्त कहानीमें, पैवन्द लगाना है॥

किसी जा गर्दमें मोती, कहीं है गर्द मोतीमें।
तेरी राहोंको ऐ तकदीर! हमने खूब छाना है॥

ग़ुबार उठता है यह कहता हुआ गोरेग़रीबाँसे[5]—
"जहाँमें एक दिन सबका यही अंजाम होना है"॥

फिर 'आर्जू'को दरसे[6] उठा, पहले यह बता।
आख़िर ग़रीब जाये कहाँ और कहाँ रहे?

---

[1]सकट; [2]कब्रके; [3]दिलकी बात पूछना, दिलको ख़ुश करनेवाली बाते; [4]उपेक्षाके अन्दाज़पर; [5]कब्रिस्तानसे; [6]दरवाजेसे।

*मिलाकर ख़ाकमें भी हाय! शर्म उनकी नहीं जाती।
निगह नीची किये वोह सामने मदफनके बैठे हैं॥
—असीर लखनवी

था शौक़े-दीद[1] ताबे-अ़दावे-बज़्मेनाज़[2]।
यअ़नी बचा-बचाके नज़र देखते रहे॥
अहले-क़फ़सका[3] ख़ौफ़-ज़दा[4] शौक़ क्या कहूँ?
सूए-चमन[5] समेटके पर देखते रहे॥

पाँवको लग़ज़िश[6] है, लबपर शोरे-नोशा-नोश[7] है।
जितनी पैमानेमें अब बाक़ी है, उतना होश है॥

इश्क़ दिलमें शोअ़लाफ़ग़न[8], चश्मे-तरहे[9] अश्क-रेज़[10]।
एक ही शै[11] और कहीं पानी किसी जा आग है॥

आँख जिस दिनसे लगी है, आँख लगना जुर्म है।
उसकी वैसी ही सज़ा भी होगी जैसा जुर्म है॥

वे राहनुमा डाला है, जिस राहपै दिलने।
इतनी है ख़तरनाक कि रहज़न[12] भी नहीं है॥

ग़म दिया है कि मसर्रत[13] दी है, सबमें इक तरहकी लज़्ज़त दी है।
हँस न इतना कि ख़ुशी ग़म हो जाये, शै हरइक हस्ब ज़रूरत दी है॥

अलअमाँ मेरे ग़मकदेकी शाम।
सुर्ख़ शोअ़ला सियाह हो जाये॥*
पाक निकले वहाँसे कौन जहाँ।
उज़्रख़्वाही गुनाह हो जाये॥

---

[1]देखनेका चाव; [2]महफिलके अदब-कायदेका ख़याल रखते हुए; [3]कैदियोंका; [4]भयमिश्रित; [5]उपवनकी ओर; [6]थिरकन, कम्पन; [7]शोरो-गुल; [8]दहकता हुआ; [9]भीगे नेत्र है; [10]आँसू बहानेवाली; [11]वस्तु; [12]लुटेरा; [13]ख़ुशी।

*मेरे गमख़ानए-मुसीबतकी।
चाँदनी भी सियाह होती है॥—'जिगर' मुरादाबादी

इन्तहाए-करम[1] वोह है कि जहाँ।
बेगुनाही गुनाह हो जाये॥

जाँचकर ताबे-नज़रको[2] रूएजानाँ[3] देखिए।
देख सकिए कौंदती बिजली तो हाँ-हाँ देखिए॥

—जहाने आर्ज़ूसे
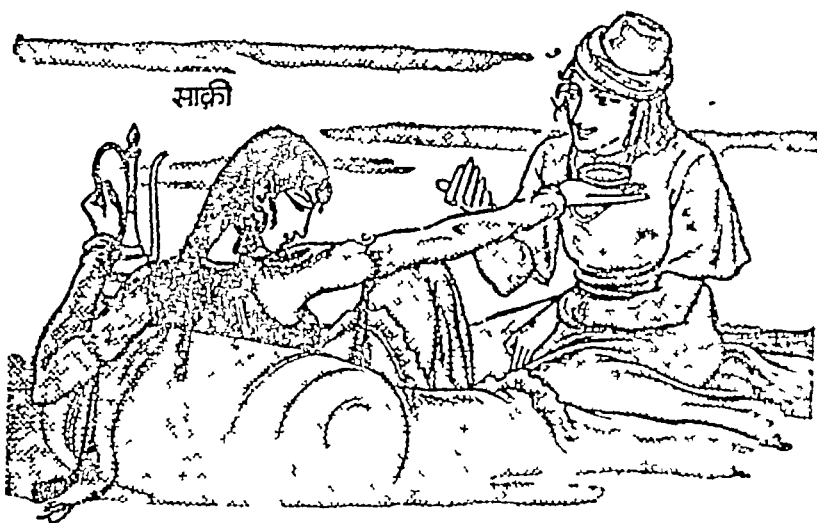
साक़िया! चश्मेकरमका[4] वक़्त होगा कौन-सा?
जामे-दिल[5] ख़ाली है, जामे-ज़िन्दगी[6] लबरेज़[7] है॥

१५ जुलाई १९४९

---

[1]कृपाकी हद; [2]देखनेकी शक्तिको; [3]प्रेयसीकी सूरत; [4]कृपा-दृष्टिका; [5]हृदय-पात्र; [6]जीवन-पात्र; [7]पूर्ण, भरा हुआ।
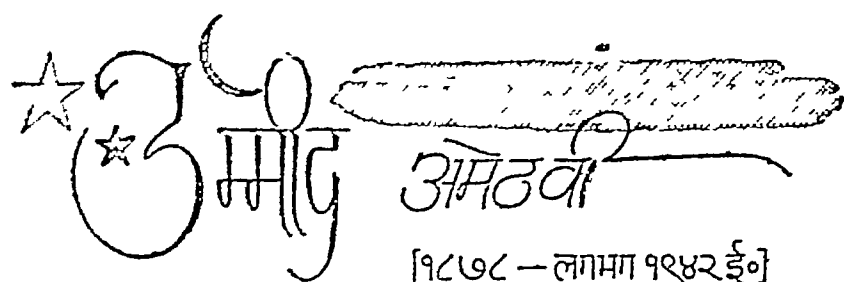
मुहम्मदअली 'उम्मीद' मुलतानपुर ज़िलेके उमेठगढ़ क़स्बेमे ३ फरवरी १८७८ ई० में पैदा हुए। आप १८९३ मे लखनऊ चले गये। फारसी-उर्दू दोनोमे शेअर कहते है। आप उर्दू शाइरीमे 'जलालके' शिष्य थे। मगर आप फारसीके क्लिष्ट और अव्यवहारिक शब्दोको उर्दूमे ठूँसनेका प्रयत्न करते थे। जो कि उस्तादको नागवार गुज़रता था। एक दिन उस्तादने फ़र्माया—"हज़रत! आप वही मिर्ज़ा नौशा (गालिब) की तरह झाड़-झंकाड़में चले जा रहे है। मुझे आपका यह असलूबे-बयान पसन्द नहीं।"

परिणामस्वरूप आप उर्दूका कलाम भी अपने फारसी उस्तादको दिखाने लगे।

आपके स्वय पसन्दीदा अशआर 'निगार' जनवरी-फ़रवरी १९४१ में प्रकाशित हुए थे, उनमे-से चन्द हम यहाँ साभार उद्धृत कर रहे हैं—

अब तो ऐसा भी नहीं कोई जो उनसे पूछे—
"आपने खोके मुझे, ग़ैरको पाया कैसा"?

आपसे रूठके 'उम्मीद' कहाँ जायेंगे?
वे बुलाये अभी जाते है मनाना कैसा?

मजबूरियाँ भरी है मेरे इख़्तियारमें।
और इख़्तियार कहते हैं किस इख़्तियारको?

कोई हमसे न हम किसीसे ख़ुश।
कौन हो ऐसी ज़िन्दगीसे ख़ुश॥

क्या हम अपनी ख़ुशीसे नाख़ुश हैं।
तुम हो क्यों मेरी नाख़ुशीसे ख़ुश?

ख़ुशनसीबीका उसकी क्या कहना।
तुम हो दुनियामें जिस किसीसे ख़ुश॥

वअ़दा कलका है, लेकिन ऐ 'उम्मीद'!
तुम नज़र आते हो अभीसे ख़ुश॥

'उम्मीद'! रो दिये तो क्या लुत्फ़ दिल्लगीका?
इतना ही गुदगुदाओ आये हँसी जहाँ तक॥

रोई शबनम, गुल हँसा, गुंचा खिला, मेरे लिए।
जिससे जो कुछ हो सका उसने किया मेरे लिए॥
आ़म है यूँ तो मेरी बरबादियोंका वाक़ेआ़।
वह भी तो कह दें कि कोई मर मिटा मेरे लिए॥
हँसनेवाले रो दिये और रोनेवाले हँस पड़े।
दिलके हाथों जो न होना था हुआ मेरे लिए॥

उस निगाहे-लुत्फ़ ही से क्यों न चलकर पूछिए।
कौन-सी है वोह ख़ता जो अ़फ़ूके[1] क़ाबिल नहीं?

मुहब्बतमें हर चन्द जीका ज़ियाँ[2] है।
मगर मैं यह बातें कहाँ देखता हूँ॥

---

[1]क्षमा योग्य; [2]घाटा, नुक़सान।

यही तेरी जन्नत है? ऐ तेरी क़ुदरत!
कहाँकी बहारें कहाँ देखता हूँ?

नाम सुनकर ख़ुशीका ऐ 'उम्मीद'!
रंज होता है अब ख़ुशी कैसी?

फ़र्ते-सुजूदे-ग़ैरसे[1] खस्ता है जब वोह संगेदर।
अपनी जिबीने-शौकको दाग़ कोई लगाये क्यों?

वफ़ा[2]ओ-महरो[3]-मुरव्वत,[4] सदाक़तो[5]-इन्साफ़[6]।
खबर नहीं कि यह बातें हैं किस ज़मानेकी॥
वोह ज़ूद[7]-रंज है और ज़ूद-रंज भी कैसा?
जो रूठ जाये तो जुरअत न हो मनाने की॥

ख़ुशी तो उनकी ख़ुशी है कि जिससे सब ख़ुश हैं।
हमारे दिलकी ख़ुशी क्या? हुई-हुई न हुई॥
यह और बात है रंजीदा हो गये 'उम्मीद'।
तेरी तरफ़से तो खातिरमें कुछ कमी न हुई॥

कलतक जो पूछता तो इक बात भी थी ज़ालिम!
अब किसको पूछता है? 'उम्मीद' अब कहाँ है?

वोह आख़िर रो दिये क्यों? मैंने तो इतना ही पूछा था—
"कभी 'उम्मीद' को हँसते हुए भी तुमने देखा है?"

अरे सूदो ज़ियाँ[8] देखा नहीं जाता मुहब्बतमें।
यह सौदा और सौदा है यह दुनिया और दुनिया है॥

---

[1]दूसरोंके अधिक सिज्दा करनेसे, [2]नेकी, भलाई; [3]रहम, दया; [4]लिहाज; [5]सचाई; [6]न्याय; [7]शीघ्र नाराज़ होनेवाला; [8]लाभ-हानि।

अजीब बात है 'उम्मीद' दिलकी बातोंका।
न एअतबार उन्हें है, न एअतबार मुझे॥

कलतक तो उनके वअदए-फ़रदाका[1] उज्र था।
अब आज क्या अजलसे[2] बहाना करेंगे हम॥
समझे न थे कि एक दिन ऐसा भी आयगा।
हँसनेपर अपने आप ही रोया करेंगे हम॥

यह लुत्फ़े-ज़ौक़े-असीरी[3] नहीं कि ऐ सैयाद!
क़फ़समें आग लगा दें हम आशियाँके लिए॥

ज़िंदगी है अपने क़ब्ज़ेमें न अपने बसमें मौत।
आदमी मजबूर है और किस क़दर मजबूर है॥

नाज़[4] है यह कि मुहब्बतमें बड़ा सब्र किया।
पूछिए, सब्र न करते तो भला करते क्या?

दिलकी उलझन न पूछिए 'उम्मीद'।
हम न ख़िल्वतके[5] हैं न महफ़िलके॥

अफ़साने मैं भी रहमते-हक़के[6] सुना किया।
इक गोशेमें[7] अलग मै-ओ-सागर लिये हुए॥

आप कल गुज़रे हैं जिस राहगुज़रसे[8] पहले।
वहीं बैठा है कोई जाके सहरसे[9] पहले॥

---

[1]भविष्यका वअदा; [2]मृत्युसे; [3]क़ैद होनेके शौकका आनन्द; [4]घमण्ड; [5]एकान्तके; [6]ईश्वरीय कृपाके; [7]कोनेमें; [8]मार्गसे; [9]सुबहसे।

फिर इन्तिज़ारकी लज़्ज़त नसीब हो कि न हो।
ख़ुदा करे कोई ख़तका जवाब रहने दे॥

तसव्वुरातकी दुनिया है अपने मतलबकी।
कुछ और दिन अभी रुख़पर[1] नक़ाब[2] रहने दे॥

ख़याल और किसीका अगर नहीं, न सही।
तुझे तो चैनसे तेरा शबाब[3] रहने दे॥

कहनेके लिए ख़िज़्रो-मसीहाकी भी सुनलो।
लेकिन ग़मे-हस्तीकी दवा और ही कुछ है॥

हर हविसनाकको[4] सौदा[5] है नज़रबाज़ीका[6]।
आपका जलवा अब ऐसा भी न अरज़ाँ[7] हो जाय॥

जो देखें तो तड़पें न देखें तो तरसें।
यह सूरत है देखें जो सूरत किसीकी॥

जो बस हो तो ख़ुदको भी ख़ुदसे छुपायें।
हैं ऐसे भी शर्मो-हया करनेवाले॥

टूटा तो तिलस्म 'उम्मीद'! उन शर्मगीं आँखोंका।
आप अपने ही को देखा ज़ालिमने मगर देखा॥

हँसते हैं यूँ ख़ूबिये-तक़दीरपर अपनी।
तू और कुछ ऐ रहबरे-कामिल न समझना॥

तूर हो या कलीम हो मुझको तो है यह देखना।
इश्क़ो-हविसका[8] फ़ैसला तेरी नज़रने क्या किया?

---

[1]मुखपर; [2]पर्दा; [3]यौवन; [4]कामुकको, [5]पागलपन, लालसा; [6]घूरनेका; [7]सस्ता, आमफहम; [8]प्रेम और कामुकताका।

पहले तो मुझको ग़म यह था, आहमें कुछ असर नहीं।
अब तो मुझे यह रंज है, हाय असरने क्या किया॥

हुबाबो-मौजको[1] भी देखकर आँखे नहीं खुलतीं।
ग़ज़बकी नींदमें डूबा हुआ है नाख़ुदा[2] मेरा॥

क़ैसके[3] हुस्ने-तसव्वुरकी[4] करे तसदीक़[5] कौन?
वर्ना अब महमिलमें[6] कोई है, न जब महमिलमें था॥

कहाँका हश्र किसकी दाद इक ख़्वाबे-परीशाँ था।
खुली जब आँख तो अपना ही हाथ अपना गरेबाँ था॥
मुझे मेरे तसव्वुरने[7] बड़ा धोका दिया वर्ना।
किसीका मेज़बाँ[8] था मैं न कोई मेरा मेहमाँ था॥
ख़ुदा मअ़लूम क्या वअ़दा है उस जाने-तग़ाफ़ुलसे[9]।
कि अब जीना बड़ा मुश्किल है मर जाना तो आसाँ था॥

अल्लाहरे फ़रेबे-तमन्ना[10] कि बार-हा[11]।
अपने ही ख़तको लेके पढ़ा नामाबरसे[12] आप॥

'उम्मीद'! पासे-चश्मे-मुरव्वतका[13] हो बुरा।
दिल ले गये वोह कह न सके कुछ जबाँसे हम॥

परस्तिशके[14] क़ाबिल है ज़र्रा-ज़र्रा मेरी हस्तीका।
मगर यह बात कहनेकी नहीं शेख़ो-बरहमनमें॥
बतायें क्यों निकलवाये गये 'उम्मीद' कअ़बेसे!
वहाँ भी कोई शै पोशीदा थी हज़रतके दामनमें॥

---

[1]बुलबुले और लहरोंको; [2]मल्लाह; [3]मजनूँके; [4]सुरुचिपूर्ण चिन्तनकी; [5]प्रमाणित; [6]पर्देमे, [7]ख़यालने; [8]आतिथ्य सत्कार करनेवाला; [9]उपेक्षा भावी प्रेयसीसे; [10]अभिलाषाओंका फरेब; [11]बार-बार; [12]डाकियेसे, [13]आँखोंकी लिहाजके ख़यालका; [14]पूजने योग्य।

मरहूने-इल्तिफ़ाते-मसीहा[१] नहीं हूँ मैं।
आख़िर बुरा ही क्या है जो अच्छा नहीं हूँ मैं॥

बिगड़ बैठे अगर 'उम्मीद' उस जाने-तमन्नासे।
तअज्जुब क्या कभी ऐसा भी होता है मुहब्बतमें॥

हिसाब क्या करमे-बेहिसाबका[२] तेरे।
हमारी हसरते-दिलका[३] अगर शुमार नहीं॥

कहीं वोह शोख न सुनता हो चुप रहो 'उम्मीद'!
जफ़ाशेआर[४] तो है गो वफ़ाशेआर[५] नहीं॥

न साफ इकरारका पहलू न साफ़ इंकारकी सूरत।
बड़े धोके दिये तेरे हिजाबे-नीम हाइलने[६]॥
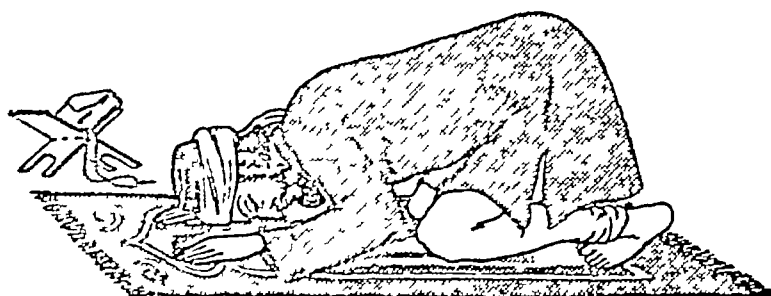
आबिद

२८ फरवरी १९५२

गुनाहसे[७] हूँ ख़िजिल[८] लेकिन, कभी तेरी तरह ज़ाहिद!
ख़ुदा बनकर नहीं की है ख़ुदाकी बंदगी मैंने॥

---

[१] ईसाके एहसानका आभारी; [२] अनगिनत कृपाओं-उपकारोका; [३] दिलकी इच्छायें असख्य है; [४] जालिम, जुल्म जुल्म करना तो जानता है; [५] नेकी, भलाई करना नहीं जानता; [६] अर्द्ध लज्जाके आजानेने; [७] भूलोंसे, पापोंसे, [८] शर्मिन्दा।
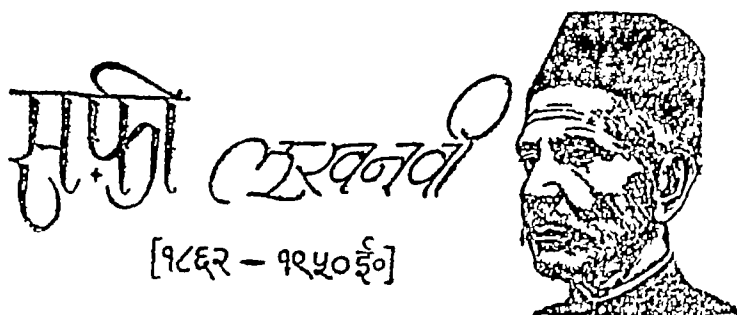
सैयद अलीनकी 'सफ़ी' ३ जनवरी १८६२ ई० को लखनऊमे उत्पन्न हुए। आपके पिता सैयद फ़ज़लहुसेन अवधके अतिम बादशाहके विश्वास-पात्रोमे थे। आपके पूर्वज शम्सउद्दीन अल्तमश बादशाहके शासन-कालमे ग़ज़नीसे आकर दिल्लीमे आबाद हुए, फिर वहाँसे फ़ैज़ाबाद चले गये। ५ वर्षकी अवस्थासे अरबी-फारसीका अभ्यास आरभ हुआ। मैट्रिकतक अग्रेज़ी पढ़ी। हकीमीकी ओर भी रुचि थी, अतः उसका भी अध्ययन किया। कुछ दिनों अग्रेज़ीके अध्यापक रहे। जून १८८३ मे दीवानी अदालतमे नौकरी की और १९२२ ई० मे पेशन लेकर साहित्य-सेवामे लीन रहे। १९५० ई० मे आपका निधन हो गया।

जामेआ मिल्लियाके वार्षिकोत्सवोपर हुए मुशाइरोमे दो बार आपके मुखारविन्दसे कलाम सुननेका सौभाग्य हमे भी प्राप्त हुआ है। यह सभवतः १९३५ और १९३६ की बात है। आपकी शरीफ़ाना वजअ-कितअ और बोलने-चालने, उठने-बैठनेका ढग इतना आकर्षक था कि आज भी वह दृश्य ज्यों-का-त्यों आँखोके सामने फिर रहा है। आपके हमराह आपके छोटे भाई 'ज़रीफ़' लखनवी भी थे। जिनकी मिज़ाहिया गजलोने दर्शकोको हँसाते-हँसाते लोट-पोट कर दिया था।

सैयद 'सफी'का शाइरीमे तो उस्तादाना मर्तबा है ही, वे मानवताके नाते भी बहुत ऊँचे थे। १८७५ ई० से उन्होने शाइरी प्रारभ की थी।

वे किसीके शिष्य नही थे। स्वय अभ्यासद्वारा ही वे इतने वढ़े थे। 'अजीज'-जैसे ख्याति प्राप्त उस्ताद आपके ही शिष्य थे।

आपका एक गजलोका, दो नज्मोके दीवान छप चुके हे। आपकी क़ौमी नज्मोने बहुत ख्याति पाई, और उसके एवजमे मुस्लिम-समाजने आपको 'लिसान-उल-क़ौम' (कौमकी जवान) की उपाधि भेट की। आप लखनऊकी साहित्यिक सभा 'वहारे-अदव' के एक अर्सेतक प्रधान रहे। आपने फ़ारसीमे भी कलाम कहा है। लखनऊके उस्तादोमे आपका मर्तबा बहुत ऊँचा था। आपके कितने ही शिष्योके दीवान प्रकाशित हो चुके है।

आपने लखनवी रगको नया आबो-रग दिया और उसे कृत्रिमतासे हटाकर वास्तविकताके समीप लाये। आपके कलाममे रगीनी, भाषामे लोच और भावोमे प्रफुल्लता पाई जाती है। आपके कलामसे यह अनुमान लगाना कि यह किसी लखनवीका कलाम है, मुश्किल है।

आपने पहले-पहल यह शेअर कहा—

निकले हैं तीन नाम मिरे तिफ़्ले-अश्कके[1]।
नूरे-निगाह[2], लख्ते-जिगर[3], यादगारे-दिल[4]॥

यहाँ चन्द गजलोके अशआर दिये जा रहे है—

कैसी-कैसी सूरतें ख्वाबे-परीशाँ[5] हो गई?
सामने आँखोंके आईं और पिन्हाँ[6] हो गई॥

जोर ही क्या था जफाए-बाग़बाँ[7] देखा किये।
आशियाँ[8] उजड़ा किया, हम नातवाँ[9] देखा किये॥

---

[1]आँसूरूपी पुत्रके; [2]नेत्र प्रकाश; [3]कलेजेका टुकडा (पुत्र); [4]हृदयकी स्मृति; [5]वुरे स्वप्न; [6]ओझल, [7]मालीके अत्याचार, [8]घोंसला, नीड़, [9]दुर्वल, अशक्त।

कुछ रेजाहाए-शीशए-दिल[1] भी है फ़र्शे-राह[2]।
रखिए कदम जरा दमे-रफ़्तार[3] देखकर॥

फ़लकतक[4] हमने माना आहमे क़ूवत[5] है जानेकी।
मगर फ़ुर्सत कहाँ इस ग़मकदेमें[6] सर उठानेकी॥

जिंदगी मुझ पर-शिकस्ताकी[7], असीरे-दामकी[8]?
यूँ तो मेरी चीज है, लेकिन मेरे किस कामकी?

जिन्दगीका माहसल[9] क्या है बताऊँ मैं 'सफ़ी'!
इन्तिजार उसका अभी तक जो बला आई नही॥

कस्-मपुरसीका[10] वोह आलम कि इलाही तौबा!
दम भी निकले तो नहीं पूछनेवाला कोई॥

मआले-जिंदगी[11] यह थी कि सुनकर वाक़िआ मेरा।
रहा कुछ देर सन्नाटा-सा ऐवाने-सितमगरमें[12]॥

मैकदेसे चला गया मस्जिद।
अरे तौबा! यह क्या किया मैंने?

जो क़िस्मतमे जलना ही था, शमअ़ होते।
कि पूछे तो जाते किसी अंजुमनमें॥

बज्मे-साक़ीमें जरा हुश्यार बैठें आज मस्त।
कल यहीं पहलूसे मेरा शीशए-दिल उठ गया॥

न खामोश रहना मेरे हम-सफीरो[13]!
जब आवाज दूँ तुम भी आवाज देना॥

---

[1]दिल-रूपी शीशेके कण, [2]मार्गमे, [3]चलते समय, [4]आस्मानतक; [5]बल, शक्ति; [6]दुःखी स्थानमे; [7]पर टूटे हुए की, [8]जालमे फँसे हुएकी; [9]उद्देश्य; [10]अपेक्षाका; असहायावस्थाका, [9]जीवन-परिणाम; [12]अत्याचारीके महलमे, [13]एकही प्रकारकी बोली वालो, साथियो।

ग़ज़ल उसने छेड़ी मुझे साज़ देना।
ज़रा उम्रे-रफ़्ताको[1] आवाज़ देना॥
—आजकल फ़रवरी १९४६

तू भी मायूसे-तमन्ना[2] मेरे अन्दाज़में है।
जब तो यह दर्द पपीहे तेरी आवाज़में है॥

तालिबे-दीदपर आँच आये यह मंज़ूर नहीं।
दिलमें है वर्ना वोह बिजली जो सरे-तूर नहीं॥

दिलसे नज़दीक है, आँखोंसे भी कुछ दूर नहीं।
मगर इसपर भी मुलाक़ात उन्हें मंज़ूर नहीं॥

छेड़दे साज़े-अनल्हक़[3] जो दुबारा सरे-दार।
बज़्मे-रिन्दाँमें[4] अब ऐसा कोई मन्सूर[5] नहीं॥

हमको परवाना-ओ-बुलबुलकी रक़ाबतसे[6] ग़रज़?
गुलमें वह रंग नहीं, शमअ़में वोह नूर नहीं॥

कभी "कैसे हो सफी?" पूछ तो लेता कोई।
दिल-देहीका[7] मगर इस शहरमें दस्तूर नहीं॥

दर्दे-आग़ाज़े-मुहब्बतका[8] अब अंजाम नहीं।
ज़िन्दगी क्या है, अगर मौतका पैग़ाम नहीं॥

नज़र हुस्न-आश्ना[9] ठहरी वोह ख़िलवत[10] हो कि जलवत[11] हो।
जब आँखें बन्द कीं तसवीरे-जानाँ[12] देख लेते हैं॥

वोह ख़ुद सरसे क़दमतक डूब जाते हैं पसीनेमें।
मेरी महफ़िलमें जो उनको, पशेमाँ[13] देख लेते हैं॥

---

[1]बीती उम्रको; [2]निराश; [3]मैं ही सत्य (ईश्वर) हूँ का तान; [4]मद्यपोंमें, [5]सूफ़ी (देखे हमारा शब्दकोष); [6]प्रतिस्पर्द्धासे; [7]अर्थात् हृदयकी बात पूछनेका; [8]प्रारंभिक प्रेमके दर्दका; [9]सौन्दर्य्य पारखी; [10]एकान्त; [11]मजमअ़, महफ़िल, [12]प्रियतमाका चित्र; [13]शर्मिन्दा।

'सफ़ी' रहते हैं जानो-दिल फ़िदा[1] करनेपै आमादा[2]।
मगर उस वक़्त, जब इन्सॉको इन्साँ देख लेते हैं॥

सुनेगा कौन? सुनी जायेगी 'सफ़ी' किससे।
तुम्हारी राम-कहानी यह जिंदगी भरकी॥

इन्सानको उसने ख़ाकसे पाक[3] किया।
जी-हौसला-ओ-साहेबे-इद्राक[4] किया॥
पहले तो बनाया उसे गंजीनए-इल्म[5]।
फिर गंजको[6] पोशीदा-तहे-ख़ाक[7] किया॥

—शाइर मई-जून १९४५ ई०

क्योंकर यहाँ तुम्हारी तबीअत बहल गई।
इतनी ही जिंदगी हमें ऐ ख़िज्र[8]! खल गई॥
जब एक रोज जानका जाना जरूर है।
फिर फ़र्क़ क्या वह आज गई, ख़्वाह कल गई॥

जब दम निकल गया ख़लिशे-ग़म[9] भी मिट गई।
दिलमें चुभी थी फाँस जो दिलसे निकल गई॥

फूल ऐ दश्ते-जुनूँ[10]! कौन चुने दामनमें।
तेरे काँटे ही बहुत हैं मेरे बिस्तरके लिए॥

इन्सान मुसीबतमें हिम्मत न अगर हारे।
आसाँसे वह आसाँ है, मुश्किलसे जो मुश्किल है॥
दुनियाकी तरक़्क़ी है, इस राजसे[11] वाबस्ता[12]।
"इन्सानके क़ब्जेमें सब कुछ है अगर दिल है॥"

---

[1]न्योछावर, प्रदान; [2]प्रस्तुत, हाज़िर; [3]पवित्र, उच्च; [4]साहसी एवं विवेकी; [5]ज्ञान-भंडार; [6]भंडारको; [7]कब्रमें गाड़ दिया; [8]एक पैगम्बर; [9]दुःखोंकी फाँस; [10]उन्मादका वन; [11]भेदसे; [12]संबंधित।

कुछ भी न हैफ कर सके हस्तीए-मुस्तआरमें[1]।
हो गई ख़त्म जिन्दगी मौतके इन्तिज़ारमें॥

खुलते ही आँख इश्कने हुस्ने-अदापै[2] जान दी।
आई क़ज़ा[3] शबाबमें[4], देखी खिज़ाँ बहारमें!

भूले हुए जहे-नसीब[5] अब भी जो याद आ गये।
फ़ातिहाको[6] आये कब, जब ख़ाक नहीं मज़ारमें॥

हमारी आँखसे जब देखिए आँसू निकलते हैं।
जिबींकी[7] हर शिकनसे[8] दर्दके पहलू निकलते हैं॥

ख़मोश रहने दो ग़मज़दोंको, कुरेदकर हाले-दिल न पूछो।
तुम्हारी ही सब इनायतें हैं, मगर तुम्हें कुछ ख़बर नहीं है॥
उन्हींकी चौखट सही, यह माना, रवा[9] नहीं बेबुलाये जाना।
फ़कीर उज़्लतगुज़ीं[10] 'सफ़ी' है, गदाए-दर्योज़ागर[11] नहीं है॥

उफ-री नासाज़िए-दिल[12], एक ज़माना गुज़रा।
ज़ोअ़फ[13] अब तक वहीं डूबी हुई आवाज़में है॥

बेक़रारी दिले-बीमारकी अल्ला-अल्ला।
फ़र्शे-गुलपर[14] भी न आना था, न आराम आया॥

जौरे-दरबाँकी[15] तो कुछ भी न हुई तहक़ीक़ात।
मेरे ही सर मेरी फ़रियादका इल्ज़ाम आया॥

आईने-मुहब्बत[16] है बहुत बाइसे-तकलीफ़[17]।
ऐ काश जहाँसे कोई यह रस्म उठा दे॥

---

[1]माँगी हुई ज़िन्दगीमें; [2]सौन्दर्य्यके हाव-भावोंपर; [3]मौत, [4]जवानीमें, [5]अहोभाग्य; [6]मृत्यु शोककी प्रार्थनाको, [7]माथेकी; [8]सिकुड़नसे, [9]उचित, मुनासिब; [10]एकान्तवासी, [11]दर-दरका भिखारी; [12]दिलकी बीमारी; [13]कमज़ोरी, [14]फूल-शैय्यापर, [15]पहरेदारके ज़ुल्मकी; [16]प्रेमके नियम; [17]कष्टके कारण।

शबे-निशातका[1] पिछला पहर था ऐ ग़ाफ़िल !
जिसे शबाब[2] समझता था, वह शबाब न था ।।

वोह आहे-सर्द[3] हूँ निकले जो एक टूटे हुए दिलसे ।
सरापा[4] दर्द हूँ और दर्दका ख़ुद अपने दरमाँ[5] हूँ ।।

जो चीज़ नहीं बसकी फिर उसकी शिकायत क्या ?
जो कुछ नज़र आता है, अच्छा नज़र आता है ।।

क़फ़स ले उड़ूँ मैं हवा अब जो सनके ।
मदद इतनी ऐ बाले-परवाज़[6] देना ।।

—केसरकी क्यारी

१५ नवम्बर १९५१

द्वितीय संस्करणके लिए

वोह आ़लम[7] है कि मुँह फेरे हुए आ़लम[8] निकलता है ।
शबे-फ़ुर्क़तके ग़म झेले हुओंका दम निकलता है ।।

इलाही ख़ैर हो उलझनपै-उलझन बढ़ती जाती है ।
न मेरा दम, न उनके गेसुओंका ख़म निकलता है ।।

क़यामत ही न हो जाये, जो पर्देसे निकल आओ ।
तुम्हारे मुँह छुपानेमे तो यह आलम[9] निकलता है ।।

शिकश्ते-रंगे-रुख़[10], आईनये-बेताबिए-दिल[11] है ।
ज़रा देखो तो क्योंकर ग़मज़दोंका दम निकलता है ।।

---

[1]आनन्दमयी रात्रिका, [2]युवकोचित सौन्दर्य, [3]ठंडी साँस; [4]पूर्णरूपेण [5]इलाज; [6]उडनेकी क्षमता रखनेवाले पर, [7]दशा, हालत; [8]संसार-दुनिया; [9]भेद-स्थिति; [10]मुँहकी उदासी; [11]बेचैन दिलका दर्पण है ।

निगाहे-इल्तिफ़ाते-मेहर[1] और अन्दाजे-दिल[2]-जोई।
मगर इक पहलुए-बेताबिये-शबनम निकलता है॥

'सफ़ी' कुश्ता[3] हूँ नापुरसिशोंका[4] अहले-आलम[5] की।
यह देखो कौन मेरा साहिबे-मातम[6] निकलता है॥

—नकूश फरवरी १९५६ ई०

जोर ही क्या था जफ़ाए-बागबाँ देखा किये।
आशियाँ उजड़ा किया, हम नातवाँ देखा किये॥

---

[1]कृपादृष्टि; [2]हृदयको सान्त्वना देनेका ढंग; [3]मिटा हुआ; [4]उपेक्षाओंका, अनादरका; [5]दुनियावालो द्वारा; [6]संवेदक।

मिर्ज़ा मुहम्मदहादी 'अज़ीज़'का जन्म लखनऊमे १८८२ ई० मे हुआ। आपके पूर्वज शीराज़के रहनेवाले थे। वे वहाँसे आकर पहले कश्मीरमे रहे, फिर स्थायी रूपसे लखनऊमे बस गये। आपके वंशमे कई पीढियोंसे योग्यतम विद्वान् होते आये हैं। आपके पिता अ़ल्लामा मिर्ज़ा मुहम्मदअ़ली आपको सात वर्षका छोडकर जन्नतनशीन हो गये थे। ५ वर्षकी आयुमे आपका विद्यारम्भ हुआ और अ़रबी-फ़ारसीकी पूर्ण योग्यता प्राप्त की।

अ़ज़ीज़ सादगी-पसन्द, बेतकल्लुफ और मिलनसार थे। विनयी, सहृदय और हास्यप्रिय थे। आपकी शाइरीके सम्बन्धमे हज़रत साकिब लखनवी फ़र्माते हैं—"अ़जीज़की तबिअ़त निहायत पुरदर्द वाकअ़ हुई है। हर शेअ़रसे हसरतका इजहार होता है। कमाल यह है कि आपने मीरो-गालिबकी तक़लीद (अनुसरण) करते हुए अपने खास रगको हाथसे नही जाने दिया है। ज़बानकी सफाई, मजामीनकी रफअ़त (उड़ान) और बयानकी सलासत (प्रवाह) मअ़नी आफरीनी और नुक्तारसी (सार-गर्भितता)से दस्तोगरेबाँ है।"[१]

अज़ीज़के बहुत-से शिष्योमे-से कुछ ख्यातिप्राप्त शाइर ये हैं—'असर' लखनवी, 'जोश' मलीहाबादी, 'आशुफ्ता' लखनवी, 'जिगर' बरेलवी,

---

[१]गुलकदा : दीवाचा पृ० १६।

'रशीद' लखनवी, जगमोहनलाल 'रवाँ', 'शेफ्ता' लखनवी, 'कैफ़ी' लखनवी।

इनके ख्यातिप्राप्त शिष्योमे-से 'असर' लखनवीका परिचय तो इसी भागमे दिया गया है। शेष जो इनमे-से बहुत ख्यातिप्राप्त है, उनका उल्लेख शाइरीके नये दौरमे क्रमानुसार किया जायगा।

'अज़ीज' हज़रत 'सफ़ी' लखनवीके शिष्य थे, परन्तु गुरु-शिष्यमें किसी बातको लेकर नाचाकी हो गई थी। आपकी कविताओका दीवान 'गुलकदा' १९३६मे प्रकाशित द्वितीय सस्करण हमारे समक्ष है। इसमे आपकी १९०५से १९१८ तककी गजलोका सकलन १४४ पृष्ठोंमे किया गया है। उनमे-से १२१ अशआर चुनकर पेश किये जा रहे है। २ अगस्त १९३५ को आपका निधन होगया।

अपने मरकज़की[1] तरफ माइलेपरवाज़[2] था हुस्न[3]।
भूलता ही नहीं आ़लम[4] तेरी अँगड़ाईका॥

जो यहाँ महवेमासिवा[5] न हुआ।
दूर उससे कभी ख़ुदा न हुआ॥
अ़हदमें[6] तेरे ज़ुल्म क्या न हुआ।
ख़ैर गुज़री कि तू ख़ुदा न हुआ॥
यूँ-ही घुट-घुटके मिट गया आख़िर।
उक़्दए-दिल[7] किसीको वा[8] न हुआ॥
न मिली दादे-जन्तेइश्क़ 'अ़ज़ीज़'!
वोह कभी सब्रआज़मा न हुआ॥

---

[1]केन्द्रकी, लक्षकी; [2]उडनेमे दत्तचित्त; [3]रूप; [4]मत्तता, शोभा, अन्दाज; [5]ईश्वरसे अतिरिक्तमे लीन, [6]ज़मानेमे, अधिकारके दिनोमें; [7]दिलका भेद; [8]प्रकट।

ख़याल तक भी उधर ऐ ख़ुदा नहीं जाता।
मरीज़ेग़मका तसव्वुर[1] किया नहीं जाता॥
बयाने-हुरमते-सहबा[2] सही, मगर ऐ शेख़!
तेरी ज़बानसे उसका मज़ा नहीं जाता॥

हर इक क़दम तेरे कूचेमें एक आलम है।
कहाँतक अब मैं चलूँगा? चला नहीं जाता॥
हुजूमे-शौक़का[3] बस मुख़्तसर यह किस्सा है।
कि जो मैं चाहता हूँ, वह कहा नहीं जाता॥

ज़बाँ बयान करे मुद्दआ-ए-दिल[4] क्योंकर?
किसीका हाल किसीसे कहा नहीं जाता॥
वोह सरज़मीन जहाँपर मज़ार है मेरा।
उधरसे अब कोई दर्द-आश्ना नहीं जाता॥

कुछ इन्तहा[5] भी है? लो, बन्द हो गईं आँखें।
निगहने काम किया जबतक इन्तिज़ार किया॥
सितम है लाशपर उस बेवफ़ाका यह कहना—
"कि आनेका भी किसीके न इन्तिज़ार किया॥"
किसीने नज़अकी[6] इस तरह गुत्थियाँ सुलझाईं।
सिरहाने बैठके हर साँसका शुमार किया॥
कुछ इसमें मसलहते-ज़ौक़े-ज़िन्दगी[7] भी थी।
'अज़ीज़' वअदेका उसके जो एअतबार किया॥

दिलको जहाँ सुकून[8] हुआ जिस्म सर्द था।
वोह मुद्दते-हयात[9] थी जब तक कि दर्द था॥

---

[1]ध्यान; [2]अंगूरी शराबकी प्रशंसा; [3]अभिलाषाओंकी भीड़का; [4]हृदयाभिलाषा; [5]हद, सीमा, अन्त; [6]मृत्युकी अन्तिम घड़ियोंकी; [7]जीवनाभिरुचिका हित; [8]सन्तोष, चैन; [9]जीवन-काल।

हर आह खींचती है तनावें फ़लककी अब।
वोह दिन गये कि हौसिलए-ज़ब्ते-दर्द[1] था॥
मुड़-मुड़के देखता था मैं वहशतसे बार-बार।
कोई तो मेरे साथ बयाबाँ-नवर्द[2] था॥

गिला[3] किससे? जब उसको इज्तिराबे-दिल[4] पसन्द आया।
ख़ुदा ही को अज़लसे[5] शेवए-बिस्मिल[6] पसन्द आया॥
रगे-जाँने[7] वहीं की बढ़के हिम्मतकी क़दमबोसी[8]।
जहाँ हमको ख़यालो-दूरिये-मंज़िल[9] पसन्द आया॥
ज़रा यह इन्तिख़ाब[10] उसकी निगाहेनाज़का[11] देखो।
कि आँसू बन रहा था जो वह ख़ूने-दिल पसन्द आया॥

आगे ख़ुदाको इल्म है क्या जाने क्या हुआ।
बस उनके मुँहसे याद है उठना नक़ाबका॥
मिन्नतकशे-असर[12] न हुई शुक्र है दुआ।
बढ़ता वगर्ना शौक़ दिले-बे-हिजाबका[13]॥

ऐ सकूनेमौत[14]! कोई जागनेकी हद भी थी?
सुबहे-हिज्र[15] आख़िर मेरी आँखोंमें ख़्वाब[16] आ ही गया॥
है मुहब्बतकी नज़रमें क्या मज़ा ख़ुद देख लो।
चार आँखें जब हुईं तुमको हिजाब[17] आ ही गया॥

---

[1]दर्दको छिपानेका साहस; [2]अरण्यारोही; [3]शिकायत; [4]दिल का तड़पना; [5]अनादि कालसे, मनुष्य-सृष्टिके प्रारम्भसे; [6]अर्द्धमृतकपन; घायलपन, [7]जीवनकी नसोंने; [8]पाँव चूमे; [9]लक्ष्यकी दूरीका विचार; [10]चुनाव; [11]गर्वीले नेत्रोंका, मग़रूराना नज़रका कमाल; [12]प्रभावका आभारी, असरवाली; [13]निर्लज्ज हृदयका, [14]मृत्युकी शान्ति; [15]विरहके प्रभातमें; [16]नींद; [17]हया, शर्म ।

किया है किसने याद अल्लाहो अकबर ! अब असीरोंको[1] !
कि तोड़ा जा रहा है क़ुफ़्ल[2] जंगआलूदा[3] जिन्दाँका[4] ॥

उनसे करता है दमे-नज़अ़[5] वसीयत यह 'अ़जीज़'—
"ख़ल्क़[6] रोयेगी मगर तुम न परीशाँ होना ॥"

विसाले-दाएमी[7] क्या है ? शबे-फ़ुरक़तमे[8] मर जाना।
क़ज़ा[9] क्या है ? दिलीजज़्बातका[10] हदसे गुजर जाना[11] ॥
निसार[12] इस बचपनेके और इस नाज़ुक दिमाग़ीके।
सियह-बालोंसे अपने नींदमे ख़ुद आप डर जाना ॥
इन्ही टूटी हुई कब्रोंमे है एक तुरबते-बेकस[13]।
ज़रा मुँह फेर लेना जानेवाले जब उधर जाना ॥

झेंपते क्यों हो, जो सर-ता-ब-क़दम[14] देखते हैं।
यह कोई और नही है, तुम्हें हम देखते हैं ॥

उसकी शामे-ग़मपै सदक़े हो मेरी सुबहे-हयात।
जिसके मातममे तेरी ज़ुल्फ़ें परीशाँ हो गईं ॥

वाइज़ ! तेरी ज़बानसे सुनता तो ज़िक्रे-हूर[15]।
इतना ख़याल है कि कोई बदगुमाँ न हो ॥

ख़ुदा दुश्मनको दिखलाये न यूँ बीमारकी हालत।
मगर अब आ गये हो तुम तो दमभर देखते जाओ ॥

---

[1]वन्दियोको; [2]ताला; [3]जग लगा हुआ; [4]कारागृहका; [5]मृत्युके समय; [6]जनता; [7]स्थायी (अमर) मिलन; [8]विरह-रात्रिमे; [9]मृत्यु; [10]हृदयाभिलाषाओका, [11]सीमा लाँघना; [12]न्योछावर; [13]असहायकी समाधि; [14]सरसे पाँवतक; [15]स्वर्गस्थ अप्सराओका वर्णन ।

क़हते हैं चारागरोंसे[1] दमे-नज़अ़[2] —
"है यह जागा हुआ सो लेने दो॥"
ज़ब्ते-गिरयाका[3] न दो हुक्म मुझे।
दिलमें कुछ दाग़ है धो लेने दो॥

ख़ुदा जाने दिले-नाकाम, क्या हो?
हमारा देखिए अंजाम क्या हो?

कहके बीमारसे यह बुझ गई शमअ़—
"रात होती है यूँ बसर देखो॥"

दैरोकअ़बेमें[4] फ़र्क़ क्या है 'अज़ीज़'!
सिर्फ़ पाबन्दियाँ हैं मज़हबकी॥

सारी ख़िलक़त[5] हश्रमें[6] अपनी तमाशाई हुई।
दादख़्वाहीको[7] गये थे उल्टी रुसवाई हुई॥

वाँ नामावरकी[8] ख़ाकका भी अब पता नहीं।
बैठे हैं इन्तिज़ारमें हम याँ जवाबको॥

मुझे बे इख़्तियार आता है रोना।
न पूछो जिन्दगी क्योंकर बसर की॥

मेरे रोनेपै यह हँसी कैसी?
ऐ सितमगर! यह दिल्लगी कैसी?

इक ख़ुदाई जान देनेके लिए तैयार है।
क्या क़यामत है कमरसे बाँधना शमशीरका॥

---

[1]चिकित्सकोसे; [2]मृत्युके समय; [3]विलाप रोकनेका, आँसू पीनेका; [4]मन्दिर-मस्जिदमे; [5]जनता; [6]ईश्वरीय न्यायालयमे; [7]न्याय चाहनेको; [8]सन्देशवाहककी।

हम तो दिल ही पर समझते थे बुतोंका[1] इख़्तियार।
नसबे-क़अ़बेमें[2] भी अबतक एक पत्थर रह गया॥
दिलकी बेचैनी कोई देखे जरा इस बज़्ममें[3]।
जब कोई आया तो मैं ज़ानू[4] बदलकर रह गया॥
जा चुके अहबाब[5] रोकर उठ चुकी मातमकी सफ़[6]।
आप कब आये कि जब ख़ाली मेरा घर रह गया॥
देख ली दुनिया चलो शहरे-ख़मोशाँ[7] अब 'अज़ीज़'!
क़ाबिले-दीद[8] इक यही दिलचस्प मंज़र[9] रह गया॥

रब्ते-देरीनासे बाकी है तअ़ल्लुक फिर भी।
लाख क़अ़बेसे बनाये कोई बुतख़ाना जुदा॥

कब पूछते हैं आके मिज़ाजे-मरीज़े-इश्क़।
जब बदनसीब बातके क़ाबिल नहीं रहा॥*

मेरा मातम फ़कत था रौनक़े-ग़मख़ानए-हस्ती।
रही आबाद दुनिया भी रहा जबतक कि ग़म मेरा॥
'अज़ीज़' अब कौन-सा वक़्त आ गया? क्या होनेवाला है?
कि वोह ख़ुद पूछते हैं हाल-आकर दम-ब-दम मेरा॥

ख़ुदाका काम है यूँ तो मरीज़ोंको शिफ़ा[10] देना।
मुनासिब हो तो इकदिन हाथसे अपने दवा देना॥
शिगाफ़[11] इक हो चला तुरबतमें[12] जाँ आने लगी मुझमें।
ज़रा ऐ जानेवाले! क़ब्रपर फिर मुस्करा देना॥

---

[1]मअ़शूकोंका; [2]काबेकी नीवमे; [3]महफिलमे; [4]घुटने; [5]इष्ट-मित्र; [6]रुदन करनेवालोकी पक्ति; [7]मरघटकी ओर; [8]दर्शनीय; [9]दृश्य; [10]आरोग्यता; [11]सूराख; [12]कब्रमे।

*कहते हैं जब रही न मुझे ताकते-सुख़न।
"जानूँ किसीके दिलकी मैं क्योंकर कहे बग़ैर॥" —ग़ालिब

मेरी मैयतपै किस दअ़वेसे वोह कहते हुए आये—
"हटा देना ज़रा इन रोनेवालोंको हटा देना॥"

पैदा वह बात कर कि तुझे रोएँ दूसरे।
रोना ख़ुद अपने हालपै यह ज़ार-ज़ार क्या?
✓ रुक जाये बात-बातपर जिस नातवाँकी साँस।
ऐसे मरीज़े-ग़मका भला एअ़तबार क्या॥

यह कहके लगाई है किसी शोख़ने ठोकर—
"देखूँ तो कोई क़ब्रसे क्योंकर न उठेगा॥"

बढ़ गये कुछ और उनके हौसले।
रोनेवालोंको हँसाना ही न था॥
कल ज़माना ख़ुद मिटा देता जिन्हें।
ऐसे नक़्शोंको मिटाना ही न था॥
बेपिये वाइज़को मेरी रायमें।
मस्जिदे-जामअ़मे जाना ही न था॥

नया-नया जो किसी शोख़का शबाब[1] आया।
उठाके आईना देखा तो ख़ुद हिजाब[2] आया॥
तमाम अंजुमने-वअ़ज़[3] हो गई बरहम[4]।
लिये हुए कोई यूँ साग़रे-शराब आया॥
मरीज़े-हिज्रकी[5] ऐसोंको क़द्र[6] क्या होगी?
उठे हैं नींदसे जब सरपै आफ़ताब[7] आया॥

ग़श खाते-खाते दर्दे-दिल उसको सुना दिया।
फिर कुछ ख़बर नहीं कि जवाब उसने क्या दिया।

---

[1]यौवन, रूप; [2]लाज; [3]उपदेश-सभाएँ; [4]तितर-बितर, जनशून्य; [5]बिरह-रोगीकी; [6]चिन्ता; [7]सूर्य।

बेताब होके जोअफ़में[1] भी आँख खोल दी।
जब गोशए-नकाब[2] किसीने हटा दिया॥

वोह दिले-बेख़ुद ख़ुदा बख़्शे मुझे याद आ गया।
जब कोई अँगड़ाइयाँ लेता हुआ सोकर उठा॥
हँस रहा है देखकर यह कौन तुझको देरसे।
सर उठा ऐ दिलसे बातें करनेवाले सर उठा॥

क्या बताऊँ उसकी चश्मे-नाज़का आ़लम 'अ़ज़ीज़'!
मैकदेमें हुस्नके छलका हुआ पैमाना था॥

जो मैं जिन्दा भी हो जाता तो फिर फ़ुरकतमें[3] मर जाता।
वोह आते थे तो उनको लाशपर आने दिया होता॥
लहू रोती है चश्मे-इबरत[4] इस बेदादे-गुलचींपर[5]।
अभी फूलोंको अपने रंगपर आने दिया होता॥

ख़ाक क्यों छान रहा है बतला।
था भी दिल पास तेरे याद तो कर॥
वोह तसल्ली ही सही ऐ सैयाद!
कुछ मुअ़य्यन[6] मेरी मीआ़द तो कर॥

गाफ़िल फ़रेफ़्ता[7] है चमनकी बहारपर।
गुल हँस रहे हैं हस्तिए-बे-एअ़तबारपर[8]॥
वअ़दा किया था "ख़्वाबमें सूरत दिखाएँगे"।
सोया किया हमेशा इसी एअ़तबारपर॥
उठनेको तेरे दरसे उठा तो मगर न पूछ।
जो कुछ गुज़र गई दिले-बेइख़्तियारपर॥

---

[1]कमजोरीमें, [2]नकाबका कोना; [3]विरहमें; [4]नसीहत लेनेवाली आँख; [5]फूल तोड़नेवालेके जुल्मपर, [6]निर्धारित; [7]अनुरक्त; [8]क्षणभंगुर जीवनपर।

यह अपना-अपना मुक़द्दर यह अपना-अपना नसीब।
ज़मानेभरको हँसाये, हमें रुलाये बहार॥
कलीसे फूल बना, फूलसे बनी मिट्टी।
वोह इब्तिदाए-बहार[1] और यह इन्तिहाए-बहार[2]॥

काश! सुनते वोह पुर असर बातें।
दिलसे जो की थीं उम्रभर बातें॥

क़फ़समें[3] जी नहीं लगता है आह फिर भी मेरा।
यह जानता हूँ कि तिनका भी आशियाँमें[4] नहीं॥

भला ज़ब्तकी भी कोई इन्तिहा है?
कहाँतक तबिअ़तको अपनी सम्भालें?

मर गया बीमारे-उल्फ़त उनसे इतना कहके बस—
"जाइए अब आपसे कोई गिला बाक़ी नहीं॥"

लो वह भी सर झुकाये हुए साथ-साथ है।
यूँ भी किसीकी लाश उठी है ज़मानेमें॥
वोह दिन गये 'अ़ज़ीज़' कि हँसते थे रात-दिन।
मिलता है चैन दिलको अब आँसू बहानेमें॥

रूहको जिस्ममें ग़नीमत जान।
एअ़्तबार इसका क्या? रही न रही॥

यक़ीन है मुझे मुलाक़ात उससे हो जाये।
तेरी तलाशमें पहले जो आप खो जाये॥

---

[1]बहारका प्रारम्भ; [2]बहारका अन्त; [3]पिंजरेमें; [4]घोंसलेमें।

करते 'अज़ीज़' नाज़िश[1] रहमतपर उसकी फिर क्यों?
तअ़ज़ीर[2] भी वोह देता जब हम गुनाह करते॥

शर्माके उसने मुझको गलेसे लगा लिया।
मायूसिये-निगाह[3] अ़जब काम कर गई॥

याद आ ही जाता है कभी नासेहका[4] क़ौल भी—
"सब कीजिए जहाँमें मुहब्बत न कीजिए॥"

कहती है रूह[5] "आई है जितनी कि हिचकियाँ—
उतनी ही मैंने ठोकरें खाई है राहकी॥"

महशरमें[6] उनको देखके अल्लाहरी ख़ुशी।
तरदीद[7] कर रहा हूँ ख़ुद अपने गवाहकी॥
उड़ती हुई यह ख़ाक, परेशान यह हवा।
तशरीह[8] है 'अ़ज़ीज़'के हाले-तबाहकी॥

देखकर जानिबे-बिस्मिल[9] वह किसीका कहना—
"ख़ुद-ब-ख़ुद उसके तड़पनेपै हँसी आती है॥"

लाख आबादियाँ निसार[10] इसपर।
अल्लाह-अल्लाह यह किसकी तुरबत[11] है?
जिस तरह चाहो दरसे[12] उठवा दो।
एक बेकसकी[13] क्या हक़ीक़त है॥

उनको सोते हुए देखा था दमे-सुबह कभी।
क्या बताऊँ जो इन आँखोंने समाँ देखा है॥

---

[1]गर्व; [2]दण्ड; [3]निराश दृष्टि; [4]नसीहत देनेवालेका; [5]आत्मा; [6]ईश्वरीय न्यायालयमें; [7]विरोध, असत्य सिद्ध; [8]भाष्य; [9]घायलकी ओर; [10]न्योछावर, [11]समाधि; [12]दरवाजेसे, [13]असमर्थकी।

कोई इस बेकसीसे रोता है?
इश्क़के दिलमें दर्द होता है॥
जिसके मरनेकी हो खुशी तुमको।
ऐसी मय्यतपे[1] कौन रोता है?

ताबूतको[2] अज़ीज़के आहिस्ता ले चलो।
टुकड़े सब उस शहीदे-मुहब्बतकी लाश है॥

मुहब्बतके जरीदेसे[3] हमारा नाम कट जाता।
तो इतनी सब्रकी कूवत[4] भी रुख़सत हो गई होती॥
अभी तहतक हकीकतकी नजर पहुँची नहीं जाहिद[5]!
नजर बुनियादमें कअ़बेकी इक बुतख़ाना आता है॥
ख़ुदा जाने वोह क्यों शर्माके उठ जाते है महफ़िलसे?
क़रीबे-शमअ़ जब परवानेपर परवाना आता है॥

बालींपै[6] मेरी कहके किसीने यह खोले बाल—
"देखें तो इम्तियाज़[7] उसे शामो-सहरमें[8] है॥"

मंजरे-जज्बात[9] है ख़िलवतसराए-दैर[10] भी।
कअ़बेवालो! फ़र्ज़ है तुमपर वहाँकी सैर भी॥

हम उसी जिंदगीपै मरते है।
जो यहाँ चैनसे बसर न हुई॥

दिलने दुनिया नई बना डाली।
और हमें आजतक ख़बर न हुई॥

---

[1]अर्थीपर; [2]अर्थीको, [3]प्रेमकार्यालयसे; [4]शक्ति; [5]विरक्त, परहेज़गार; [6]सिरहाने; [7]पहचान, होश; [8]सुबह-शाममें; [9]भावुक दृश्य; [10]मन्दिर का एकान्त स्थान।

दमे-आख़िर लिखे थे जिसमें अपने तजरुबे तुमको।
वोह ख़त्ते-शौक़ देखूँ किसके-किसके काम आता है?

यह कहके बज़्मे-नाज़में इक जाम पी लिया।
"कबतक रखें उमीद शराबे-तहूरकी[1]॥"
होता नहीं है कोई ज़मानेमे क्या जवाँ।
अल्लाह कोई हद है तुम्हारे ग़ुरूरकी॥

हिफ़ाजत करनेवाले ख़िरमनोंके[2] मुतमइन[3] बैठें।
तजल्ली वर्क़की[4] महदूद[5] मेरे आशियाँ[6] तक है॥

यह कहके ख़त्म शमअ़ने की मुद्दते-हयात—
"कबतक अकेला क़ब्रपर रोया करे कोई॥"

अँगड़ाई लेके किसने यह चटकाई उँगलियाँ?
दो हिचकियोंमें ख़त्म जो बीमार हो गया!

हूँ आ़लमे-हैरतमें जीता हूँ न मरता हूँ।
अब दिलकी यह हालत है हँसते हुए डरता हूँ॥

चुटकियाँ लेकर न पूछो दर्दे-दिल कुछ कम हुआ?
जब हटाया हाथ तुमने फिर वही आ़लम हुआ॥
मर गया था मैं नज़ाकत देखकर जिनकी 'अ़ज़ीज़'।
हैफ़ उन्हीं हाथोंसे महफ़िलमें मेरा मातम हुआ॥

'अ़ज़ीज़' इस क़दर हमने सिज्दे किये।
ख़ुदा उनको आख़िर बना ही दिया॥

---

[1] पवित्र शराबकी; [2] खेतोमे पड़े हुए अन्नके ढेरके; [3] शान्तिसे, इत्मीनानसे; [4] बिजलीकी कौन्द; [5] सीमित; [6] घोसला।

इशरतकदेको[1] ख़ानए-वीराँ[2] बनाएँगे।
छोटा-सा अपने घरमें बयाबाँ बनाएँगे॥

माना दलीलेसौदा[3], गर है फ़िज़ूल बकना।
दीवाना था अगर मैं नासेहको क्या हुआ था?

बैठे हैं वालींपै वोह शिकवोंके दफ्तर हैं खुले।
ऐ अजल! फिर जा कि मरनेकी हमें फ़ुर्सत नहीं॥
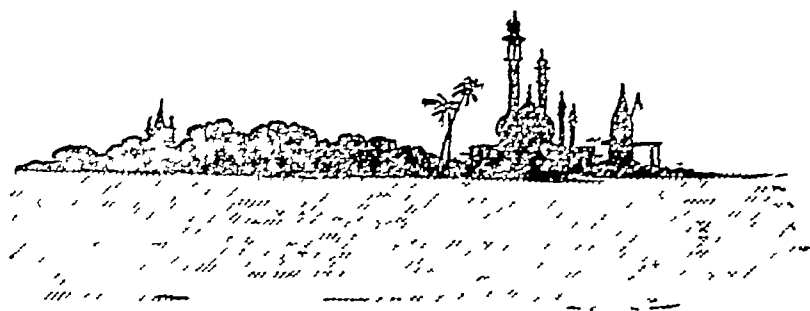
जेहनमें आया न फ़र्क़-इम्तियाज़ी[4] आजतक।
मुद्दतों देखा है हमने कअ़बा भी और दैर भी॥

१३ दिसम्बर १९५० ई०

---

[1]सुखनिवासको; [2]वीराना, उजड़ा घर; [3]पागलपनकी पहचान; [4]मुख्य भेद, ख़ास फ़र्क़।

मुंशी नौबतराय 'नजर' लखनऊके कायस्थ परिवारमे १८६६ ई० मे उत्पन्न हुए और १९२३ ई० मे स्वर्गस्थ। मध्यवर्ती युगके प्रसिद्ध महाकवि 'मुस्हफी'[1] की शिष्य परम्परामे उत्पन्न आगा 'मज़हर' के १८८४ ई० मे शिष्य बने। आपका समस्त जीवन भरण-पोषणकी चिन्ताओं और इष्ट-वियोगमे बिलखते हुए व्यतीत हुआ। कलमके मज़दूर थे। १८९७ ई० मे आपने 'ख़दगे-नजर' मासिक पत्र प्रकाशित किया, जो कि अर्थाभावके कारण सात वर्ष बाद बन्द कर देना पडा। १९०५ ई० मे आप कानपुरके 'ज़माना' मासिक पत्रके सपादकीय विभागमे चले गये। वहाँसे १९१० मे प्रयाग जाकर इण्डियन प्रेससे 'अदीब' प्रकाशित किया। प्रयागमे एक वर्ष रहे, फिर कुछ दिन बाद 'जमाना' आफिसमे रहे। कुछ दिनो बाद 'अवध' लखनऊ की सपादकी मिल गई थी।

उदर-पोषणके लिए इधर-उधर मारे-मारे फिरने और घोर परिश्रमके कारण स्वास्थ्य चौपट हो गया। स्वासके भी पुराने रोगी थे।

'नज़र' आर्थिक चिन्ताओके साथ-साथ सन्तानवियोगसे भी पीडित रहे। लडका कोई हुआ नही। एक लड़की, एक नवासा, एक बूढी माँ

---

[1]मुस्हफीका परिचय और कलाम शेर-ओ-सुख़न प्रथम भागमे दिया जा चुका है।

घरकी जीनत थे। नवासेको प्यार-दुलार करके समस्त गमोंको भुलाये रहते थे। भाग्यको यह सुख भी सह्य न हुआ। नवासा भी उनकी गोदसे छीन लिया।

थनो-थमो कि इस उजड़े मकाँका था यह चिराग़।
वहारपर था इसी नौनिहालसे[1] यह बाग़॥
न होगा अब मुझे हासिल कभी जहाँमे फ़राग[2]।
तमाम उम्र दिले-नातवाँ[3] है और यह दाग॥
फ़ुगाने-बुलबुले-जाँ[4] दिलके पार होती है।
'नजर'के बागसे रुख़सत बहार होती है॥

और सचमुच उनके घरसे वहार रुख़सत हो गई। थोड़े दिन बाद बूढी माँ भी चल बसी। पडोसमे एक बच्चा था, उसको लाड-प्यार करके साथ सुलाके नवासेके गमको भुलानेका प्रयत्न करने लगे तो एक रोज़ वह भी छतसे गिर कर मर गया। 'नजर' इस सदमेको बर्दाश्त न कर सके और स्वयं भी यह शेअर कहकर इस व्यथा भरी जिन्दगीसे किनारा कर गये—

ऐ इनक़लाबे-आलम! तू भी गवाह रहना।
काटी है उम्र हमने पहलू बदल-बदलकर॥

'नजर' का कलाम व्यथासे ओत-प्रोत है। आप शाइर ही नही, अच्छे आलोचक और पत्रकार भी थे। आपकी कलमी तसवीर रशीदहसन साहब यूँ खीचते है—

"नज़र" मियाना कद थे। दुबले-पतले, गन्दुमीरग—लिबासमे सादगी, मिज़ाजमे नफासत, नमूदो-नुमाइशसे हद दर्जे मुज्तनिब[5]। गुरूरो-

---

[1]नवविकसित पौधेसे, [2]चैन; [3]निर्बल हृदय; [4]दिलरूपी बुलबुलकी आह, चीत्कार; [5]आत्म-विज्ञापनसे दूर।

तकब्बुर छूतक न गया था। 'नजर' जितने अच्छे शाइर थे, उससे ज्यादा अच्छे इन्सान थे। जितने उम्दा शेअर कहते थे, वैसे ही खुशनवीस-ओ-मुसव्विर भी थे। शतरजका भी शौक था।"

'नज़र' लखनऊके उस युगमे उत्पन्न हुए थे, जब कि वहाँ खारिजी[1] शाइरीका बोलबाला था। जिसकी वजहसे लखनऊ आजतक बदनाम है। गो वहाँ वर्त्तमान युगमे एक भी शाइर खारिजी रगका अनुयायी नही है, और एक-से-एक बेहतर शाइर उत्पन्न करनेका लखनऊको सौभाग्य प्राप्त है। फिर भी पुराना दाग मिटाये नही मिटता। यह माना कि नजरके युगमे खारिजी शाइरीके विरोधमे चारो तरफ़ आवाजे उठने लगी थी। लेकिन लखनऊके शाइरोपर इस विरोधका बहुत कम असर हुआ था। प्रचलित परम्पराके विरुद्ध कहना हर-एकके बसकी बात नही। इसी विरोधके कारण 'यगाना' चगेजी-जैसा जबर्दस्त और निर्भीक शाइर तिरस्कृत और उपेक्षित करके बर्बाद कर दिया गया, तब सर्व-साधारणकी तो बिसात ही क्या थी ?

'नजर'की विशेषता यही है कि उन्होने उस वातावरणमे भी शुद्ध शाइरीके दामनको हाथसे नही छोडा। हजरत रशीद हसन खाँ लिखते हैं—

"नज़र अपने मआसिर (समकालीन) से इसलिए मुम्ताज (श्रेष्ठ) है कि उन्होने माहौल-ओ-पसन्दे-ज़माना (वातावरण और जनताकी रुचि) को बिलकुल नही देखा। मज़ाके-आमियाना (आम जनताकी रुचि) की पैरवी करके फतवाए-उस्तादी-ओ-सुखनवरी (उस्तादी और शाइरीकी धर्माज्ञा) लेना गवारा नही किया, बल्कि रूहे-शाइरी (शाइरीकी आत्मा) को अपनाया। सस्ती शुहरतसे रू-कश होकर लताफते

---

[1] खारिजी अथवा लखनवी शाइरी क्या है, यह विस्तारपूर्वक 'शेरो-सुखन' प्रथम भागमे उल्लिखित हुआ है। पाँचवे भागमे भी सिंहावलोकनमे जिक्र आया है।

ख़याल-ओ-सदाकते-बयानकी अकलीमपर तसर्रुफ (वास्तविक कलापर ध्यान केन्द्रित) किया। यह ज़रूर है कि 'नज़र'को इसकी कीमत बहुत गिराँ देनी पडी। यअ्नी लखनऊने अपना रवायती सुलूक (परम्परा-का व्यवहार) दुहराया। उनकी शाइरीकी तरफसे ऐसी आँखे फेर ली, जैसे कि वे शाइर ही नही थे। सदहा मुशाइरोंको नुमायाँ किया, लेकिन 'नज़र' का नाम लेना भी तौहीने-अदब (साहित्यका अपमान) समझा। आज आपको वहाँकी महफिलोमे सबका तजकिरा (इतिहास) मिलेगा। उनका भी जो किसी एअ्तबारसे इसके मुस्तहक (अधिकारी) नही। लेकिन 'नज़र' का नाम किसी उनवानके तहत भी (शाइर, आलोचक, पत्रकार, चित्रकार, आदिमे) न आयेगा। जैसे कि इस नामका कोई शाइर वहाँ गुजरा ही नही। हद यह है कि आज कोई शख्स उनका मजमूअ़ए-कलाम (शाइरीका सकलन) देखना चाहे तो नही देख सकता। कितना बडा अलमीया (दुःख) है कि उस शख्सका दीवानतक मुरत्तब न हो सके, जो सही मअ्नोंमे लखनऊके लिए निशानेराह (मीलका पत्थर) था, और इसलाहकी इब्तिदा करनेवाला। ऐसे शाइरका ज़िमनी तौरपर भी तज़किरा न आ सके जो मज़ाके-आमसे गुरेज़ाँ (सस्ती जनरुचिसे परे) था और 'मीर' का मोअ्तकिद (अनुयायी)।···'नज़र' की ना-क़दरी लखनऊकी जिबीपर यादगारे-दाग रहेगी।

'नजर'के कलाममे वोह सादगी और दर्द जरूर है जो मीर-ओ-दर्दका सरमाया है। 'नज़र'की ज़बानमे बेहद लोच है और तर्ज़े-अदामे बलाका सोज़ोगुदाज़। हर शेअ्र असरमें डूबा हुआ होता है। 'नज़र'के कलामकी एक वोह खुसूसियत, जो उन्हें अपने मआसिरीन (समकालीनों) से बुलन्दतर कर देती है, यह है कि तमाम कलाममे इब्तज़ाल-ओ-रकीक (ज़लील, हकीर, आम कमीनापन) की एक मिसाल भी नही मिल सकती। एक शेअ्र भी ऐसा नही मिलेगा, जिसमे मज़ाके-आमियानाका शाइबा भी हो। हद यह है कि कोई गज़ल ऐसी नही मिलेगी, जिसमे एक भी शेअ्र भर्तीका हो और

अपने मअ़्यारसे गिरा हुआ। एक पैराय-ए-बयान भी ऐसा नही मिलेगा, जो कि उस ज़मानेके रंगसे मिलता जुलता हो। कही भी वस्लो-हिज्रका सोक़ियाना (बाजारी स्त्रियो सबधी) बयान नही मिलेगा, और एक जगह भी मुहमिल इस्तिआरात (न समझमे आनेवाली उपमाएँ) और फरसूदा तख़ैयुलात (घटिया कल्पनाओ) का परतव नजर नही आयेगा। यह वोह ख़ूबी है जो हरेकको नसीब नही होती।"[1]

फ़ना[2] होनेमे सोजे-शम्अ़की[3] मिन्नतकशी[4] कैसी ?
जले जो आगमे अपनी उसे परवाना कहते है॥

अभी मरना बहुत दुश्वार है ग़मकी कशाकशसे[5]।
अदा हो जायगा यह फ़र्ज भी फ़ुर्सत अगर होगी॥

मुआफ़ ऐ हमनशीं[6] ! गर आह कोई लबपै आ जाये।
तबीअ़त रफ़्ता-रफ़्ता ख़ूगरे-दर्दे-जिगर[7] होगी॥

मुजस्सिम[8] दाग़े-हसरत[9] हूँ, सरापा नक़्शे-इबरतका[10]।
मुझे देखो ! यही अंजाम है, आख़िरको उलफ़तका॥

सुन लो कि रंगे-महफ़िल कुछ मोअ़्तबर[11] नहीं है।
हूँ इक जबान गोया, शम्अ़े-सहर[12] नहीं है॥

मुद्दतसे ढूँढ़ता हूँ मिलता मगर नहीं है।
वोह इक सकूने-ख़ातिर[13] जो बेशतर[14] नहीं है॥

---

[1]'निगार' सितम्बर १९४९, पृ० ३९-४४; [2]मरनेमे, [3]दीप-शिखाकी जलन; [4]खुशामद; [5]खीचातानीसे; [6]पडौसी, मित्र; [7]जिगरके दर्दकी अभ्यस्त; [8]पूर्ण-रूपेण; [9]अभिलाषाओका दाग; [10]नसीहतका सरसे पाँवतक आकार हूँ; [11]विश्वस्त; [12]सुबहका दीपक; [13]पूर्ण शान्ति; [14]अक्सर, अधिकाश।

यूँ तो दिलको कभी क़रार न था।
अब बहुत बेकरार रहता है॥

दिलकी हालत नहीं बदलनेकी।
अब यह दुनिया नहीं सम्भलनेकी॥

बस एक नज़र और कि अब ख़त्म है क़िस्सा।
फिर होगी न तुमको मेरे मरनेकी ख़बर भी॥

हुई है क्या जाने क्या बुराई, क़फ़ससे पाते नहीं रिहाई।
गुलोंकी बूतक न उड़के आई, इधरकी शायद हवा नहीं है॥

इतनी ही रह गई है अब काएनात[1] दिलकी।
देखोगे जब तुम आकर कुछ इज़्तिराब[2] होगा॥

न हुई जल्वा-गहे-नाज़की[3] वुसअ़त[4] मअ़लूम।
गो मैं हर ज़र्रेको एक दीदए-हैराँ[5] समझा॥

तबाही दिलकी देखी है जो हमने अपनी आँखोसे।
हो अब कैसी ही बस्ती हम उसे वीराना कहते हैं॥

कोई मूझ-सा मुस्तहक़े-रहमो-ग़मख़्वारी[6] नहीं।
सौ मरज़ है और बज़ाहिर कोई बीमारी नहीं॥

इश्ककी नाकामियोंने इस क़दर खींचा है तूल।
मेरे ग़मख़्वारोंको अब चारा-ग़मख़्वारी नहीं॥

क़फससे छुटके हुआ बाग़-बाग दिल कैसा?
बहार दे गया उजड़ा हुआ नशेमन भी॥

---

[1]पूंजी; [2]बेचैनी; [3]माशूकके सौन्दर्य्य-सदनकी; [4]विशालता; [5]चकित दृष्टि; [6]दया-पात्र।

ख़िज़ाँ अंजाम है सबकी, बहारे चन्द रोज़ाकी।
बहुत रोता हूँ सूरत देखकर गुलहाए-ख़न्दाँकी[1]॥

पर्दा उठा दे इक दिन तू ऐ हिजाबे-हस्ती[2]!
पाता हूँ उसको दिलमें देखा मगर नहीं है॥

आते-आते रुक गया है, दम जो मुझ दिलगीरका।
आह भरकर मुन्तज़िर हूँ आहकी तासीरका॥

वोह एक तुम कि सरापा बहारो-नाज़िशे-गुल[3]।
वोह एक मैं कि नहीं सूरत-आशनाये-बहार[4]॥
ज़मींपै लाल-ओ-गुल बनके आशिकार[5] हुआ।
छुपा न ख़ाकमें जब हुस्ने-ख़ुदनुमाए-बहार॥

तअ़ल्लुक़े[6]-गुलो-शबनम है राज़े-उलफ़त[7] भी।
उन्हे हँसाये, जहाँतक हमें रुलाये बहार॥

दिल था तो हो रहा था, एहसासे-ज़िन्दगी[8] भी।
ज़िंदा हूँ अब कि मुर्दा, मुझको ख़बर नहीं है॥
मरनेपै जिस्मे-ख़ाकी[9] क्या साथ रूहका[10] दे।
राहे-अ़दममें[11] ग़ाफ़िल! गर्दे-सफ़र[12] नहीं है॥
बेसाख़्तगीये-जोशेजुनूँ[13] दाद-तलब[14] है।
चल निकले हैं, गो हमने बयाबाँ[15] नही देखा॥
सोज़ाँ[16] ग़मे-जावेदसे[17] दिल भी है जिगर भी।
इक आहका शोअ़ला[18] कि इधर भी है उधर भी॥

---

[1]विकसित फूलकी; [2]जीवनकी शर्म; [3]बहारकी सम्पूर्ण शोभा लिये हुए; [4]बहारसे परिचित; [5]प्रकट; [6]सम्बन्ध; [7]प्रेमका भेद; [8]जीनेका आभास; [9]मट्टीका बना शरीर; [10]आत्माका; [11]परलोक-मार्गमे; [12]धूल-मिट्टी; [13]उन्मादका निःसंकोच जोश; [14]शाबासीके योग्य; [15]जगल; [16]जलता हुआ; [17]स्थाई व्यथासे; [18]चिनगारी,।

वोह अंजुमने-नाज़[1] है और रंगे-तग़ाफ़ुल[2]।
याँ मरहलए-आह[3] भी, अन्दोहे-असर[4] भी॥
वोह शमअ़ नहीं है, कि हों इक रातके मेहमाँ।
जलते हैं तो बुझते नहीं हम वक़्ते-सहर[5] भी॥
जीनेके मज़े देख लिये तेरी बदौलत।
अब-ओ दिले-नाकामे-तमन्ना[6] कहीं मर भी॥

अपनी शबे-हिजराँमें[7] नहीं दख़्ले-तग़ैय्युर[8]।
बातिल[9] है यहाँ फ़ल्सफ़ए-शामो-सहर[10] भी॥
सुनता हूँ कि ख़िरमनसे[11] है बिजलीको बहुत लाग।
हाँ एक निगाहे-ग़लत-अन्दाज़ इधर भी॥

मेरी सूरत देखकर क्यों तुमने ठंडी साँस ली?
बेकसोंपर रहम आईने-सितमगारी[12] नहीं॥

हर तरफ़से यह सदा आती है मुल्के-हुस्नमें—
"यह वोह दुनिया है जहाँ रस्मे-वफ़ादारी नहीं।"

सवादे-शामे-ग़मसे[13] रूह थर्राती है क़ालिबमें[14]।
नहीं मअ़लूम क्या होगा, जो इस शबकी[15] सहर[16] होगी॥
क़फ़ससे छूटकर पहुँचे न हम, दीवारे-गुलशनतक।
रसाई आशियाँतक किस तरह बेबालो-पर होगी॥

---

[1]प्रेयसीकी महफ़िल; [2]उपेक्षा-भाव; [3]आहकी समस्या; [4]आहके असर न होनेका दुःख; [5]प्रातःकाल; [6]अभिलाषासे असफल हृदय; [7]वियोगरात्रिमें; [8]परिवर्तनका इख़्तियार; [9]निरर्थक; [10]सन्ध्या-प्रातःकालकी दार्शनिक चर्चा; [11]खलिहानसे; [12]अत्याचारका नियम; [13]ग़मकी सन्ध्याकी कालिमासे [14]शरीरमें; [15]रात्रिकी; [16]सुबह।

फ़कत इक साँस बाकी है, मरीज़े-हिज्रके तनमें।
यह काँटा भी निकल जाये तो राहतसे बसर होगी॥

हर क़दमपर बाग़े-आलममें बिछा है दामे-हुस्न[1]।
कौन ऐसा है जिसे जौक़े-गिरफ़्तारी[2] नहीं॥
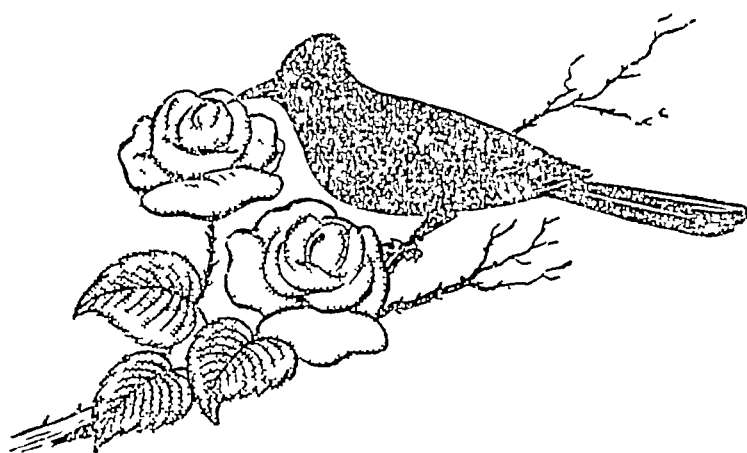
जहाँसे चार दिन रहकर फ़कत बूए-वफ़ा देना।
गुलोंसे मैं सबक लेता हूँ आईने-मुहब्बतका[3]॥

२५ फरवरी १९५२

---

[1]सौन्दर्य-जाल, [2]बन्दी होनेका चाव; [3]प्रेमधर्मका।

सैयद अहमद 'नातिक' मुहम्मद अब्दुल वशीर 'वास्ती' बिल्गरामीके पुत्र थे। आपके पूर्वज बगदादसे भारत आये थे। नातिक १८७८ ई० मे लखनऊमे जन्मे और वही शिक्षा प्राप्त की। यूनानी हिकमतका पेशा करते थे। खेद है कि पूर्वी पाकिस्तानके चटगाँवमे १९५१ ई० मे आपकी मृत्यु हो गई। आप ग़जलके माने हुए उस्ताद थे।

आपके स्वय के पसन्दीदा अशआर निगार जनवरी १९४१ मे छपे थे, उनमे-से चन्द यहाँ साभार दिये जा रहे है—

अपना-अपना हाल कह लेने दो 'नातिक़' सबको तुम।
जानता हूँ वह कि किसके दिलमें कितना दर्द है॥

जो न सँभला इब्तिदाए-इश्कमें[1]।
फिर वह आख़िरतक सँभल सकता नहीं॥

गुज़ारी देखने में उसको सारी ज़िन्दगी मैंने।
मगर यह शौक़ है देखा नहीं गोया कभी मैंने॥
मुहब्बत एक मुद्दतसे है, यह मअ़लूम होता है।
तुम्हें हर चन्द पहिली बार देखा है अभी मैंने॥

मैकशो मैकी कमी-बेशीपै इतना जोश है।
यह तो साक़ी जानता है किसको कितना होश है॥

---

[1] प्रेमके प्रारम्भमे।

कह रहा है शोरे-दरियासे समन्दरका सुकूत[1] —
"जिसका जितना ज़र्फ़[2] है उतना ही वोह ख़ामोश है ॥"

इब्तिदासे[3] आजतक 'नातिक़' यही है सरगुज़िश्त[4]।
पहिले चुप था, फिर हुआ दीवाना, अब बेहोश है ॥

किये जा याद सारी उम्र उस हल्लाले-मुश्किलको[5]।
किसी दिन एक हिचकीमें गिरह खुल जायगी दिलकी ॥

मुबारक तुमको जलवा, और चश्मे-ख़ूँफ़िशाँ[6] मुझको।
तेरा नज़्ज़ारा करलूँ, इस क़दर फ़ुर्सत कहाँ मुझको ॥

वोह बेनक़ाब कहीं बेनक़ाब होता है।
कि आफ़ताब ख़ुद अपना हिजाब[7] होता है ॥

मजाल किसकी जो दे साथ उसकी मंजिलतक।
कहीं वही न हो, सूरत बदलके रहबरकी[8] ॥

सबसे बेहतर मै, कि मेरा ज़िक्र उस महफ़िलमें है।
मुझसे बेहतर वोह कि जिसकी याद उसके दिलमें है ॥
मुझसे छुप सकती नहीं है आपकी कोई अदा।
दिल मेरा आईना है और आपकी महफ़िलमें है ॥

राज़[9] अगर कौनैनके[10] ज़ाहिर हुए 'नातिक़' तो क्या।
काश वोह मअ़लूम हो जाये जो उसके दिलमें है ॥

---

[1] शान्त वातावरण; [2] पात्रता, गौरव; [3] प्रारम्भसे, शुरूअ़से; [4] स्थिति; [5] मुश्किल हल करनेवालेको; [6] रक्त बरसानेवाली आँखे; [7] पर्दा; [8] पथ-प्रदर्शककी; [9] भेद; [10] दोनों ससारके।

या जुदाईके हैं दिन नज़दीक या मरनेके दिन।
कह रहे हैं वोह कि अब कोई जफ़ा बाक़ी नहीं॥
डूबता हूँ मैं मदद मेरी करे जो कोई हो।
मुझको एहसासे-ख़ुदा[1]-ओ-नाख़ुदा[2] बाक़ी नहीं॥

ऐ शमअ़! तुझपै रात यह भारी है जिस तरह।
मैंने तमाम उम्र गुज़ारी है इस तरह॥

उन जफ़ाओं पर भी दिल क्या जाने क्यों गिरवीदा[3] है?
इश्क़ है इक राज़[4] जो आशिक़से भी पोशीदा[5] है॥

जौक़े-फ़नाका[6] भी कोई हासिल[7] नहीं रहा।
मरता हूँ मैं कि मरनेके क़ाबिल नहीं रहा॥

छुपकर हवाके झोंकोंसे आती हैं बिजलियाँ।
'नातिक़'! चमन यह रहनेके क़ाबिल नहीं रहा॥

सर आँखोंपर ग़मे-दुनिया-ओ-उक़बा[8]।
मगर अब दिलमें गुंजाइश कहाँ है॥

वोह नाज़ुक वक़्त आया आख़िरकार।
कि हर रंग अब तबिअ़तपर गिराँ है॥

दिल-शिकन[9] साबित हुआ हर आसरा मेरे लिए।
कोई दुनियामें नहीं मेरे सिवा मेरे लिए॥
शाहराहे-आ़मसे[10] रुसवाइये-मंज़िल[11] न कर॥
कुछ नई राहें निकाल ऐ रहनुमा,[12] मेरे लिए॥

---

[1]-[2]ईश्वरका और मल्लाहका ज्ञान; [3]अनुरक्त, [4]भेद, [5]छिपा हुआ; [6]मृत्युके शौक़का, [7]लाभ, [8]लोक-परलोककी चिन्ता, [9]दिलको चोट पहुँचानेवाला; [10]आम रास्तेसे, [11]मंजिलकी बदनामी; [12]मार्ग-दर्शक।

दैरो-हरममें[1] बहस थी यह दिल कहाँ रहे ?
आखिरको तय हुआ कि यह बेख़ानुमाँ[2] रहे ॥

सौ तीर ज़मानेके एक तीरे-नज़र तेरा।
अब क्या कोई समझेगा दिल किसका निशाना है ॥

यह असर आया कहाँसे इक शिकस्ता[3] साज़से।
तेरी ही आवाज़ है मज़लूमकी[4] आवाज़में ॥

तबस्सुम[5] उनके लबपर एक दिन वक़्ते-अ़ताब[6] आया।
उसी दिनसे हमारी ज़िंदगीमें इन्क़लाब आया ॥
चलो देखें तो 'नातिक' अपनी हदसे बढ़ न आया हो ?
उठा है शोर कअ़बेमें कि इक खाना-ख़राब आया ॥

'नातिक़'से चलो पूछ ले असरारे-मुहब्बत[7]।
फ़िल्जुमला ग़नीमत है कि दीवाना नही है ॥

निगाहे बाग़बाँकी बार-बार उठती है उस जानिब[8]।
गिरे जाते है एक-एक करके सब तिनके नशेमनके[9] ॥

कभी दामाने-दिलपर दाग़े-मायूसी नहीं आया।
इधर वअ़दा किया उसने, उधर दिलको यक़ीं आया ॥
मुहब्बत-आशना दिल मज़हबो-मिल्लतको क्या जाने ?
हुई रोशन जहाँ भी शमअ़ परवाना वहीं आया ॥

मेरी जानिबसे उनके दिलमें किस शिकवेपै[10] कीना[11] है।
वोह शिक्वा जो ज़बाँ पर क्या अभी दिलमें नही आया ॥

---

[1]मन्दिर-मस्जिदमे; [2]बगर घरबारके; [3]टूटे हुए; [4]पीडितकी; [5]मुसकान; [6]क्रोधके समय; [7]प्रेम-भेद, [8]तरफ; [9]नीडके, घोसलेके, [10]शिकायतपर; [11]मैल, रजिश ।

हयाते-बेखुदी[1] कुछ ऐसी ना महसूस[2] थी 'नातिक'।
अजल[3] आई तो मुझको हस्तीका यक़ीं आया॥

मज़ेपै किस्सा आया था कि नज़्मे-जिंदगी[4] बिगड़ा।
कहाँपर खत्म कर दी बेवफ़ाने दास्ताँ मेरी॥

दिलमें है सरमायए-कौनैन[5] राहतके[6] सिवा।
दोनों आलम है मेरे क़ब्ज़ेमें किस्मतके सिवा॥

आवाज़े-दिलकश उसकी दिलमें छुपी है ऐसी।
धीमे सुरोंका नग़मा हर साँसकी सदा है॥

जब्त करना चाहिए जो जब्त हो सकता नहीं।
आँखमें आँसू भरे बैठा हूँ रो सकता नहीं॥

जोशे-गिरिया[7] और अँधेरी रात है।
क्या घटा है क्या भरी बरसात है॥

देखकर उनको, नजरमे यह असर होता है।
जिस तरफ देखिए इक हुस्न नजर आता है॥

सकून[8] जबसे है खतरा यह दिलको हरदम है।
कहीं वोह पूछ न बैठें कि दर्द क्यों कम है?

इक क़यामत है इबारत[9] आपके वअ़दोंकी भी।
दिन गुज़रते जायेंगे मअ़नी बदलते जायेंगे॥

हम सुखन[10] उससे रहूँ 'नातिक' मेरा मतलब यह है।
वर्ना कुछ मअ़नी नहीं होते मेरी तकरीरके॥

---

[1]तल्लीन जिन्दगी; [2]अनजानी-सी; [3]मौत; [4]जीवन-व्यवस्था; [5]लोक-परलोककी निधि; [6]चैनके; [7]रोनेका जोश; [8]चैन, आराम; [9]भाष्य, अर्थ, मतलब; [10]बात करता रहूँ।

जवाबे-साफ़ सुनकर पागया सब कुछ फ़क़ीर उनका।
सदा देनेसे मतलब था फ़क़त आवाज़ सुन लेना॥

उनके तेवर भी न बिगड़े बात भी अपनी बनी।
हाल हम कहते रहे वह दास्ताँ समझा किये॥

बर्क़ से क्या हमको चश्मक, बाग़बाँसे क्या ख़लिश।
बात यह है आशियाँको आशियाँ समझा किये॥

गिरता है कोई आगमें क्या कीजिए? मगर—
शबनमको[1] आफ़ताबकी[2] क़ुरबत[3] पसन्द है॥

अपने ही पैरवोंसे[4] हुआ हो जो पाएमाल।
मैं राहमें वोह नक़्शे-कदम[5] हूँ मिटा हुआ॥

ख़ुशो-नाख़ुश मुझे जन्नतमें बसर करना है।
इक ज़रा रंग तबीअतका बदलना होगा॥

इक सुनहरी सतर थी जिसकी शुआए-बर्क़ेतूर[6]।
आज वोह ख़त साहेबे-मेअ्राजके नाम आ गया॥

शायद क़ुबूल होनेका वक़्त आ गया क़रीब।
ताक़त जवाब देने लगी हर सवालमें॥

ग़ुरबतकी[7] बेकसीपर[8] कर लूंगा सब्र यारब!
वापिस मगर न करना इस हालसे वतनमें॥

ग़र्क़ कर देती है किश्ती, नाख़ुदाकी[9] बेख़ुदी[10]।
छोड़ दे वह मैकदा साकी जहाँ मदहोश है॥

---

[1]ओसको; [2]सूरज़की; [3]नजदीकी; [4]अनुयायियोसे; [5]चरण चिह्न; [6]तूर पर्वतपरकी बिजलीकी किरण; [7]परदेशकी; [8]असहाय स्थितिपर; [9]मल्लाहकी; [10]अज्ञानता, बेहोशी।

सफरमें सईए-कामिल[1] हो तो निकले राह मंजिलकी।
कि दरियाकी रवानीसे बिना[2] पड़ती है साहिलकी॥

बढ़ी न कतरेकी वुसअत[3] हुबाबसे[4] आगे।
मगर दिखा तो गया इक झलक समन्दरकी॥

गदाए-मैकदा[5] था अब हूँ मैं शेख़े-हरम[6] 'नातिक'।
कहीं ऐसा न हो पहचान ले कोई यहाँ मुझको॥

१६ फरवरी १९५२ ई०

---

[1]पूर्णरूपेण प्रयत्न, [2]नींव, [3]विस्तार; [4]पानीके बुलबुलोंसे; [5]मदिरालयका भिक्षुक; [6]मस्जिदका शेख़।

मौलाना अली हैदर तबातबाई 'नज्म' लखनऊमे १८५० ई० के करीव उत्पन्न हुए। आप अपने युगके अरबी-फारसीके ख्यातिप्राप्त विद्वान थे। जब वाजिदअलीशाह कलकत्तेके मटियावुर्जमे नजरवन्द थे, तव आप ही उनके साहबजादोके शिक्षक थे। नवाबकी मृत्युके वाद हैदरावाद कॉलेजके प्रोफेसर नियुक्त हुए और उस पदपर ३० वर्पतक आसीन रहे। वहाँसे आपको पेशन मिली और नवाब हैदराबादने आपको युवराजका शिक्षक बनाकर गौरव प्रदान किया। साथ ही नवाव हैदरजंगका खिताव भी अता फर्माया। उस्मानिया यूनिवर्सिटी स्थापित होनेपर आपकी सेवाये वहाँ भी ली गई और वहाँसे विदेशी भापाके अनुदित ग्रन्थ जितने भी प्रकाशित होते थे, उन्हे प्रेसमे जानेसे पूर्व आप निरीक्षण करते थे। 'शरर', 'साहा' और महाराज किशनप्रसाद 'शाद'-जैसे ख्यातिप्राप्त साहित्यिक आपके ही शिष्य थे। आपने अग्रेजी कविताओको उर्दूमे इतने लालित्यपूर्ण और स्वाभाविक ढगसे नज्म किया है कि वे अनुवाद न मालूम होकर उर्दूकी ही निधि बन गई है। उनका उल्लेख नज्मोके इतिहास (शाइरीके नये दौर) मे किया जायगा। यहाँ तो केवल आपके चन्द गजलोके अश-आर इतिहासका क्रम बनाये रखनेके लिए दिये जा रहे हैं। आप गजलके रगमे वेहतरीन कहनेवालोमे-से एक थे। आपका २३ मई १९३३ ई० को निधन हो गया।

न शोख़ीकर[1] हयाकी बज़्ममें[2] अब फ़र्क़ आता है।
गुबार ऊँचा न हो जाये कहीं हम ख़ाकसारोंका[3] ॥

कहाँतक रास्ता देखा करें हम बर्क़-ख़िरमनका[4]।
लगाकर आग देखेंगे तमाशा अब नशेमनका ॥

अदाए-सादगीमें कंघी-चोटीने ख़लल डाला।
शिकन[5] मायेपै,गेसूमें[6] गिरह, अबरूमें[7] बल डाला ॥

आगया फिर रमज़ाँ क्या होगा?
हाय ऐ पीरेमुग़ाँ! क्या होगा?

कहने सुननेसे ज़रा पास आके बैठ गये।
निगाह फेरके त्योरी चढ़ाके बैठ गये ॥
निगाहे-यास[8] मेरी काम कर गई अपना।
रुलाके उट्ठे थे वोह मुस्कराके बैठ गये ॥

लिहाज़ इतना अभीतक हज़रते-नासेहका बाक़ी है।
वोह जो कुछ-हुक्म फ़र्माते हैं, कह देते हैं हम 'अच्छा' ॥

बन्दा तो इस इक़रारपै बिकता है तेरे हाथ।
लेना है अगर मोल तो आज़ाद न करना ॥

इस छेड़में कोई जो न मरता हो तो मर जाये।
वअ़दा है कहीं और, इरादा है कहीं और ॥

क़ाबूसे नफ़से-बदको[9] निकलने कभी न दे।
फिर शेअ़र है, जो यह सगे-दीवाना[10] छुट गया ॥

---

[1]चुलबुली अदाएँ न दिखा; [2]लाजमें निर्लज्जताका आभास होने लगा है; [3]सेवकोंके हृदय कहीं आपे-से बाहर न हो जाये; [4]खलिहान जलानेवाली बिजली का; [5]बल; [6]भवोंमें; [7]ज़ुल्फ़ोमें, [8]निराश नजर; [9]इन्द्रिय-विकारोंको; [10]पागलकुत्ता।

लाया है कोई साथ, न ले जायगा कोई।
दौलत हो और आदते-एहसाँ[1] न हो, तो क्या?

एहसान ले न हिम्मते-मर्दाना छोड़कर।
रस्ता भी चल तो सब्ज़ए-बेगाना[2] छोड़कर॥

आँखोंमें पड़के कहती है यह ख़ाके-रफ़्तगाँ[3]।
"सुर्मा ज़रूर दीदए-इबरतमें[4] चाहिए॥"

न देख अन्दाज़ आईनेमें अपना, पूछले हमसे।
ज़माने भरसे अच्छा और तेरे सरकी क़सम अच्छा॥

—शेरुल्-हिन्द पहला भाग
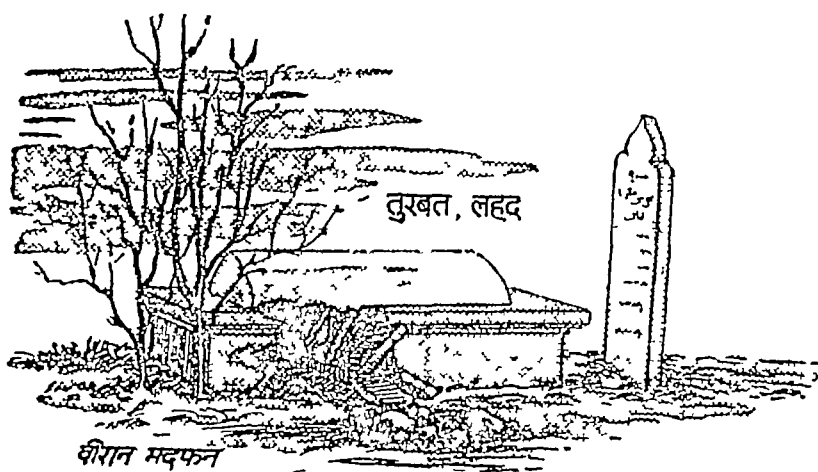
जवाब नामेका[5] क़ासिद[6] मज़ारपर[7] लाया।
कि जानता था उसे तावे-इन्तज़ार[8] नहीं॥

७ नवम्बर १९५१

---

[1]परोपकारी भावना; [2]हरी भरी घासको; [3]मार्गकी धूल; [4]नसीहतकी आँखोमे; [5]पत्रका; [6]पत्रवाहक; [7]कब्रपर, [8]प्रतिक्षा सहनकी शक्ति।

शेर-ओ-सुख़न

भाग ३-४

[मौजूदा दौरके ग़ज़ल-गो-शाइरे-आज़म]

पुरातन शाइरीका कायाकल्प और लोकोपयोगी भावोंका समावेश,
पवित्र प्रेमकी आराधना, नारीका सम्मान और १९०१ से
१९५७ ई० तककी घटनाओंका गजलपर प्रभाव

तीसरा भाग

[देहलवी रंगके सर्वश्रेष्ठ शाइर]

१. 'शाद' अजीमाबादी
२. अमरनाथ 'साहिर'
३. दत्तात्रिय 'कैफ़ी'
४. 'आज़ाद' अन्सारी
५. 'हसरत' मोहानी
६. 'फ़ानी' बदायूनी
७. 'वहशत' कलकतवी
८. 'यगाना' चगेजी
९. 'अमजद' हैदराबादी
१०. 'आसी' गाजीपुरी
११. 'असगर' गोण्डवी
१२. 'जिगर' मुरादाबादी

चौथा भाग

[दाग स्कूलके उस्ताद शाइर]

१. 'सीमाब' अकबराबादी
२. लब्भूराम 'जोश'
३. 'नातिक' गुलाठवी
४. नवाब 'साइल'
५. 'आगाशाइर' किजलबाश
६. 'बेख़ुद' देहलवी
७. 'नूह' नारवी
८. 'अहसन' माहरहरवी
९. 'नसीम' भरतपुरी
१०. 'बेख़ुद' बदायूनी
११. 'आसी' उदनी
१२. 'शागल' देहलवी
१३. 'अहसान' रामपुरी आदि ३१ शाइर

इनके अतिरिक्त महरूम, ताजवर नजीबाबादी, अकबर हैदरी आदिका कलाम

मूल्य प्रत्येक भागका तीन रुपया

दर्द— वहदतने[1] हर तरफ़ तेरे जलवे दिखा दिये।
पर्दे तअय्युनातके[2] जो थे उठा दिये॥

साकिव— शबेग़मकी तन्हाइयोंको न पूछो।
जिधर देखता था ख़ुदा ही ख़ुदा था॥
इज़ाफ़ा[3] कुछ न हो अपने यक़ीनमें।
अगर उठ जायें पर्दे दरमियाँ से॥

दर्द— पूछ मत क़ाफ़िलए-इश्क़[4] किधर जाता है।
राहरव[5] आपसे उस रहसे गुज़र जाता है॥

साकिव— ऐ किब्लाए[6]-इश्क़! किधर जा रहा हूँ मैं।
हर दिल यह सदा है कि "दीवाना हो गया"॥

दर्द— हर आह[7] शररबार[8] है जूं सर्द चिरागाँ।
क्या आग इलाही मेरे सीनेमें भरी है॥

साकिव— सीनए-सोज़ाँमें 'साकिव' घुट रहा है वोह धुआँ।
उफ़ करूँ तो आग दुनियाको हवा देने लगे॥

१९३४ से प्रकाशित दीवाने 'साकिव' ४२४ पृष्ठका हमारे समक्ष है। आगे हम मिर्ज़ाके सभी रंगके चुने हुए अशआर दे रहे हैं—

एक उनपर क्या ज़मानेपर है मेरा बारे-ख़ूं[9]।
ज़िबह[10] मैं होता गया आलम तमाशाई रहा॥
फूलको तोड़के देखो, असरे-वस्लो-फ़िराक़[11]।
मौत है चाहनेवालोंसे जुदा हो जाना॥
अहले-बातिल[12] डालते हैं तफ़रक़-ए-चश्मे-हक़[13]।
वरना काबेमें वोह क्या था, जो कलीसामें न था?

---

[1]एक-ईश्वरवादने; [2]सीमाओंके बन्धन, [3]वृद्धि, बढ़ौतरी; [4]प्रेमियोंका दल; [5]यात्री; [6]प्रेमरूपी ईश्वर; [7]साँस; [8]चिनगारियाँ बरसानेवाली; [9]क़त्ल करनेका अभियोग; [10]क़त्ल; [11]मिलन और विरहका प्रभाव; [12]मायावी; [13]वास्तविकतामें भेद।

हुस्न और इश्क़के नैरंग ख़ुदा ही जाने।
शमअ़ जलती है कि दिल जलता है परवानेका॥

ज़मानेवालोंको पहचानने दिया न कभी।
बदल-बदलके लिबास अपने इनकलाब आया॥
सिवाय यास[1] न कुछ गुम्बदे-फ़लकसे[2] मिला।
सदा[3] भी दी तो पलटकर वही जवाब आया॥

मै नही, लेकिन मेरा अफसाना उनके दिलमें है।
जानता हूँ मै कि जिस रगमें यह नश्तर रह गया॥
आशियानेके तनज्जुलसे[4] बहुत ख़ुश हूँ कि वोह।
इस कदर उतरा कि फूलोंके बराबर रह गया॥

जीते जी साय-ए-दीवारे-चमन[5] तक न गया।
मरके क्या फूलका शरमिन्दए-एहसाँ होता॥

कुछ सम्भल जाता, अगर करवट बदल जाता मेरी।
यह मुझे दुश्वार था, उसके लिए मुश्किल न था॥

जो अच्छा कर नहीं सकते, तो क्यों तड़पूँ मै बिस्तरपर।
दुआ़ देना नहीं आता तो सीखो बद्दुआ़ देना॥

इज़्ज़तसे बज़्मे-गुलमें रहा आशियाँ मेरा।
तिनकोंकी क्या बिसात मगर नाम हो गया॥
इक मेरा आशियाँ है कि जलकर है बेनिशाँ।
इक तूर है कि जबसे जला नाम हो गया॥

मेरे पहलूसे अगर निकला तो मेरा क्या गया?
गुम शुदा दिल आप ही का एक मख़फ़ीराज़[6] था॥

---

[1]निराशा; [2]आकाशसे; [3]अवाज़; [4]पतनसे; [5]उपवनकी दीवारकी छाया; [6]छुपा हुआ भेद।

होश ही मुझको न था जब पहलुओंमें लूट थी।
मुझको क्या मालूम, क्या जाता रहा, क्या रह गया ?

सुबह समझे थे किसे ? 'साक़िब' शबेगम है तवील[1]।
दिलका कोई दाग़ होगा, जो चमककर रह गया॥

शहीदे-ग़मकी लाशपर न सर झुकाके रोइए।
वोह आँसुओंको क्या करे, जो मुँह लहूसे धो चुका॥

कोई तो दाद देता इस दर्दे-दिलकी आख़िर।
जब तुम न बोलते थे, तब मैं कराहता था॥

क़ैद करता मुझको लेकिन जब गुज़र जाती बहार।
क्या बिगड़ जाता ज़रा-सी देरमें सैयादका॥

चोट देकर आज़माते हो दिले-आशिकका सब्र।
काम शीशेसे नहीं लेता कोई फ़ौलादका॥

आये हो वक़्ते-दफ़्न तो शाना[2] हिलाके जाओ।
आँख उसकी लग गई है, जिसे इन्तज़ार था॥

मैयत[3] तो उठ गई वोह न आये नहीं सही।
'साक़िब' किसीके दिलपै, कोई इख़्तियार था ?

खोया इस इख़्तलाफ़ने[4] लुत्फ़े-विसाल[5] भी।
उनमें न इन्किसार[6] न मुझमें ग़ुरूर[7] था॥

बताइए मुझे कामयाब इश्क है कि जमाल[8]।
चमनमें फूल मिले मेरा एक पर न मिला॥

---

[1]बहुत लम्बी; [2]कन्धा, [3]अर्थी; [4]मतभेदने; [5]मिलन-आनन्द; [6]विनय; [7]घमण्ड; [8]रूप।

मेरी ज़बान उनके दहनमें[1] हो ऐ करीम[2]!
होना है फ़ैसला जो उन्हींके बयानपर॥
'साक़िब'! जहाँमें इश्क़की राहें हैं बेशुमार।
हैरान अक़्ल है कि चलूँ किस निशानपर?

महशरमें कोई पूछनेवाला तो मिल गया।
रहमत बढ़ी है मुझको गुनहगार देखकर॥
उन दोस्तोंमें वोह न हों या रब! जो वक़्ते-दीद[3]।
बीमार हो गये रुख़े-बीमार[4] देखकर॥

ज़रा देख परवाने करवट बदलकर।
सती हो गई शमअ़ महफ़िलमें जलकर॥

क़द्रदाँ पाके बदल जाते हैं आवारा-वतन।
जब तो निकले हुए मोतीको अ़दन याद नहीं॥

असीर[5] मैं तो हो चुका, ख़बर लो अपने पाँवकी।
कमरसे आगे बढ़ चली है, ज़ुल्फ़ पेचोताबमें॥

नाम मालूम है क़ातिलका मगर हश्रके दिन।
जाननेवालोंसे कहता हूँ मुझे याद नहीं॥

अब और इसके सिवा, क्या असर हो नालोंका।
कि फ़र्क़ आ गया, ज़ालिमके ख़्वाबे-राहतमें[6]॥

अ़दू,[7] सैयादो-गुलचीं क्यों हुए मेरे नशेमनके?
यह तिनके भी हैं इस क़ाबिल? जिन्हें बरबाद करते हैं॥

---

[1]मुँहमें; [2]ईश्वर; [3]देखनेके समय; [4]बीमारका चेहरा; [5]बन्दी; [6]सुखकी नीदमें; [7]शत्रु।

चमनवालो ! यह तिनके आशियाँके चुभ नहीं सकते।
निशानी कुछ तो बहरे-ख़ानुमाँ-बरबाद[1] रहने दो॥

सैकड़ों नाले करूँ लेकिन नतीजा भी तो हो।
याद दिलवाऊँ किसे जब कोई भूला भी तो हो॥
उनपै दावा क़त्लका महशरमें आसाँ है मगर।
ख़ूने-वफ़ाका ख़ून है, खंजरपै ज़ाहिर भी तो हो॥

रोनेसे हया शमअ़की ज़ाहिर हो तो क्योंकर?
उरियाँ[2] है मगर बीचमें महफ़िलके खड़ी है॥*

दौरे-फ़लक था जिसके बुझानेकी फ़िक्रमें।
वोह शमअ़ रात सुबहसे पहले ही जल गई॥

फटना पत्थरका भी अच्छा नहीं क्या ज़िक्रे-दिल?
धार उलटी हो गई थी तेशए-फ़रहादकी॥

बातें अहले-फ़क्ऱसे[3] क्यों हो कि है ख़ौफ़े-सवाल।
मुनअ़मो[4]! यह होशियारी नशए-दौलतपै[5] भी है!!

जलवए-हुस्न[6] इक इशारेमें बहुत कुछ कह गया।
मै नहीं समझा मगर हाँ दिल तड़पकर रह गया॥

---

*घूरते है सैकड़ों परवाने उरियाँ देखकर।
मारे गैरतके गड़ी जाती है महफ़िलमें शमअ़॥ —अज्ञात

[1]घरबार लुटनेकी; [2]नग्न; [3]भिक्षुकोसे; [4]धनिको; [5]दौलतका नशा होने पर भी इतनी होशियारी कि ग़रीबोसे इस भयसे बात नही करते कि कुछ सवाल न कर बैठे; [6]रूपका चमत्कार।

हादिसोंके[1] जलजलेसे[2] जामेदिल[3] छलका किया।
एक चुल्लू खून ही क्या? बहते-बहते बह गया॥*

मुझको यक़ीने-वादए-फ़रदा[4] जरूर था।
मुश्किल यह आ पड़ी थी कि दिल नासबूर[5] था॥

मेरी दास्ताने‌ग़मको, वोह ग़लत समझ रहे हैं।
कुछ उन्हीकी बात बनती अगर एतबार होता॥
दिले पारा-पारा तुझको कोई यूँ तो दफ़्न करता।
वोह जिधर निगाह करते उधर इक मज़ार होता॥

खुश है सैयाद नशेमन मेरा जल जानेसे।
मुझको बतलाये वोह आबाद जो वीराँ न हुआ॥

शरीके क़ैद थे जज़बाते-दिल,[6] मगर बेकार।
क़फ़स था ऐसा कि नालोंको रास्ता न मिला॥

दिलसे मैं कह रहा हूँ—"तुझपर हुआ फ़िदा[7] मैं"
दिल मुझसे कह रहा है—"ओ बेख़बर! जला मैं"
फिर और किस तरहसे उजड़े मकाँको सजता।
क़सरे-लहदमें[8] जाकर तसवीर हो गया हूँ॥
क़ूवते-ग़म देख, जोरे-नातवानीपर[9] न जा।
जलजले[10] आलममें थे, जब दिल मेरा बेताब था॥

---

*दिलकी बिसात क्या थी निगाहे-जमालमें।
यह आईना था टूट गया देख-भालमें॥

—सीमाब अकबराबादी

[1]दुर्घटनाओंके; [2]कम्पनसे; [3]हृदय-पात्र; [4]आगामी वादेका यकीन; [5]बेसब्र; [6]हृदय-भाव; [7]आसक्त, अनुरक्त; [8]क़ब्ररूपी महलमें; [9]निर्बलताकी अधिकतापर; [10]भूकम्प।

यह एक वादिये-पुरख़ारे-इश्क[1] थी 'साकिब' !
उलझके रह गई हर दिलमें गुफ़्तगू मेरी ॥

जो आँख हो तो देखिए, न पूछिए कि क्या किया।
चिरागे-बज़्म[2] हो गया, जला किया, हँसा किया ॥

उसकी रहमतपै[3] गिरे पड़ते हैं इसियाँवाले[4]।
हश्र काहेको है इक जलस-ए-रिन्दाना[5] है ॥

रोजे-महशरके उजालेमें खिला मेरा लहू।
तुम तो तुम, धब्बा है दामाने-शबे-फ़ुरकतपै भी ॥

खुद उनका हुस्न मेरी दादख़्वाही[6] उनसे करता है।
वोह आइना लिये हैं और मुझको याद करते हैं ॥

सदायें[7] देके हमने एक दुनिया आजमा देखी।
यही सुनते चले आये—"बढ़ो आगे, यहाँ क्या है" ॥

किसको शौक़े-दीदे[8]-बेताबी[9] नहीं ?
दिल न ठहरा इक तमाशा हो गया ॥

यह है बहते हुए दरियाकी आवाज़।
"वहीं जाना है आये थे जहाँसे" ॥

मैं रो रहा हूँ जो दिलको तो बेकसीके लिए।
वगर्ना मौत तो दुनियामें है सभीके लिए ॥

---

[1]प्रेमकी कण्टकाकीर्ण घाटी; [2]महफिलका दीपक; [3]दयापर; [4]अपराधी; [5]मद्यपोंका मेला; [6]हुस्न अपने सौंदर्यकी प्रशंसा आशिकसे सुननेका अभिलाषी है; [7]आवाजे; [8]देखनेकी लालसा; [9]उत्सुकता।

चिराग़े-अक़्ल भी गुल है शबेग़मकी सियाहीसे।
न मैं मालूम होता हूँ, न तू मालूम होता है॥

इक नया दिल जुल्म सहनेको बनाना चाहिए।
हो तो सकता है मगर उसको ज़माना चाहिए॥

हँसनेवाला रो रहा है, आफ़रीं[1] ऐ वक़्ते-नज़अ़[2]!
कुछ कहा शायद मेरी डूबी हुई आवाज़ने॥

गुलशनकी तरफ़ मुँह किये बैठा हूँ क़फ़समें।
शायद कोई दमसाज[3] निकल आये इधर भी॥

इ़बरतसे[4] देख पंजएक़ातिल[5] रँगा हुआ।
रहगीरोंसे न पूछ कि दिल मेरा क्या हुआ॥

नहीं मालूम पाये-सईमें[6] काँटे कहाँसे हैं?
मुरादें[7] हटके चलती हैं निकलता हूँ जिधर होकर॥

क्या देखता आसारे-सहर[8] मैं शबे-फ़ुरक़त[9]।
वोह जोशपर आँसू थे कि दिल डूब रहा था॥

सिज्देका[10] काम आज न लेंगे जबींसे[11] हम।
नक़्शे-क़दम[12] उठायेंगे उनके ज़मींसे हम॥

लहदपर[13] तास्सुफ़के[14] मअ़नी न समझा।
यह काहेका रोना है जब मैं बुरा था?

नादाँ भी हो गये मेरे नालोंसे होशियार।
अब आपके सिवा कोई ग़ाफ़िल नहीं रहा॥

---

[1]शाबास; [2]मृत्यु-समय; [3]मित्र, साथी; [4]नसीहत हासिल करनेकी नजरसे; [5]खूनीके हाथको; [6]सफलताके पाँवमें; [7]अभिलाषायें; [8]सुबह होनेकी रूपरेखा; [9]विरह रात्रिमें; [10]मस्तक झुकानेका; [11]मस्तकसे; [12]चरण चिह्न; [13]कब्रपर; [14]पश्चात्तापके।

सहने-ज़िंदाँ-ओ-चमन[1] मेरी नज़रमें एक है।
क़ैदसे घबराये वोह जो रंजसे आज़ाद था॥

कम-से-कमपर आज राज़ी हैं शहीदोंके मज़ार।
आप हँस देंगे तो समझूँगे चिराग़ाँ[2] हो गया॥
ख़्वाहिशे - दुनिया - ए - हुस्नो - इश्क़[3] है।
वर्ना फिर मैं किसलिए, तू किसलिए?

दिलके होते भी कहीं दर्द जुदा होता है।
इक फ़क़त मौतके आजानेसे क्या होता है?

पेशे-अरबाबे-करम[4] हाथ वोह क्या फैलाता?
जिसको तिनकेका भी एहसान गवारा[5] न हुआ॥

जवाब ज़ख़्मे-जिगर दे रहा है हँस-हँसकर—
"वही तो दिल है कि जो ख़ुश रहे मुसीबतमें"॥

बढाई जिसने तेरी नींद मुझको तड़पाकर।
वोह मेरी उम्रे-गुज़िश्ता[6] न थी, कहानी थी॥

न जागते न सही, सुनके नींद तो आती।
यूँ ही सही मेरा क़िस्सा कभी बयाँ होता॥

मेरी तरह है हाल मेरा, उनका ख़ैर-ख़्वाह।
आशिक़ है उनकी नींद मेरी दास्तान पर॥

---

[1]कारागारका आँगन और उपवन; [2]दीपावलि; [3]रूप और प्रेमका संसार चाहता हूँ; [4]दानवीरोंके सामने, [5]पसन्द; [6]आप बीती घटना।

दिलने अपनी हसरतोंके क़ाफ़िले ठहरा दिये।
इस क़दर आबाद पहले कूचए-क़ातिल न था।।

ख़िलवत-पसन्द[1] हश्रसे[2] ख़ुश होके क्या करे?
वादेका रोज़ जलवागहे-आम[3] हो गया।।

उसके सुननेके लिए जमा हुआ है महशर।
रह गया था जो फ़साना मेरी रुसवाईका।।

नज़अ[4] इक ईद है, वोह रोते हुए आये हैं।
ऐ दिलेज़ार यही वक़्त है मर जानेका।।

नशेमन आगसे बचता तो ख़ौफ़ बर्क़का था।
जो बाग़बाँ भी न होता तो आस्माँ होता।।

मकाँ मुनअ़िमका[5] सोनेसे, यह ख़ूने-दिलसे बनता है।
ख़सो-ख़ाशाकका घर[6] भी बड़ी मुश्किलसे बनता है।।

किसीका रंज देखूं यह नहीं होगा मेरे दिलसे।
नज़र सैयादकी झपके तो कुछ कह दूँ अ़नादिलसे[7]।।
बर्क़के गिरनेसे मातम एक ही होता तो ख़ैर।
आशियाँके साथ आँच आई मेरी हसरतपै भी।।

हो गये बरसों कि आँखोंकी खटक जाती नहीं।
जब कोई तिनका उड़ा घर अपना याद आया मुझे।।

ग़नीमत है क़फ़स, फ़िक्रे रिहाई क्या करें हमदम!
नहीं मालूम अब कैसी हवा चलती है गुलशनमें।।

---

[1]एकान्तके इच्छुक; [2]प्रलयके बादकी स्थितिसे; [3]जनसमूह एकत्र होने-का स्थान; (एकान्त प्रिय अपनी प्रेयसीको जन समूहमे देखकर कैसे प्रसन्न हो) [4]मृत्युका वक़्त; [5]धनिकका महल; [6]गरीबका झोपड़ा; [7]बुलबुलोसे।

देखा किये वोह चान्दको अपने गुमानपर।
मैं ख़ुश हुआ कि तीर चले आस्मानपर॥

ग़ुस्सेके बाद तेग़ज़नीका[1] महल[2] नहीं।
पहले ही ज़िबह[3] होगये चीने-जबींसे[4] हम॥

कुछ वफ़ा कुछ ज़ुल्मके आसार रहने दीजिए।
ख़ूनमें डूबी हुई तलवार रहने दीजिए॥

शिकायत ज़ुल्मे-ख़ंजरकी नहीं, ग़म है तो इतना है।
ज़बाने-ग़ैरसे क्यों मौतका पैग़ाम आता है॥

दाग़ेदिल क़ब्रकी ज़ुल्मतमें है बेनूर ऐसा।
जैसे देखा हो चिराग़ आपने वीरानेका॥ *

क्या कहे बेज़बाँ असीरे-क़फ़स[5]।
क्यों हुआ क़ैद, क्यों रिहा न हुआ॥

बदल-बदलके जहाँ एतबार खो बैठा।
ख़ुशीमें भी मेरे दिलको मलाल होता है॥

हिज्र के दर्दको बढ़ने दे कि है मुज़दए-वस्ल[6]।
वही घटता है जहाँमें जो सिवा होता है॥

---

*रोशन है इस तरह दिले-वीराँमें एक दाग़।
उजड़े नगरमें जैसे जले है चिराग़ एक॥

—मीर

[1]तलवार चलानेका; [2]समय, मौका-महल; [3]घायल, क़त्ल; [4]चढ़े मस्तकसे; [5]पिंजरेका बेज़बान पक्षी; [6]मिलनका शुभ संदेश।

इस दर्दे-मुहब्बतके[1] अन्दाज निराले हैं।
घटता तो मरज़ होता, बढ़ता तो दवा होता।।

क़हक़हे हमने सुने दुनियामें और फ़रियाद भी।
एक ही रस्तेसे गुज़रे शाद[2] भी नाशाद[3] भी।।

नब्ज़ हो या दिल हो इसका क्या इलाज?
डूबनेवाला उभर सकता नहीं।।

न आँख बन्द करूँ मैं तो क्या करूँ या रब!
वोह आ रहे हैं तमाशाए-जाँ-कनीके[4] लिए।।

मुट्ठियोंमें ख़ाक लेकर दोस्त आये वक़्ते-दफ़्न।
जिन्दगी भरकी मुहब्बतका सिला देने लगे।।

लहद[5] सियाह है 'साक़िब' कोई चिराग़ नहीं।
और इसपै शाम हुई है दयारे-ग़ुरबतमें[6]।।

न समझा मअ़निए-गोरो-कफ़न समझा तो यह समझा।
थका था मैं लिपटकर सो रहा दामाने-मंजिलसे।।

कहनेको मुश्ते-परकी[7] असीरी[8] तो थी मगर।
ख़ामोश हो गया है, चमन बोलता हुआ।।

यूँ तो मुश्ते-ख़ाक था दिल, ख़ून होकर बह गया।
लेकिन इस क़तरेमें वोह कुछ था, जो दरियामें न था।।

---

[1]प्रेम-टीसके; [2]प्रसन्न; [3]अप्रसन्न; [4]मृत्युकी छटपटाहट देखनेको; [5]क़ब्र; [6]परदेशमें, सफरमें; [7]मुट्ठीभर परोंकी; [8]क़ैद।

तीरगी[1] नाम है दिलवालोंके उठ जानेका।
जिसको शब[2] कहते हैं मक़तल[3] है वोह परवानोंका॥

बला है अहदे-जवानीसे खुश न हो ऐ दिल!
सँभल कि उम्रकी दुनियामें इनक़लाब आया॥

यह किसने ग़मकदा[4] दुनियाका नाम रक्खा है?
हमें तो कोई यहाँ दर्द-आश्ना[5] न मिला॥

नहीं मालूम, वोह मैं हूँ कि कोई और असीर[6]।
सुन रहा हूँ कि गिरफ़्तारको आज़ाद किया॥

मेरे ज़ुल्मतकदेमें रोज़े-रोशनका[7] गुज़र कैसा?
सलामत है शबे-ग़म तो, उजाला हो नहीं सकता॥

नाज़ो-अदाकी[8] चोटें, सहना तो और शै है।
ज़ख़्मोंको देख लेता कोई, तो देखता मैं॥
बर्क़-जमाले-वहदत[9]! तू ही मुझे बता दे!
शोला[10] तो दूर भड़का, फिर किसलिए जला मैं?

ज़िन्दगीमें क्या मुझे मिलती बलाओंसे निजात[11]।
जो दुआएँ की, वोह सब तेरी निगहबाँ[12] हो गईं॥
कम न समझो दहरमें[13] सरमाय-ए-अरबाबे-ग़म[14]।
चार बूँदें आँसुओंकी, बढ़के तूफ़ाँ हो गईं॥

जुज़-ज़मीने-कूए-जानाँ[15] कुछ नहीं पेशे-निगाह[16]।
जिसका दर्वाज़ा नज़र आया सदा[17] देने लगे॥

---

[1]अँधेरा, [2]रात्रि, [3]वधस्थल; [4]दुखोंका स्थान; [5]दुःखोंसे परिचित; [6]क़ैदी; [7]प्रकाशका, [8]हाव-भावों, नख़रोंकी; [9]एकेश्वरवादरूपी सौन्दर्यकी बिजली; [10]चिनगारी; [11]छुटकारा, [12]रक्षक; [13]संसारमें; [14]मित्रोंका सहृदयता-रूपी धन; [15]प्रेयसीके कूचेके अतिरिक्त; [16]दृष्टिमें; [17]आवाज़।

दिलके क़िस्से कहाँ नहीं होते ?
हाँ, वोह सबसे क्यों नहीं होते॥

कहूँ क्योंकर कि मैं कुछ भूल आया हूँ नशेमनमें।
मेरा सैयाद कहता है कि "क्या रक्खा है गुलशनमें ?"

जिसमें भरा हुआ है मेरी जिंदगीका हाल।
दुनियाको नींद आती है अब उस फ़सानेमें॥

दुआएँ दें मेरे बाद आनेवाले मेरी वहशतको।
बहुत काँटे निकल आये, मेरे हमराह मंजिलसे॥

नाले करता जा कि जोरे-नातवानी है बहुत।
झुक चला है चर्ख़ गिर जायेगा दो-इक तीरमें॥

तड़पा दिया है दिलको, शाबाश हम सफ़ीरो!
यूँ ही फिर इक सदा दो, टूटा क़फ़स, चला मैं॥

आशियाँ

गुलचीं बुरा किया जो यह तिनके जला दिये।
था आशियाँ मगर तेरे फूलोंसे दूर था॥

१० मई १९५३ ई०]

खानबहादुर मिर्जा जाफरअलीखाँ 'असर', लखनऊके एक प्रतिष्ठित और शिक्षित वर्गमे १२ जुलाई १८८५ ई० मे उत्पन्न हुए। जिनकी गोदियोमे आपका लालन-पालन हुआ, वे उर्दू जबानके मालिक थे। यही कारण है कि आप उर्दूके, विशेषकर लखनवी उर्दूके अधिकारी एव प्रामाणिक विद्वान् समझे जाते है। ख्याति प्राप्त शाइर होनेके अतिरिक्त आप उच्चकोटिके आलोचक एव गद्य-लेखक भी है। आपके अनेक महत्त्व-पूर्ण लेखो और आलोचनाओका सकलन 'छानवीन' हमारी नजरसे गुज़रा है। उसमे आपने देहलवी-लखनवी शब्दोके ठीकरूप बताने और उनके वास्तविक अन्तरको समझानेका सफल प्रयत्न किया है। आप 'मीर'के बहुत बडे भक्त है। उनके कलामको अपनी महत्त्वपूर्ण प्रस्तावनाके साथ 'मज़ामीर' शीर्षकसे दो भागोमे प्रकाशित कराया है। आपका 'मीर' और 'गालिब' पर एक महत्त्वपूर्ण और विस्तृत लेख जो 'आजकल' उर्दूमे

कई अकोमे क्रमश. प्रकाशित हुआ था, उससे ही आपके गभीर अध्ययन और विशाल सुरुचिका आभास मिल जाता है।

१६०६ ई० मे आप बी० ए० हुए। १६०६ मे डिप्टी कलेक्टर हुए और १६४० ई० मे कलेक्टरी-पदसे पेशन प्राप्त की, किंतु उसीके बाद इलाहाबादके एडीशनल कमिश्नरके पदपर अस्थाई तौरपर नियुक्त किये गये। चन्द साल काश्मीरसे गृह मन्त्री भी रहे। इतने उच्च राजकीय पदोपर रहते हुए भी बातचीत या पत्र-व्यवहारमे उर्दू भाषाका ही प्रयोग करते रहे है। बहुत ही आवश्यकता पड़नेपर अग्रेजी भाषाका व्यवहार करते है। आप 'अज़ीज'के शिष्य है, किन्तु कलाम उनसे जुदागाना रगमे उनसे बेहतर कहते है।

भाषाकी सादगी

'असर'का अन्दाजे-बयान सरल, स्वच्छ और प्रवाह-युक्त है। उनके दीवानको पढते हुए ऐसा प्रतीत होने लगता है कि किसी ऐसे चश्मेके किनारे बैठे हुए है, जो कल-कल करता हुआ अविराम गतिसे बहता हुआ जा रहा है। उनके सीधे-सादे शब्दो और छोटी-छोटी बहरोमे गागरमे सागर भरा होता है—

जैसे वह सुन रहे है, बैठे हुए मुकाबिल।
और दर्दे-दिल हम अपना उनको सुना रहे है॥

फिर हम कहाँ, कहाँ तुम, जी भरके देखने दो।
अल्लाह! कितनी मुद्दत तुमसे जुदा रहे है॥

यूँ उनकी याद है दिले-हैराँ[1] लिये हुए।
जैसे नसीम[2] गुंच-ओ-गुलके कनारमें[3]॥

जिन्दगी और जिंदगीकी यादगार।
पर्दा और पर्देपै कुछ परछाइयाँ॥

---

[1]आश्चर्य-चकित हृदय; [2]प्रातःकालीन पवन; [3]गोदमे, अर्थात् फूलोमे बसी हुई।

जब कहा उसने—"मुद्दआ[1] कहिए"।
सोचते रह गये कि क्या कहिए॥

फिर तुम्हें फ़ुरसत न हो या मैं ही आपेमें न हूँ।
यह बताते जाओ मेरे हक़में क्या मंज़ूर है?

अपनी बिसातभर तो हमने कमी नहीं की।
अब तुम बताओ क्योंकर रस्मे-वफ़ा निभाएँ?

दिल दुखाया है जिसने, शाद रहे।
और अब क्या दुआ करे कोई॥

करवटें क्यों बदल रहे हैं हुज़ूर?
अभी आग़ाज़[2] है कहानीका॥

मरनेका भी न सलीका आया।
यह तो दुश्वार कोई काम न था॥

खुद लिपटती रही दुनिया उससे।
जिसको दुनियासे कोई काम न था॥

रंगे-मीर

'असर' 'मीर'के प्रशंसक ही नही, उनके अनुयायी भी है। आपके कलाममे वही 'मीर'-जैसा सोजोगुदाज और अन्दाज़े-बयान है। 'मीर' और 'असर'के अशआर अगर खल्त-मल्त कर दिये जाये तो फिर उनको अलग-अलग करना आसान काम नही। बानगी देखिए—

नाम अलबत्ता सुनते आये हैं।
हम नहीं जानते खुशी क्या है?

ज़रा देर दम लेने दे ऐ फ़लक!
मुसीबतका एहसास[3] कम हो गया॥

---

[1]अभिप्राय; [2]प्रारम्भ; [3]ज्ञान, अनुभूति।

हर-इक रहगुज़रमें[1] है सरगोशियाँ[2]।
ख़ुदा जाने किसपर सितम हो गया ?

आ ! मेरे काटे अब नहीं कटतीं।
बेवफ़ा तेरे हिज्रकी[3] घड़ियाँ॥

हमने रो-रोके रात काटी है।
आँसुओंपर यह रंग तब आया॥

साँस भी ले सँभलके ऐ नादाँ !
सख़्त मुश्किल है रिश्ता उलफ़तका॥

ख़ूगरे-दर्द[4] हो अगर इन्साँ।
रंजमें भी मज़ा है राहतका[5]॥

हम समझते थे कि उलफ़त खेल है।
यह ख़बर क्या थी लहू रुलवाएगी॥

मौतमें जीस्त[6] देखनेवालो !
देखलो जीस्तमें फ़ना[7] है हम॥

मैं अगर उससे कहूँ भी तो बताओ क्या कहूँ ?
जब उसे मालूम है जो कुछ कि मेरे दिलमें है॥

मेरा हँसना है ज़ख़्मकी सूरत।
जो मुझे देखता है रोता है॥

डब-डबा आईं ख़ुद-ब-ख़ुद आँखें।
बार-हा ऐसा इत्तिफ़ाक़ हुआ॥

आँखमें अश्के-नदामत[8] डब-डबाकर रह गये।
हम यूँ ही अक्सर दुआको हाथ उठाकर रह गये॥

---

[1]मार्गमे; [2]कानाफूसी; [3]वियोगकी; [4]दु:खोका अभ्यस्त; [5]सुख-चैनका; [6]ज़िन्दगी; [7]मृतक; [8]गुनाहगारीकी शर्मसे आये हुए आँसू।

घुट-घुटके मर न जाये तो बतलाओ क्या करे ?
वह बदनसीब जिसका कोई आसरा न हो ॥

सौन्दर्य-वर्णन

जमालियाती (सौन्दर्य-विषयक) कलाम उर्दू शाइरीमे काफी मिलता है। खासकर पुराने लखनवी शाइरोके यहाँ तो जमालियाती रगकी भरमार है। मगर उनके यहाँ स्वाभाविक और दिलनशी शेर आटेमें नमक जितने मिलते है। अधिकांश अस्वाभाविक और अश्लीलतासे ओत-प्रोत है। कघी-चोटी, सुर्मा-मिस्सी, चोली-दामन, जेवर-लिबास आदिका कुरुचिपूर्ण वर्णन और रान-काँख, बाल-खाल (तिल) आदिका अश्लील और घिनौना चित्रण पाया जाता है। ऐसे ही शाइरोको लक्ष करके मौलाना 'हाली'ने कुछ इस तरहके उद्‌गार प्रकट किये थे कि ससारमे ऐसा कोई मूर्ख नही जो अपनी प्रियतमाके गुप्तागोका वर्णन किसीके सामने करे। मगर आश्चर्य है कि हमारे शाइर दिन-रात इसी कार्यमे लीन है। उन्हे जग-हँसाईकी कोई चिन्ता नही।

'असर'ने भी इस नाजुक आर्टपर तूलिका चलाई है। मगर इस कौशलसे कि जो भी देखेगा, देखता रह जायगा और दिलमे कहेगा कि ऐसी बहन, बेटी, पत्नी, मुझे भी नसीब हो।

एक उछालछक्को और चर्बजबान औरतके नक़्श न उभारकर आपने एक ऐसी पवित्र, लजीली और कोमलांगीको चित्रित किया है कि हर व्यक्तिको ऐसी पुत्री, बहन और पत्नीपर अभिमान होगा। उसके कदमोसे जन्नत लगी चलेगी—

अब मै समझा मुराद जन्नतसे।
आप जिस राहसे गुजर जायें ॥

प्रेयसीकी चालको पुराने शाइरोने कयामतबरपा होना कहा है। यानी उसकी चालसे प्रलयकारी तूफान उठ खडे होते है। गोया प्रेयसी न हुई चुडैल या जिन हुई कि जिधरसे भी गुजर जाये हड़बोंग मच जाये।

उसी कयामतबरपा चालको 'असर'ने उक्त शेरमे इतने पवित्र और मोहक ढँगसे व्यक्त किया है कि दाद देनेको उपयुक्त शब्द नही मिल पा रहे है। सचमुच प्रेयसीकी 'राहगुजर' ही जन्नत है। पवित्र आत्माये जहाँसे भी निकल जाये, वही मार्ग स्वर्ग बन जाता है।

प्रियतमा लाजके मारे पसीने-पसीने हुई जा रही है। इस नारी सुलभ लज्जाका देखिए क्या हू-ब-हू चित्र खीचा है—

फूल डूबा हुआ गुलाबमें था।
उफ़! वोह चेहरा हिजाब आलूदा[1] !!

किशोरावस्था जब जवानीकी सरहदोको छूने लगती है तो कुछ इस तरहका आलम होता है–

गुलोंकी गोदमें जैसे नसीम[2] आकर मचल जाये।
उसी अन्दाजसे उन पुरख़ुमार आँखोंमें ख़्वाब[3] आया॥

नीदभरे नयनोमे क्या भरा होता है, यह कोई कैसे बताये ? यह तो देखने और समझनेसे सम्बन्ध रखता है—

उस घड़ी देखो उनका आलम।
नींदसे हों जब भारी आँखें॥

मोमिनका एक शेर है—

मेरे तग़ैयुरे-रंगको मत देख।
तुझको अपनी नज़र न हो जाये[4]॥

---

[1]शर्मसे भीगा हुआ; [2]प्रातःकालीन वायु; [3]मदभरे नयनोमे स्वप्न; [4]मेरी यह दयनीय स्थिति तेरे सौन्दर्यके कारण हुई है। न मै तुझे देखता न बीमार पड़ता। अतः मेरे उस तगैयुरे-रग (अवस्था परिवर्तन)को न देख, अन्यथा स्वय तुझे अपनी नजर लग जायगी। क्योकि अभीतक तो तू अपने सौन्दर्य-प्रभावसे अपरिचित है। मुझे देखनेसे तुझे अपनी करिश्मा-साजियोका पता लग जायगा और स्वयं तुझे अपनी नज़र लग जायगी।

इसी भावको देखिए 'असर' कितने दिलकश और सीधे-सादे शब्दोंमें व्यक्त करते हैं—

देखो न आँख भरके किसीकी तरफ़ कभी।
तुमको ख़बर नहीं जो तुम्हारी नज़रमें है॥

प्रेयसीकी चादरे-गुलकी कितनी अछूती उपमा दी है?

झिलमिलाते हुए तारे क्या हैं?
मल्गजे फूल तेरे बिस्तरके॥

चन्द जमालियाती शेर और मुलाहिज़ा हो—

दमे-ख़्वाब[1] है दस्तेनाज़ुक[2] जबींपर[3]।
किरन चाँदकी गोदमें सो रही है॥

वोह तेरा शबाब कि अल्हज़र,[4] वोह तेरा ख़िराम[5] कि अलअमाँ।
न यह रंग झलके बहारमें न यह कैफ़ टपके शराबसे॥

बसा फूलोंकी नकहतमें,[6] लिये मस्ती शराबोंकी।
महकता, लहलहाता, एक काफ़िरका शबाब आया॥

चाल वोह दिलकश जैसे आये—
ठण्डी हवामें नींदका झोंका॥

उस वक़्त कोई देखे वोह नींदसे जब उट्ठें।
हर नज्मे-सहर[7] आँखें मलता नज़र आता है॥

---

[1]सोते समय, [2]कोमल हाथ; [3]मस्तकपर; [4]ख़ुदाकी पनाह, ईश्वर बचाये; [5]चाल, [6]सुवासमें, [7]प्रातःकालीन व्यवस्था।

मस्त आँखोंमें घनी पलकोंका साया यूँ था।
कि हो मैख़ानेपै घनघोर घटा छाई हुई॥
जैसे नग़मेमें[1] नया फ़न कोई ईजाद करे।
उफ़! वोह आवाज, जो थी नींदमें भर्राई हुई॥

उन लबोंपर झलक तबस्सुमकी[2]।
जैसे निकहतमें[3] जान पड़ जाये॥

ख़ुमख़ान-ए-निशात[4] है वोह सुर्ख़ अँखड़ियाँ।
अँगड़ाइयोंमें इत्र खिंचा है ख़ुमारका॥
पुरकैफ़[5] किस क़दर है सितमगरकी गुफ़्तगू?
साग़र छलक रहा है मएखुशगवारका[6]॥

फूल सिज्देमें गिरे शाख़ें झुकीं।
देखके गुलशनमे तुझको बेनक़ाब॥

वोह लचक ऐसी कहाँसे लायेगी।
शाख़ेगुल क़दसे तेरे शरमायेगी॥

खन्दएगुलपर[7] बहुत सुबहेचमनको नाज है।
हाँ, जरा फिर मुसकराकर मुझसे पर्दा कीजिए॥
इधर आ कलेजेमें तुझको छुपा लूँ।
ख़ुद अपनी अदाओंसे शर्मानेवाले॥

इश्क़का हमला

इश्कका पहला वार बहुत दिलचस्प और मासूमाना होता है। यह हज़रत इस अन्दाज और सलीकेसे हमला करते हैं कि ऐसे वार खाते रहने-

---

[1]संगीतमे; [2]मुसकानकी; [3]सुगंधमे; [4]आनन्द-मधुशाला; [5]आनन्दवर्द्धक, नशीली; [6]दिलपसन्द शराबका; [7]फूलकी मुसकानपर।

को दिल बेकरार हो उठता है। यहाँतक कि किसीके समझानेसे भी बाज नही आता। मगर जहाँ दिलपर एक बार इश्कका कब्ज़ा हुआ कि फिर ता-उम्र टलनेका हज़रत नाम नही लेते।

हजरते-दाग़ जहाँ बैठ गये, बैठ गये।

इश्ककी इसी मासूमाना कैफियतको 'असर' यूँ बयान करते है—

सहमी हुई थी सुब्हकी पहली किरनकी तरह।
उनकी तरफ निगाह जो पहले-पहल गई॥

जैसा कि हमने ऊपर अभी कहा है कि इश्कके यह दिलचस्प और मासूमाना वार खाते रहनेको दिल बेकरार हो उठता है, और समझानेसे भी बाज नही आता। बाज़ न आने की वजह एव मजबूरी 'असर' यूँ बयान करते है—

इश्कसे लोग मनअ् करते है।
जैसे कुछ इख़्तियार है अपना॥

अदब लाख था, फिर भी उसकी तरफ़।
नज़र मेरी अक्सर बहकती रही॥

इश्क जब दिलमे दाग बनकर बैठ जाता है तो जिस्मको धीरे-धीरे घुलाकर ख़ाक करता ही है, उसके अलावा और भी करिश्मा-साज़ियाँ करता रहता है। कभी रोना, कभी हँसना, कभी आहो-फुगाँ करना, कभी दीवानावार जगलोमे घूमना, यह अलामते भी मरीज़े-इश्कमे पाई जाती है। मगर कब रोना चाहिए और कब आँसू पी जाना चाहिए, यह नया मरीज़े-इश्क नही जान पाता। यह तजर्बा तो देरीना मरीज़को ही नसीब होता है—

जो इश्कके फनके माहिर है, उनसे पूछो, तुम क्या जानो?
कब अश्क बहाना मुश्किल है, और कब पी जाना मुश्किल है॥

इश्क़का मर्तबा

असरके यहाँ इश्कका मर्त्तबा बहुत बुलन्द और पाकीजा है। उनका तजर्बा है कि—

इन्सानको बेइश्क़ सलीका नहीं आता।
जीना तो बड़ी चीज है, मरना नहीं आता॥

दिलमें है दर्द, दर्दमे इक लज्जते-ख़लिश।
आजारे-इश्क़ने मुझे इन्साँ बना दिया॥

और जब इश्ककी बदौलत इन्सानियत-जैसी बेशवहा निधि नसीब हो गई तो उससे किसीकी दिलआजारी नामुम्किन। जिसका रोम-रोम प्रेमसे भीगा हुआ हो, उसे हर वस्तुमे अपने प्यारेका जलवा नजर आता है—

न जाने बात यह क्या है? तुम्हे जिस दिनसे देखा है।
मेरी नजरोंमे दुनिया भर हसीं मालूम होती है॥

और जिसे हर वस्तुमे अपने प्यारेका जलवा नजर आयेगा, वह विनष्ट करनेके बजाय हर वस्तुको प्यार करेगा। यहाँतक कि वह फूलकी पत्तीको भी सदमा नही पहुँचाना चाहेगा—

पाकबाजाने-मुहब्बत हैं यहाँतक मुहतात[1]।
गुलपै भी दीदा-ए-शबनमसे[2] नजर करते हैं॥

---

[1]इहतियात रखनेवाले, सावधानी बरतनेवाले; [2]अश्रुपूर्ण नेत्रोसे (भाव यह है कि जैसे ओसके पडनेसे फूलका अनिष्ट नही होता, अत. हम फूलोकी तरफ भी इस सावधानीसे देखते हैं कि उनका कही अनिष्ट न हो जाय! किसीका भी दिल न दुखे, इस तरहका हम सदैव प्रयत्न करते हैं)।

अक्सर लोगोंका आम-ख़याल है कि इश्क इन्सानको ज़लीलो-ख़्वार कर देता है। इश्क तो इन्सानको इन्सानका मर्तबा बख़्शता है। ज़लीलोख़्वार तो बुलहविसी (भौंरा-जैसी लोलुप कामुकता) करती है, जो इश्कका छद्म-वेष बनाये घूमती है। गोमुखी व्याघ्रसे भयभीत वास्तविक गायसे भी डरने लगे तो इसमें गायका क्या दोष? इश्क अगर बेगरज़ और बेआर्ज़ू हो तो उसके मर्तबेका क्या कहना?

इश्क है इक निशाते-बेपायाँ[1]।
शर्त यह है कि आर्ज़ू न रहे॥

सीमाओंका बन्धन और तू-मैंका भेद प्रेम-मार्गके कण्टक हैं। प्रेमी इनको दूर किये बग़ैर अपने चरम लक्षतक नहीं पहुँच सकता। इसी भावको रगे-तग़ज़्ज़ुलमें देखिए 'असर' किस ख़ूबीसे व्यक्त करते हैं—

उठा दे क़ैद सुबू-ओ-शराब-ओ-साग़रकी।
बुलन्द और ज़रा कर मज़ाक़े-रिन्दाना॥

विरहपर शेर सुनिए—

हर साँस एक ताज़ा जिराहतका[2] है पयाम[3]।
नश्तर बनी हुई है, रगेजाँ तेरे बग़ैर॥

फिर न आये जो वादा करके गये।
आजका दिन है और वोह दिन है॥

कुछ रोज़ यह भी रंग रहा इन्तज़ारका।
आँख उठ गई जिधर बस उधर देखते रहे॥

---

[1]गहरी ख़ुशी, स्थायी सुख; [2]घावका बेचैनी, कण्टका; [3]सन्देश।

उक्त तीनों शेअ़रोमे कितनी वेदना और कितनी व्यथा भरी हुई है, यह भुक्तभोगी ही महसूस कर सकता है। जिस स्त्रीका पति या पुत्र परदेशमे रोज़ी कमाने चला जाय और जानेके बाद न पातियाँ भेजे, न कोई सँदेसा, और न फिर कभी लौटे, उस नारीके दिलसे कोई पूछे कि उसने किस तरह एडियाँ रगड-रगडकर उम्र काटी है। वह किस बेकरारीसे गाँवके रास्तेपर पलक-पाँवडे बिछाये बैठी रही है, और रात-बिरातको जब भी दर्वाजा खट-खटानेका वहम हुआ है, लपक-लपककर द्वार खोला है।

जिन सौभाग्यशालियोको यह प्रतिक्षाजन्य कष्ट उठानेका कभी अवसर नही मिला, वे श्री बनारसीदासजी चतुर्वेदीद्वारा लिखित और भारतीय ज्ञानपीठद्वारा प्रकाशित 'रेखाचित्र'मे 'लल्लू कब लौटेगो' और "बाइस वर्ष बाद" पढकर इस विरह-वेदनाका किंचित आभास पा सकते है।[१]

उस कुँवारी लडकीकी मनोव्यथाका अनुमान लगाइए जो अपने प्रियतमकी प्रतीक्षामे बूढी हो गई। घरवालोके लाख सर पटकनेपर भी न किसी दूसरेसे शादी की, न किसी गैरको आँख भरकर देखा। उ़म्रभर उसीकी माला जपती रही। उम्रभरकी तपस्याके फलस्वरूप वह

---

[१]इस विरह-वेदनाकी टीस और बेचैनी इन दोहोमे देखिए कैसी बिलख रही है—

सोना लेने पिउ गये सूना कर गये देस।
सोना मिला न पिऊ फिरे रूपा हो गये केस॥

—अज्ञात

मेरा हाथ देख बरहमना! मेरे पिउ मुझसे मिलेंगे कब?
तेरे मुंहसे निकले ख़ुदा करे, "इसी सालमें, इसी माहमें"॥

—अज्ञात

वापिस आया भी तो हायरे भाग्य वह अपने साथ किसी और स्त्रीको ले आया[1] और उसकी तरफ आँख उठाकर भी न देखा। सूखी खेतीपर बादल आये भी मगर बेसूद, एक बूंद गेरे वगैर उमड़-घुमड़कर किनारा काट गये।

तमाम उम्र 'असर'! जिसकी राह देखी थी।
इधरसे आज वोह गुजरे तो मिस्ले-बेगाना॥

हबीबका रुत्बा

तुम्हीं हो रौनक़े-गुलशन, तुम्ही हो रंगे-बहार।
मगर किसीको तुम्हारा गुमाँ नही होता॥

उक्त शेर रगे-तसव्वुफमे कहा गया है। यानी इस शेअ़रमे 'असर'का महबूब खुदा नजर आता है, और उनका यह कामिल यकीन है कि सारी दुनियामे खुदाका जलवा है। इस यकीनको एक और शेअ़रमे आप यूँ उजागर करते हैं—

जिंदगी वक़्फ़ा है तेरे हिज्रका।
मर्ग तेरे वस्लका पैग़ाम है॥

खुदाकी पहचान

खुदाकी तलाशमे लोग वनो-पर्वतोकी खाक छानते हैं। मन्दिरो-मस्जिदोमे भटकते हैं। मगर खुदा नही मिलता। अगर किसीको

---

[1]इस तरहकी घटनाये अक्सर होती रहती हैं। आज़ाद हिन्द फौजके एक ख्यातिप्राप्त कर्नल साहवकी मँगेतर उनकी प्रतीक्षा करती रही। उसके भाग्यसे वे लडाईसे और फाँसीके तख्तेसे बचे और ख्यातिके उच्च शिखरपर पहुँचे तो उन्होने शादी उस प्रतीक्षकासे करनेके बजाय एक परित्यक्तासे कर ली। इसीतरह पजावके एक प्रसिद्ध क्रातिकारी जब १० वर्ष वाद जेलसे मुक्त हुए तो उन्होंने वियोगिनीके आँसू पूछनेके बजाय दूसरी शादी करके उसे उम्रभर जलने-सिसकनेके लिए मजबूर कर दिया।

मिलता भी है तो वह उसे पहचानता नही और इस तरह उसके दर्शनेच्छु दुनियामे भटकते हुए अपनी जिन्दगी बरबाद कर रहे हैं। ऐसे ही भटके हुए लोगोके लिए देखिए 'असर' ख़ुदाकी कितनी आसान पहचान बताते हैं—

हम उसीको ख़ुदा समझते हैं।
जो मुसीबतमें याद आ जाये॥

ख़बरदार, उक्त शेअ्‌रके 'याद'को 'काम' न बना लीजिए। वर्ना शेअ्‌रकी लताफत तो जाती ही रहेगी, आप भी ऐसे बदजौक और ख़ुदगरज तसव्वुर कर लिये जायेंगे, जो हर जगह और हर शख़्ससे अपने 'काम' निकालनेकी फिक्रमे लगे रहते हैं।

मैंने यह शेअ्‌र अपने परमस्नेही मित्र सुमत साहबको लिखकर भेजा तो उन्होने अपने यहाँ दिये गये एक 'डिनर'पर एक मुहज्जब उर्दू-अदीबको उक्त शेअ्‌र सुनाया तो वे सुनते ही बोले "याद आ जाये" क्या, "काम आ जाये" कहिए साहब! सुमत साहब सुनकर चुप हो गये। उनकी नज़रोमे डिनरका सारा मजा किर-किरा हो गया और वे उस व्यक्तिके बारेमे सोचते रहे कि यह भी कैसा बदजौक है, जो 'याद' जैसी लतीफ चीजसे ज्यादा 'काम'को अहमियत देता है।

मज़हबी दूकानें

बहकके नशेमें मस्जिदको समझा मैख़ाना।
ग़जब हुआ था मेरा सर ही झुक गया होता॥
मस्जिदों और ख़ानक़ाहोंका तमाशा देखकर।
मै फिरा दिलकी तरफ़ शुक्रे-ख़ुदा करता हुआ[1]॥

---

[1]इसी मज़मूनपर 'असगर' गोण्डवीने क्या बलाका शेअ्‌र कहा है—

दैरो-हरम भी कूच-ए-जानांमें आये थे।
पर शुक्र है कि बढ़ गये दामन बचाके हम॥

ज़ाहिद

उर्दू-शाइरोंने जाहिदो-नासेहकी पगडी उछालनेमे कोई कोर-कसर नही रखी है। कोई उनकी पगडी गिरवी रखवाता है, कोई उनके मुंडे हुए सरपर चपत जड़नेसे वाज नही आता। कोई उनसे शरावसे भीगे हुए कपड़े धुलवाना चाहता है तो कोई उनके मुँहपर शरावके कुल्ले करनेसे नही हिचकता। गोया शेखो-जाहिद होलीके भडवे है कि हर शख्स उन्हें वनाना जरूरी समझता है। 'असर' भी परम्पराके अनुसार उन्हे छेडते है। मगर इस सलीकेमे कि न तो उनकी दिलआजारी हो और न अदवका दामन हाथसे छूटने पाये।

जाहिदको एअ्तवार है फ़िरदौसो-हूरका।
दुनिया-ए-रंगोवूका तमाशा किये वगैर॥
हविस[1] विहिश्तकी[2] और इश्तियाक़[3] हूरोका।
जनावे जाहिदे-इस्मतपनाह[4] क्या कहना॥

हुस्ने-वयान

'असर'का यह हुस्ने-वयान और जिद्दत देखिए कि रूठी हुई प्रियतमासे ही उसके मनानेका उपाय पूछ रहे है—

इक वात भला पूछें "किस तरह मनाओगे?
जैसे कोई रूठा हो और तुमको मनाना है॥"

मालूम नही 'असर' साहवकी प्रियतमाने उन्हे मनानेका उपाय वताया या नही और वताया तो वे उसे अमलमे लाकर कामयाव हुए या नही। मगर मैंने इसे ऐसा कारगर पाया कि इसकी करिश्मा-साज़ियोके क्या कहने?

---

[1]तृष्णा; [2]स्वर्गकी, जन्नतकी; [3]आकाक्षा; [4]शील-चारित्रका ढोग करनेवाले।

मैने इसका तजर्बा एक वयोवृद्ध आदरणीय साहित्यिक तपस्वीपर किया। बात यह थी कि उनकी पुस्तक ज्ञानपीठसे प्रकाशित होनी थी। समूची पुस्तकके प्रूफ उनके पास करीब दो वर्षसे पडे हुए थे। व्यस्तताके कारण न स्वय प्रूफ देखते थे और न प्रकाशकको वापिस ही भेजते थे। रजिस्टर्ड पत्रोका उत्तर तक न देते थे। प्रेसके तकाजोसे नाकमे दम था। एक रोज़ बैठे-बिठाये उक्त शेअ्र जेहनमे आया तो तजर्बा कर ही डाला। उनको निम्न पत्र लिखा गया—

आदरणीय·······जी,

'असर' लखनवीका एक शेअ्र सुनिए—

इक बात भला पूछें किस तरह मनाओगे?
जैसे कोई रूठा है और तुमको मनाना है॥

इसी शेअ्रके अनुसार आपसे एक सलाह लेनी है, और वह यह कि—हिन्दीके एक बहुत ख्यातिप्राप्त लेखकके पास ज्ञानपीठके करीब १॥ वर्षसे ७००-८०० पृष्ठके प्रूफ पडे हुए है। वह न स्वय पढते है और न प्रकाशकको ही पढ़नेकी इजाजत देते है। वह सम्पादक-लेखक-शोषित-सघ आदि सस्थाओके सचालक है। उनके सम्बन्धमे कही भी शिकायत करना अपनी फज़ीहत कराना है। किसी पत्रमे भी उनके सम्बन्धमे नही लिखा जा सकता, क्योकि प्राय: सभी पत्रोमे उनके लेख निकलते है। शासक-वर्ग भी हमारी पुकार नही सुन सकता, क्योकि वह राज्य-परिषदके भी सदस्य है। ऐसी स्थितिमे आप हमे एक हिन्दी-हितैषीके नाते सलाह दीजिए कि क्या करना चाहिए। यदि आप उन्हे जानते भी हों तो हमे आपसे पक्षपातकी उम्मीद नही।

सुना है बनारसके एक न्यायी मजिस्ट्रेटकी पत्नीने अपनी मेहतरानीको गाली दी तो उन्होने मेहतरानीकी ओरसे गवाही दी थी, और उनकी पत्नी-पर अदालतसे जुर्माना हुआ था। सैकडो पत्र उनके पास अनुनय-विनयके

पहुँचाये गये, किन्तु अब उन्होने पत्रोत्तर देनेकी भी कसम खा ली है। कृपया नेक सलाह दीजिए।

आपका

. . . . .

शेअरने जादूका काम किया। १५ रोजके अन्दर समूचे प्रूफ सशोधित होकर लौट आये और उन सहृदय तपस्वीने मुक्त हृदयसे दाद भी दी।

'असर'का एक शेअर और सुनाना चाहता हूँ। मगर एक गुज़रे हुए वाकेअेके साथ, ताकि शेअरका पूरा लुत्फ उठाया जा सके।

मेरे एक परिचित युवककी शादी थी। युवक महाशय एम० ए० थे और अच्छे-खासे खुशपोश थे। बारातकी रवानगीपर इत्तिफाक देखिए कि उनके मुँहपर ततैयेने काट लिया। ससुराल पहुँचते-पहुँचते मुँह कुप्पा हो गया। मुँह, नाक, आँख सब यकसाँ नजर आते थे। ससुरालमे अच्छे खासे टेसू बनाये गये। दो रोज वहाँ उसी धजामे रहे। शादीका सारा मजा किर-किरा हो गया। तीसरे रोज़ घर पहुंचे तो फिर पहली हालतमे आ गये, क्योकि ततैयेके काटनेका वरम तीन रोज बाद उतर जाता है। मिलनेपर मैने इस घटनापर अफसोस जाहिर किया तो 'असर'-का यह शेअर सुनाकर हज़रत हँसने लगे—

यह इत्तिफाक़ तो देखो बहार जब आई।
हमारे जोशे-जुनूँका वही जमाना था॥

नैतिक कलाम

'असर'की गज़लोमे इस तरहके नैतिक अशआर काफी मिलते है—

तुमको है फिक्रे-तन-आसानी[1] 'असर'।
जिंदगी क़ुर्बानियोंका नाम है॥

---

[1]शारीरिक सुविधाओकी चिन्ता।

टुक तूफ़ानकी मौजोंसे उलझ।
नाखुदा[1] कौन ? सफ़ीना[2] कैसा ?
किसीके काम न आये तो आदमी क्या है ?
जो अपनी फ़िक्रमें गुज़रे वोह जिंदगी क्या है ?
हुई ख़िदमते-ख़ल्क़[3] जिन-जिनका मज़हब।
ख़ुदाके वही बन्दे मक़बूल[4] निकले॥
जो दर्दसे वाक़िफ़ है, वोह ख़ूब समझते हैं।
राहतमें तुझे खोया, तकलीफ़में पाया है॥

'असर' कुछ काम कर जाओ, जहाँमें नाम कर जाओ।
रगड़कर ऐड़ियाँ मरनेमें इज़्ज़त हो नहीं सकती॥
शमए-ख़मोशकी तरह जिन्दा रहा कोई तो क्या ?
राज़े-हयात है निहाँ सोज़के साथ साज़में॥

प्रेरणात्मक

अकर्मण्य और कापुरुषोंको इस शाइराना अन्दाजमें प्रेरणा की है कि बात दिलमें भी उतर जाय और कहनेवाला मौलवियाना एवं नसीहताना ऐबसे भी बच जाय—

न हौसला, न तमन्ना, न वलवला, न उमंग।
यह बेहिसी[5] नहीं ऐ दिल ! तो बेहिसी क्या है ?
जज़बए-मंसूर[6] कैसा ! बेहिसी यह है 'असर'।
दअ़वते-दारोरसनपर[7] अंजुमन ख़ामोश है॥
अहले हिम्मतने हुसूले-मुद्दआ़में[8] जान दी।
और हम बैठे हुए रोया किये तक़दीरको॥

---

[1]मल्लाह; [2]नाव; [3]जनताकी सेवा; [4]प्रिय; [5]अकर्मण्यता; [6]फाँसीपर झूलनेकी उमग; [7]बलिदान-निमत्रणपर; [8]लक्ष-प्राप्तिमे।

यह सोचते ही रहे और बहार खत्म हुई।
कहाँ चमनमें नशेमन बने कहाँ न बने॥

(देश विजित भी हो गया और हम मोर्चेके उपयुक्त स्थानकी तलाश ही करते रहे।)

ये नेता

जिन नेताओंकी बदौलत भारत-विभाजनके वक्त साम्प्रदायिक नरमेध-यज्ञ हुआ, उनपर 'असर'का यह शेअर कितना सही चस्पाँ होता है—

अपने वोह रहनुमा[1] हैं कि मंज़िल तो दरकिनार।
काँटे रहेतलबमें[2] बिछाते चले गये॥

काश यह सम्प्रदायवादी 'असर'के इस शेअ्रपर अमल करते—

क़ाफ़िलेवालो! जरसके शोरमें क्या इम्तियाज़[3]।
गूँजने दो जयके नअ्रे और तकबीरें कहीं॥

(मन्दिरोंमे भी अज़ान हो और मस्जिदोमे भी शख वजने लगे तो फिर इन मज़हवी दीवानोको कौन पूछे?)

भारत-विभाजनके बाद एक मुसलमान साहित्यिकको शरणार्थी कैम्पसे पाकिस्तान भेजा जाने लगा तो उसने जानेसे कतई इन्कार कर दिया और जब न जानेका सबब पूछा तो बोला—"मुझे मेरे वतनमें अब रहनेको स्थान न मिले तो न सही, कब्रके लिए तो गजभर ज़मीन मिलेगी! अपने वतनमे मैं इतने दिन जिया हूँ, तो मरने अब मैं कहाँ जाऊँगा?" अब असरका एक शेअ्र सुनिए—

यहीं पै उम्र गुज़ारी, यहीं पै मरने दो।
तुम्हारे दरके सिवा और दर मैं क्या जानूँ?

---

[1]नेता; [2]लक्ष्यके मार्गमे; [3]भेद-भाव।

और जब विश्वस्त और परखे हुए साथियोसे भी आये दिन वफ़ादारीके हलफ उठवाये जानेकी बात चलती रहती है तो 'असर' झल्लाकर कहते हैं—

ठुकराये जा रहे हैं खुद अपने दयारमें।
और इसलिए कि भटकें न राहे-वफ़ासे हम ॥

स्वतंत्र भारतमे रहे हुए मुसलमान एक घुटन-सी महसूस करते हैं। उसका आभास अगस्त १९५१ में कहे गये 'असर'के इन दो शेअ़रोमे मिलेगा।

गुलशनमें जब कहीं कोई जाए-अमाँ न हो।
फिर क्यों बहार अपनी नज़रमे ख़िज़ाँ न हो ?
वोह ताएरे-असीर कहाँ जाय क्या करे।
आज़ाद होके जिसको नसीब आशियाँ न हो ॥

१९३९ मे प्रकाशित 'असर'की गजलोके ४८० पृष्ठके संकलन 'बहारां और इन्तिख़ाबे असरिस्तानसे' और 'निगार', 'शाइर', 'माहेनौ' आदि पत्रोमे प्रकाशित अगस्त १९५१ तक कही गई गजलोके चन्द अशआर चुनकर दिये जा रहे हैं—

इस तरह शोर मचाती हुई आई है बहार।
बेड़ियाँ आप पहन लीं तेरे सौदाईने[1] ॥

है इश्क जिन्हें, दिलका वोह कहना नहीं करते।
मर जाएँ मगर अर्जेतमन्ना[2] नहीं करते ॥

यूँ तड़प ऐ क़ल्बे-मुज़्तर[3] यूँ निकल ऐ जाने-ज़ार[4]।
खंजरे-क़ातिल सदा-ए-मरहबा[5] देने लगे ॥

---

[1]प्रेमोन्मत्तने; [2]अभिलाषाप्रकट; [3]बेचैन दिल; [4]निर्बल आत्मा; [5]साधुवाद।

इक फूल है अन्देशा नहीं जिसको ख़िज़ाँका।
वोह ज़ख़्म जिसे आपने दामनसे हवा दी॥

अपनी ही जुस्तजूमें[1] आवारा चारसू[2] हूँ।
जो मिट गया उभर कर, वोह नक़्शे-आरज़ू[3] हूँ॥

हुए जो शिकस्ता[4] ओ-मुन्तशिर[5] यह उन्हीसे जीनते-दहर[6] है।
जो हैं आइने, वोह सजे हुए हैं दुकाने-आइना-साजमें॥

कभी इस तरह भी हो जलवागर कि गुमाँ हो तुझपै है तू बशर।
तुझे यूँ तो देखा हजार बार, इसी बज्मगाहे-मजाजमें॥

है हरेक साँस रुकी हुई, है हरेक नब्ज थमी हुई।
यह कहाँका दर्द भरा हुआ था दिले-शिकस्ताके साजमें॥

जज्ब करले जो तजल्लीको[7] वोह दिल पैदाकर।
सहल है सीनेको दागोसे चिरागाँ[8] करना॥

मेरे नियाज़ेइश्ककी[9] मजबूरियाँ न पूछ।
रोना है जिसको मनअ् वोह चश्मे-पुरआब[10] हूँ॥

मेरी ज़बान और है मेरा बयान और।
है शरह[11] जिसकी दर्द, वोह ग़मकी किताब हूँ॥

बरबाद कर चुके वोह, मैं बरबाद हो चुका।
अब क्या रहा है? रोऊँ और उनको रुलाऊँ मैं॥
लाचुक नसीमे-सुबह[12] पयामे-विसाले-दोस्त[13]।
कबतक मिसाले-शमअ् रगे-जाँ जलाऊँ मैं?

---

[1]तलाशमे; [2]चारो तरफ, हर समय; [3]इच्छाओका चिह्न; [4]-[5]टूटे और बिखरे हुए; [6]ससारकी शोभा; [7]प्रकाशको; [8]दीपावली; [9]विनयपूर्ण प्रेमकी; [10]अश्रुपूर्ण नेत्र; [11]भाष्य, टीका; [12]प्रात.कालीन वायु; [13]प्रेयसी-मिलनका सदेश।

ख़ुद मेरे जौक़े-असीरीने[1] मुझे रक्खा असीर।
उसने तो क़ैदे-मुहब्बतसे किया आज़ाद भी॥
किस तरह तड़पे जिसे यह डर लगा हो हमनशीं[2]!
दर्दमें शामिल न हो जाये किसीकी याद भी॥

शौक बढ़ता गया गुनाहोंका।
लज़्ज़ते-इन्फ़िआलने[3] मारा॥

ऐ दिलके आईनेमें छुपकर सँवरने वाले।
आँखें भी काश देखें, हुस्ने-तमाम तेरा॥

तरसी हुई निगाहें किस तरह तुझको देखें।
माना रगे-गुलू भी है इक मुक़ाम तेरा॥

जहाँ पलकोंके सायेमें हज़ारों फ़ितने सोते थे।
वहीं फ़ितरतने चुपके-से निगाहे-शरमगीं[4] रख दी॥

बिनाए-मस्जिदेनौ[5] इसलिए हुई वाइज़[6]!
वहाँसे फेरका रस्ता शराबख़ाना था॥

दिलका है रोना खेल नही है मुँहको कलेजा आने दो।
थमते ही थमते अश्क थमेंगे, नासेहको समझाने दो* ॥

जहाँ हो दुरंगी बहारो-ख़िज़ांकी।
चमन वोह नहीं आशियानेके क़ाबिल॥

नामाबरको मैं क्या पता बतलाऊँ?
ख़ैरसे घर नहीं उनका कोई॥

---

[1]बन्दी होनेके चावने, [2]पड़ौसी; [3]पापोंकी शर्मके चस्केने; [4]शरमीली आँखे; [5]नवीन मस्जिदका निर्माण; [6]उपदेशक।

*थमते-थमते थमेंगे आँसू।
रोना है कुछ हँसी नहीं है॥
—सम्भवतः मीरका शेअ़र है

पूछनेवाले दर्दे-पिनहाँके।
अपने चेहरेका रंग भी देखा ?

यादे-चमनकी जाये क्या ? चैन क़फ़समें आये क्या ?
हमसे छुटा जब आशियाँ दिन थे वही बहारके॥

बहरे-हस्तीसे सुबकबार गुजरना सीखो।
तुमको जीना नही आता है तो मरना सीखो॥

माजराए-शबेगम दिलको सँभालूँ तो कहूँ।
ठहरो-ठहरो मै जरा होशमें आलूँ तो कहूँ॥

तासीर दर्देदिलमें या रब ! कहाँकी भर दी।
उसने भी आज आखिर चुपके-से आह कर दी॥

आन-की-आन उनको देखा था।
जबसे थर्रा रही है नब्जे-निगाह॥

वोह कामकर, बुलन्द हो जिससे मजाके-जीस्त।
दिन जिंदगीके गिनते नहीं माहो-सालसे॥

(बहारांसे)

उभर न बहरे-जहाँमें[1] हुबाबके[2] मानिन्द।
जो तहनशी[3] हुआ कतरा दुरेयगाना[4] हुआ॥

भूलता ही नही वह नाजसे कहना तेरा —
"खैरसे इन दिनो कुछ कम तो है सौदा तेरा"॥

बेहोशियोंमें अहदेजवानी बसर हुआ।
पीरी[5] चली है उम्रे-रवाँके[6] सुरागमें॥

गम नही तो लज्जते-शादी नहीं।
बे-असीरी लुत्फ़े-आजादी नहीं॥

---

[1]संसार-सागरमे; [2]बुल्बुलेकी; [3]दरियाके नीचे; [4]अनमोल मोती, [5]बुढापा, [6]गई हुई जिन्दगीके, बीते दिनोके; [7]खोजमे।

महशरसे यूँ चले हैं गुनहगारे जुर्मे-इश्क़।
गोया उन्हींमें बँट गया जितना गुरूर था॥

दिलमें है दर्द, दर्दमें इक लज्जते-ख़लिश[1]।
आजारे-इश्कने[2] मुझे इन्साँ बना दिया॥

हायरे तेरी जुस्तजूका[3] फ़रेब।
हर कदम पर गुमाने-मंजिल[4] था॥

उसकी बेदादका[5] नहीं शिकवा।
मेरा ही शौक मेरा क़ातिल था॥

नजअमें[6] जब हम सुनेंगे तेरी बातें प्यारकी।
दिल ठहरता जायगा और दम निकलता जायगा॥

शाहिदे-सुबहने[7] हँसकर जो जरा देख लिया।
कोहो-सेहरापै[8] फटा पड़ता है जोबन कैसा?

मिटे हैं किसपै किसीको गुमाँ[9] नहीं होता।
मजाके-इश्क हमारा अयाँ[10] नही होता॥

तुम्हीं हो रौनके-गुलशन, तुम्हीं हो रंगे-बहार।
मगर किसीको तुम्हारा गुमाँ नहीं होता॥

तुम आईनेको तरफ़ ग़ौरसे कभी देखो।
हमें जो मद्दे-नज़र[11] है बयाँ नही होता॥

बेताबियोंने आह गुनहगार कर दिया।
दिलकी लगीसे उनको ख़बरदार कर दिया॥

मेरी इस आर्ज़ूने कि हो तर्के-आर्ज़ू।
जो काम सहल था उसे दुश्वार कर दिया॥

---

[1]चुभनका आनन्द; [2]प्रेम-रोगने; [3]खोजकी उत्सुकता; [4]लक्षपर पहुँचनेका विश्वास; [5]जुल्मका; [6]मृत्यु-समयमें; [7]प्रात.कालरूपी सुन्दरीने; [8]पर्वतो-जगलोपर; [9]शक; [10]प्रकट; [11]पसन्द है, इष्ट।

तुझसे कहते थे कि ऐ दिल! हिज्रमें[1] आँसू न पी।
क़तरा-क़तरा जमा होकर मौजज़न दरिया हुआ॥

मुझे हर ख़ाकके ज़र्रेपै यह लिक्खा नज़र आया—
"मुसाफ़िर हूँ अ़दमका और फ़ना है कारवाँ मेरा"॥

वफ़ा कैसी, नहीं मजबूर था वोह वअ़दा करने पर।
यही एहसान क्या कम है कि दिल तो रख लिया मेरा॥

नहाकर निखरना तेरा याद है।
पसीनेमें डूबा गुलाब आगया॥

उठे बादाकश झूमकर नअ़राज़न।
दर्से-वअ़ज़[2] नामे-शराब आगया॥

मरनेका भी न सलीक़ा आया।
यह तो दुश्वार कोई काम न था॥

ख़ुद लिपटती रही दुनिया उससे।
जिसको दुनियासे कोई काम न था॥

पूछते क्या हो कि रातें हिज्रकी क्योंकर कटीं?
ख़ुद मुझे एहसास अपने हालका मुश्किल हुआ॥

साँस भी ले सँभलके ऐ नादाँ!
सख़्त नाज़ुक है रिश्ता उल्फ़तका॥

ख़ूगरे-दर्द[3] हो अगर इन्साँ।
रंजमें भी मज़ा है राहतका[4]॥

शोख़ीसे उसने बातका लहजा बदल दिया।
इक़रार लबतक आते ही इनकार हो गया॥

---

[1]वियोगमें; [2]व्याख्यानके प्रसगमें; [3]दु:खोका आदी, [4]सुख-चैनका।

है उनका शौक़ बर्क़के[1] परदेमे मुजतरिब[2]।
मूसा समझ रहे हैं कि दीदार[3] हो गया॥

वअ़देके दिन गुजर गये फिर भी है मुन्तजिर[4]।
कुछ हमको इन्तजारका आजार[5] हो गया॥

हाय वोह दिल जिसके अरमाँ सर्फ़ेमातम[6] हो गये।
हाय वोह महफ़िल ग़मोंने जिसको बरहम[7] कर दिया॥

करवटें क्यों बदल रहे हैं हुजूर!
अभी आग़ाज[8] है कहानीका॥

वफ़ाका सीखले तुमसे कोई सिला देना।
बजाय फ़ातिहा नक़्शे-लहद[9] मिटा देना॥

हर एक हसरते-मुर्दामे फिरसे जान आई।
गजब था नजअ़में काफ़िरका मुसकरा देना॥

किसीका हाय यह कहना 'असर'से वक़्ते-विदाअ़—
"जो हो सके तो हमें दिलसे तुम भुला देना"॥

ख़ुम ख़ाना-ए-निशात[10] है वोह सुर्ख़ अँखड़ियाँ।
अँगड़ाइयोंमें इ़त्र खिंचा है ख़ुमारका॥

पुरकैफ़ किस क़दर है सितमगरकी गुफ़्तगू।
सागर छलक रहा है मए-ख़ुश गवारमें॥

चन्द किस्में जुनूँकी[11] हैं नासेह!
तुमको सौदाए-वअ़जो-पन्द[12] हुआ॥

---

[1]बिजलीके; [2]बेचैन, [3]दर्शन; [4]प्रतीक्षा करते हुए; [5]रोग; [6]शोक करनेमे नष्ट; [7]छिन्न-भिन्न; [8]प्रारम्भ; [9]कब्रका निशान; [10]आनन्दरूपी मदिरालय, [11]पागलपनकी, [12]भाषण-देने, नसीहत करनेकी सनक।

बेखुदी[1] परदादारे-गफलत[2] है।
ग़म उठानेका हौसला न रहा॥

आबले दिलके बहे यूँ फूटकर।
जिस तरह दरियामें उठ-उठकर हुबाब[3]॥

तुम जब उसे सुनोगे सर देरतक धुनोगे।
पुरदर्द इस क़दर है, अफसानए-मुहब्बत॥

आह किससे कहें कि हम क्या थे?
सब यही देखते हैं कि क्या हैं हम॥

मौतमें जीस्त[4] देखने वालो।
देख लो जीस्तमें फ़ना[5] हैं हम॥

दमे-आख़िर भी आप क्यों आये?
जाइए-जाइए ख़फ़ा हैं हम॥

अब करमकी[6] भी दिलको ताब[7] नहीं।
किस तरह कुश्तए-जफ़ा[8] हैं हम॥

सख्तियाँ झेलके तकमीले-मुहब्बत क्या ख़ूब?
इश्कबाजी है 'असर' पेशएमजदूर नहीं॥

ताएरे-जाँको[9] परे परवाज हैं यह क़ैदे-तन।
हम लिये फिरते हैं अपने साथ जिंदाँ,[10] क्या करें?

उसकी रहमतको[11] हया आने लगी।
किस कदर आलूदए-तकसीर[12] हूँ॥

---

[1]तन्मयता, आत्म-विस्मृति; [2]गफलतोका पर्दा, [3]बुलबुले; [4]जिन्दगी; [5]मृत्यु, [6]कृपाओंके, [7]सहनेकी शक्ति; [8]अत्याचारोसे मिटे हुए; [9]जीवनरूपी परिन्देको, [10]शरीररूपी पिंजरा; [11]ईश्वरीय दयाको; [12]पापोंमे लथ-पथ ।

बिजली बनेंगे खानए-सैयादके लिए।
तिनके बचे हुए जो मेरे आशियाँके हैं॥

बेरब्त होगई थी इबारत कहीं-कहीं।
काफ़िरने नक़्ल की वही ख़तके जवाबमें॥

पज़मुर्दा[1] होके फूल गिरा शाख़से तो क्या?
वोह मौत है हसीन जो आये शबाबमें[2]॥

हंगामए-फिराक़में[3] थी दिलकी क्या बिसात।
इक आबला था फूट गया, इज़्तराबमें[4]*॥

कभी मौत कहती है अलहज़र[5], कभी दर्द कहता है रहम कर।
मैं वोह राह चलता हूँ पुरख़तर[6] कि जहाँ फ़नाका[7] गुज़र नहीं॥

ख़बर अपनी नहीं इबरतके[8] काबिल रंगे-गुलशन है।
हँसी आती है फूलोंको जो गुंचे मुसकराते हैं॥

रहा है साबिक़ा[9] गमसे यहाँतक हमनशीं[10]! मुझको।
ख़ुशीके नामसे भी अश्क आँखोंमें भर आते हैं॥

मैं अब सिज्दे[11] करूँ, दिलको सँभालूँ या बढ़ूँ आगे।
नज़र आता है कोसोंसे किसीकी आस्ताँ[12] मुझको॥

गुज़ारी उम्र सारी राज़े-हस्तीके[13] समझनेमें।
परस्तिश[14] तेरी करता, इतनी फुरसत थी कहाँ मुझको?

---

*दिलकी बिसात क्या थी निगाहे-जमालमें।
इक आईना था टूट गया देख-भालमें॥
—'सीमाब' अकबराबादी

[1]मुर्झाकर, [2]जवानीमें; [3]विरहके तूफानमें; [4]बेचैनीमें; [5]ख़ुदाकी पनाह, बचाओ; [6]संकटोंसे भरी हुई, [7]मृत्यु भी जहाँ चलते भयभीत हो; [8]नसीहत लेने योग्य; [9]वास्ता; [10]पड़ौसी, मित्र; [11]साष्टाँग प्रणाम; [12]ड्योढ़ी; [13]जीवन-भरके भेद; [14]उपासना।

वोह तड़पता नहीं कभी ज़ालिम !
जिसने भरपूर चोट खाई हो॥

इस सादगीपै जान मेरी क्यों फ़िदा न हो।
जब दिल दुखाके तू कहे—"अच्छा ख़फ़ा न हो"॥

घुट-घुटके मर न जाये तो बतलाओ क्या करे।
वह बदनसीब जिसका कोई आसरा न हो॥

जिस दरपै मैं गया यह सदा आई—"दूर-दूर"।
ऐसा भी कोई तेरी नज़रसे गिरा न हो॥

क्या-क्या दुआएँ माँगते हैं सब मगर 'असर' !
अपनी यही दुआ है, कोई मुद्दआ[1] न हो॥

ऐ महवेशौक़[2] आये भी वोह और चले गये।
क्यों तूल दे रहा है अबस[3] इन्तज़ारको॥

अहले वतनपै यह भी गिराँ[4] हो न ऐ सबा[5] !
बर्बाद रहने दे मेरे मुश्ते-गुबारको[6]॥

बूए-वफ़ा न फूटे कहीं, उनको ख़ौफ़ है।
फूलोंसे ढक रहे हैं, हमारे मज़ारको॥

रोइए यासपर[7] उस कुश्तएग़मकी[8] कि जिसे।
ज़ौक़े-फ़रियाद[9] न हो, हसरते-बेदाद[10] न हो॥

क़ैसके नज़दीक लैला पर्द-ए-महमिलमें है।
कौन दीवानेको समझाये कि तेरे दिलमें है॥

---

[1]इच्छा, [2]दर्शनोंकी उत्सुकतामें लीन, [3]व्यर्थ; [4]बोझ, भारी; [5]हवा; [6]मुट्ठीभर धूलको; [7]निराशापर, [8]दुःखोंसे मिटे हुएपर; [9]न्याय पानेके लिए, पुकार करनेकी उत्कण्ठा; [10]ज़ुल्म-सहनकी पश्चात्ताप।

मैं अगर उससे कहूँ भी तो बताओ क्या कहूँ।
जब उसे मालूम है जो कुछ कि मेरे दिलमें है।।

उसकी रहमतने कहा—"जो माँगना हो माँगले"।
मेरी ग़ैरत बोल उठी "तू ही दिले-साइलमें[1] है"।।

मेरा हँसना है ज़ख़्मकी सूरत।
जो मुझे देखता है रोता है।।

दीदएगुल[2] थे सुबहको नमनाक[3]।
जो भी हँसता है बहुत रोता है।।

वोह लचक ऐसी कहाँसे लायेगी।
शाख़े-गुल कदसे तेरे शर्मायेगी।।

हम समझते थे कि उल्फ़त खेल है।
यह ख़बर क्या थी लहू रुलवायेगी।।

झोलियाँ भरती है क्यों, बादे-सहर?
फूल किसकी क़ब्रपर बरसायेगी?

छोड़ दीजे मुझको मेरे हालपर।
जो गुजरती है गुज़र ही जायेगी।।

उनसे बेताबीमें हम कहनेको सब कुछ कह गये।
दिलके टुकड़े होके लेकिन आँसुओंसे बह गये।।

ऐ हसीं! हम वाक़िफ़े-आदाबे-मजलिस हैं मगर—
इस क़दर प्यार आ गया मुँह तेरा तकते रह गये।।

माना ख़िरामेनाज़[4] भी दिलकश है इक अदा।
हम तुमको देखते कि क़यामतको देखते।।

---

[1]भिक्षुकके हृदयमे; [2]फूलोके नेत्र; [3]अश्रुपूर्ण; [4]प्रेयसीकी चाल।

उकता न जाते बादे-सहरकी जो छेड़से।
फूलोंमें छुपके तेरी नज़ाकतको देखते॥

मैं इधर चुप हूँ, वोह उधर चुप है।
इक तमाशा हुआ हया न हुई॥

उसकी रहमतको नाज़ हो जिसपर।
तुझसे ऐसी 'असर' ख़ता न हुई॥

कैसके[1] जज्ब-ए-उल्फतकी[2] लताफ़तके निसार[3]।
पर्दा महमिलका[4] न उट्ठा कभी दीवानेसे॥

नौहाख़्वाँ[5] रहते हैं रातोंको मेरी तुरबतपर।
नींद आ जाती थी जिनको मेरे अफ़सानेसे॥

क्या मुबारक है यह आलम नज़अ़का[6], आये हैं वोह।
फिर मुरत्तब हो निज़ामें-ज़िन्दगी मेरे लिए॥

फिर कत्लगहमें आये हैं कुछ मुजरिमाने-इश्क़।
सरको बुलन्द सीनेको ढ़रियाँ किये हुए॥

इतना तो सोच ज़ालिम! जौरोजफ़ासे पहले।
यह रस्म दोस्तीकी दुनियासे उठ न जाये॥

ज़ाहिद इधर खड़े हैं, गुनहगार उस तरफ़।
देखें तेरे करमका सज़ावार कौन है॥

फिर तुम्हें फुर्सत न हो या मैं ही आपेमें न हूँ।
यह बताते जाओ मेरे हक़में क्या मंज़ूर है॥

ख़न्द-ए-गुलपर[7] बहुत सुबहे-चमनको नाज़ है।
हाँ ज़रा फिर मुसकरा कर मुझसे पर्दा कीजिए॥

---

[1]मजनूँके, [2]प्रेम-भावकी सुरुचिपर; [3]न्योछावर, कुर्बान; [4]लैलीके महमिलका पर्दा, [5]शोक, सन्ताप, रोते हुए, [6]मृत्युका समय; [7]फूलकी मुसकानपर।

कोई इस गुलशने-हस्तीमें क्या महवेतमाशा हो।
चटकनेमें कलीके नज़अ़का आ़लम निकलता है॥

होश मेरे उड़ गये जब यह सुना—
"हश्र है, दीदार उनका आ़म है"॥

हिज्रमें राहत-सी राहत है नसीब।
दर्द दिलमे लबपै तेरा नाम है॥

अ़दमसे मंज़िले-हस्तीमे यूँ हम नातवाँ आये।
सबाके साथ जैसे बूएगुलका कारवाँ आये॥
इमामे-मस्जिदेजामअ़ शबे-आदीना[1] मैख़ाना।
कोई पूछे तो हज़रत आप रिन्दोंमे कहाँ आये॥
मै अपना दर्दे-दिल कहता हूँ, वोह मुँह फेरे हँसते है।
ख़ुदा वन्दा यह कैसे दर्दे-दिलके क़द्रदाँ आये॥
वतन अफ़साना था जब हम असीराने-कुहन छूटे।
चमन वीराना था जब ढूँढ़ते हम आशियाँ आये॥
ज़बाँ खुलते ही उस क़ाफिरने यह कहकर ज़बाँ सीदी।
'असर' अच्छा न होगा, अब जो शिकवे दरमियाँ आये॥

यह महवियतका आ़लम है किसीसे भी मुख़ातिब हूँ।
ज़बाँपर बेतहाशा आप ही का नाम आता है॥

तुम्हारी यादमें जीना, तुम्हींपर जान दे देना।
हमें कुछ काम आता है तो इतना काम आता है॥

अजलने गोरे-गरीबाँकी[2] सिम्त[3] इशारा किया।
जमीन ढूँढता फिरता था मै मकाँके लिए।

---

[1]जुमेअ़रात, [2]कब्रिस्तानकी; [3]तरफ।

ख़ुद-ब-ख़ुद दिलका दाग जलता है।
बे जलाये चिराग़ जलता है॥
दागे-दिल आज लौ नहीं देता।
कुछ बुझा-सा चिराग जलता है।
आहे भड़का रही है शोल-ए-इश्क़।
आँधियोंमें चिराग़ जलता है॥
ज़ुल्फ़ें बिखरी हुई हैं आ़रिज़पर।
बदलियोंमें चिराग जलता है।

बुतको अल्लाह बनाकर छोड़ा।
काम कुछ कर गये, करने वाले॥

तेरी मर्ज़ी हो जहाँ भेज दे ऐ दावरे-हश्र[1]!
मुझसे दुहराई न जायेंगी खतायें अपनी[*]॥
कोहो-सहरामें[2] जहाँ बैठके में रोया था।
उन मुकामोसे सुना जाता है दरिया निकले॥

अदा है याद तेरे मुसकराके आनेकी।
और उसके बाद वोह दामन छुड़ाके जानेकी॥
जहाँपै रास्ता भूला है बार-हा ज़ाहिद।
वहींसे राह मुड़ी है शराबख़ानेकी॥

सिसकते रहे जाँ-ब-लब[3] कैसे-कैसे?
अ़यादतको[4] आते रहे आनेवाले॥

---

[*]मेरी रुसवाईका आ़लम दावरे-महशर न पूछ।
मैं भरी महफ़िलमें यह किस्सा सुना सकता नहीं॥
—'जोश' मलसियानी

[1]ईश्वर; [2]पर्वतों-जगलोमे, [3]मृत्यु-आसन्न; [4]मिज़ाजपुर्सीको, रोगीकी ख़बर लेनेवाले।

इधर आ कलेजेमें तुझको छुपालूँ।
ख़ुद अपनी अदाओंसे शर्माने वाले॥

यह कहके उसने फिर आँसू न पूँछे।
"तुझे रोनेकी आ़दत पड़ गई है"॥

फ़नापै जिसकी बिना[1] है वह है बका[2] मेरी।
यह इब्तदा[3] है तो क्या होगी इन्तहा[4] मेरी?

फिर उसके बाद वोह शर्माये और बहुत शर्माये।
गदा[5] समझके सुना तो किये सदा[6] मेरी॥

बुताने-संग दिलसे दिल लगाके।
मिला क्या तुझको ओ बन्दे ख़ुदाके?
ख़यालै-ज़ब्त नाला, पासे-उल्फ़त।
मुसीबतमें पड़ा हूँ दिल लगाके॥

तुम्हारा हुस्ने आराइश[7] तुम्हारी सादगी ज़ेवर।
तुम्हें कोई ज़रूरत ही नहीं बनने-सँवरनेकी॥

यूँ गुज़रते हो कभी गोया शनासाई[8] न थी।
दिल-नवाज़ीके[9] वोह सब अगले तरीक़े क्या हुए॥

मुझको अपनी ख़बर नहीं ऐ दोस्त!
हाय! किस वक़्तमें तू आया है॥

है तसव्वुरकी भी निराली शान।
जो है नादीदा[10] उसको पाया है॥

[1]मृत्यु ही जिसकी नीव है; [2]ज़िन्दगी; [3]प्रारम्भ, शुरुआत; [4]अन्त; [5]फकीर; [6]बोली, बात; [7]शृंगार; [8]जान-पहिचान; [9]सहृदयताके; [10]जो दिखाई न दे सके।

इसलिए देखता हूँ तेरी निगहकी गर्दिश।
देखना है मुझे दुनियाकी हक़ीक़त क्या है॥

अ़बस[1] दैरो-हरमका[2] अ़ज़्म[3] है क्या तुमको सौदा[4] है।
'असर' जिसकी तमन्ना है वह तेरे दिलमें रहता है॥

हसरतें दिलकी मुझे रो भी चुकीं देर हुई।
आप अब पूछते हैं "तेरी तमन्ना क्या है"?

किसकी निगाहें-लुत्फ़ने रोशन किया दिमाग़।
तफ़सीर[5] लिख रहा हूँ मैं अपने गुनाहकी॥

झोलियाँ भरती है क्यों बादेसहर।
फूल किसकी क़ब्रपर बरसायगी?

—इन्तेख़ाबे असरिस्तानसे

वोह गुज़रा इधरसे जो बेगानावार[6]।
चिराग़ेलहद[7] झिलमलाने लगा॥

क्या हसरते-दीदार[8] है? हरबार यह समझा।
गोया कभी दीदार मयस्सर न हुआ था॥

जिन ख़यालातसे हो जाती है वहशत दूनी।
कुछ उन्हींसे दिले-दीवाना बहलते देखा॥
नज़रें उठी और उठके झुकीं तमकनतके साथ।
गोया यही जवाब था मेरे सवालका॥

ऐसी तौबासे तो मैख़्वार ही रहना था 'असर'!
दिलपै इक हाथ है, इक हाथसें साग़र टूटा॥

---

[1]व्यर्थ; [2]मन्दिर-मस्जिदका; [3]इरादा; [4]उन्माद; [5]भाष्य, टीका, [6]अपरिचितोकी तरह; [7]कब्रका दीपक, [8]देखनेकी लालसा।

तुमने पूछा इस तरह हाले-दिले खाना-खराब।
याद अब कुछ भी नहीं, अब तक बहुत कुछ याद था॥

यह कौन मुग़न्नी[1] था, यह किसका था फ़साना।
कहते हैं धुआँ जुम्बिशे-मिज़राबसे[2] निकला॥

सैयादने छेड़ा वहीं अफसानए-गुलशन।
जब क़स्द असीरोंने[3] किया तर्के-फ़ुग़ाँका[4]॥

मुक़द्दरने जो पहुँचाया भी उनके आस्तानेतक[5]।
यही दिल है तो हमको होश सिज्देका कहाँ होगा?

हमवारियेवफ़ासे[6] उलटने लगा था दम।
खुश हूँ कि तुमने क़स्द किया इम्तहानका॥

वोह गौर बात-बातपै, वोह शकभरी नजर।
या रब! न मुझसे साफ़ हो दिल बदगुमानका॥

चमन है, शाखेगुल है, आशियाँ है, फिर नहीं कुछ भी।
गज़ब है ताएरे-आज़ादका[7] बे बालोपर होना॥

वह मेरा न कहनेमें कह जाना सब कुछ।
वह उनका अचानक इधर देख लेना॥

समझ तो अर्जे-तमन्नाकी मसलहत हमदम[8]!
ख़ामोश रहनेसे वोह और बदगुमाँ होता॥

जहाँकी हर इक शै है, फ़ानी[9] मगर—
बनानेमें क्या-क्या तकल्लुफ़ किया॥

---

[1]गायक; [2]सितार बजानेका वह तार जो वादक उँगलीमें लगाये रहते हैं; [3]बन्दियोंने; [4]आह न करनेका; [5]चौखटतक; [6]निरन्तरकी भलाईसे; [7]स्वतन्त्र पक्षीका; [8]मित्र; [9]नष्ट होनेवाली।

हरइक रहगुज़रमें है सरगोशियाँ।
ख़ुदा जाने किसपर सितम हो गया?

निगाहे-शौक़ लगातार न यूँ देखे जा।
हो गये सुर्ख़ वोह लबहाये-मै आलूद[1] बहुत॥

रहें दाग़ होकर, बहें ख़ून होकर।
'असर' है वह दिल कामयाबे-मुहब्बत॥

कोई दिलपर हाथ रखकर उठ गया।
हाथ अब दिलसे उठाऊँ किस तरह॥

भूलने वालेसे कोई पूछता।
मैं तुझे दिलसे भुलाऊँ किस तरह?

आज कुछ मेहर्बान है सैयाद।
क्या नशेमन भी हो गया बर्बाद?

हर साँस एक ताज़ा जराहतका है पयाम।
नश्तर बनी हुई है रगे-जाँ तेरे बग़ैर॥

सूरते-मौज हो सरगर्मे-सफ़र।
साहिल आ जाये तो कतराके गुज़र॥

थे जो ख़फ़ा, हैं वोह ख़फ़ा आजतक।
क्यों है ख़फ़ा? यह न खुला आजतक॥

उसने किस लुत्फ़से पूछा कि 'असर' कैसे हो?
बेख़ुदीका हो बुरा, कह दिया "कुछ याद नहीं"॥

---

[1] मदिरासे तर ओठ।

पूछनेवाले तूने पूछा, लुत्फ़ेकरम, एहसान किया।
लबपर आये हर्फ़े-तमन्ना, इश्क़के यह आदाब नहीं॥

अहले दिलसे पूछो 'असर' क्या लज्जत है नाकामीमें।
हाथ उठा बैठे मतलबसे, मतलब गो नायाब नहीं॥

तासीर[1] पेशे-रू थी बाबे-क़ुबूल[2]वा[3] था।
माँगी गई न मुझसे माँगी हुई दुआएँ॥

अश्क़ मिज़गाँमें रह गया होगा।
मेरे ग़म-ख़ानेमें चिराग कहाँ?

रास्ते बन्द हैं, किधर जायें?
तुम हो पेशे-नज़र, किधर जायें॥
'असर' तेरे कूचेसे बच-बचके निकला।
अभी होश इतना है दीवानगीमें॥
कौन 'असर' की नज़रमें समाये।
देखी हैं उसने तुम्हारी आँखें॥

हवामें कुछ धुआँ-सा उठके फ़ौरन फैल जाता है।
क़फ़समें याद जब आता है मेरा आशियाँ मुझको॥
ख़ूबिएनाज़[4] तो देखो कि उसीने न सुना।
जिसने अफ़साना बनाया मेरे अफ़सानेको॥
इसी उलझनमें उन्हें लिखा न अब तक नामा[5]।
कोई मज़मून शिकायतका रकम[6] हो कि न हो॥

---

[1]हमारे इश्कका प्रभाव उनके समक्ष था; [2]-[3]स्वीकृतिका पृष्ठ खुला हुआ था; [4]उनके गर्वकी ख़ूबी; [5]पत्र; [6]लिखना।

हाल पूछा था तो इस तरह न पूछा होता।
रहगई अर्ज़े-तमन्नाकी तमन्ना मुझको॥

खोये हुए-से रहना दिनको, रोते फिरना रातोंको।
जो है आक़िल वोह क्या समझे, इश्क़-ओ-जुनूँकी बातोंको॥

फ़ानूसके पर्देमें लौ शमअ़की थर्राई।
अल्लाहरे अन्दाजे-जाँ-सोज़िये-परवाना[1]॥

जुनूँके जोशमें अपनी बलाएँ लेता है।
कहा जो नाज़से तुमने 'असर' को 'दीवाना'॥

तकिया कलाम ही सही, इश्क़से मर रहा हूँ मैं।
क्यों कहो बात-बातपर "देखभला-सा नाम है"॥

क़ासिद! पयाम उनका न कुछ देर अभी सुना।
रहने दे महवे-लज़्ज़ते-ज़ौक़े-ख़बर[2] मुझे॥

जानता हूँ कि नशेमन नहीं बाक़ी सैयाद!
फिर भी इक लुत्फ़े-ख़लिश[3] हसरतेपरवाज़में[4] है॥

इक रोज़ दिलमें तेरी मुहब्बत थी जागुज़ीं[5]।
अब-तू-ही तू है तेरी मुहब्बत नहीं रही॥

मैं क्या सुनाऊँ दर्दे-मुहब्बतका माजरा।
हद हो गई कि तुमसे शिकायत नहीं रही॥

---

[1]पतगेके जल-मरनेका अन्दाज़, [2]प्रेयसीके सदेश आनेके आनन्दमे लीन; [3]चुभनका आनद; [4]उडनेकी अभिलाषामे; [5]आसीन।

हुआ तो हश्रके दिन उनका सामना लेकिन।
हुजूमे-आ़समे क्या अ़र्जे-मुद्दआ़ करते॥
वोह बेवफ़ा है कि हम बेवफ़ा, ख़ुदा जाने।
हयात ख़त्म है और उनकी आमद-आमद है॥

दूरसे गाह-गाह एक निगाह।
उसको भी मुद्दते मदीद हुई॥
दिले-ग़मदीदा काँप-काँप उठा।
यासके[1] बाद जब उमीद हुई॥

कौन कहता है कि मौत अंजाम होना चाहिए।
जिंदगीका-जिंदगी पैग़ाम होना चाहिए॥

आग़ाजे-मुहब्बतकी लज्जत, अंजाममें पाना मुश्किल है।
जब दिलको मसोसे रहते थे, अब हाथ लगाना मुश्किल है॥

तेरी नजर नहीं होती हरीफ़[2] शोख़ीकी।
नजरसे आज यह किसको गिरा दिया तूने?

ख़ता मुआ़फ़ मेरी बेकसीपै करके नजर।
कुछ और हौसलएग़म बढ़ा दिया तूने॥

हाय उनकी शोख़ियाँ और शौक़की रुसवाइयाँ।
देखते थे वोह हमें हम उनको क्योंकर देखते॥
उनके आनेकी बँधी थी आस जबतक हमनशीं[3]?
सुबह हो जाती थी अक्सर जानिबेदर[4] देखते॥

ईमाँ ग़लत, उसूल ग़लत, इद्दआ़[5] ग़लत।
इन्साँकी दिलदेही[6] अगर इन्साँ न कर सके॥

---

[1]निराशाके; [2]प्रतिद्वद्वी; [3]एक ही जगह बैठने वाले पड़ोसी; [4]दरवाजेकी तरफ; [5]दावा; [6]हृदयको सांत्वना।

मिज़गाँसे[1] यूँ टपक पड़ा इक अश्के-ख़ूँ 'असर' !
पटका हो जैसे जाम किसी बादाख़्वारने[2] ।।

कुछ देर फ़िक्र आलमे-बालाकी छोड़ दे।
इस अंजुमनका[3] राज़[4] इसी अंजुमनमें है ।।

नज़र उस हुस्नेतावाँतक[5] ब-आसानी नहीं जाती।
मगर जाकर पलटती है तो पहचानी नहीं जाती ।।
हुई मुद्दत कि उसने नाज़से दामनको झटका था।
अभीतक मौजऐगुलकी[6] परेशानी नही जाती ।।

कुछ और बढ़ गई हैं परीशाँ निगाहियाँ।
दमभर जो तेरे गमसे तबीअत बहल गई ।।

अल्लाहरी बदगुमानी[7] देता हूँ जब दुआएँ।
कहता है चुपके-चुपके "इसमें भी कुछ दग़ा है" ।।
यह भीगी रात और यह बरसातकी हवाएँ।
जितना भुला रहा हूँ, वह याद आ रहा है ।।

न पूछ सादगिये-शौक़, मान जाता हूँ—
यह जानते हुए वअ़दा फकत बहाना है ।।
चल गया उस निगाहका जादू।
कह गये दिलकी बात क्या कहिए ।।
जबतक उसकी बातका मै दूँ जवाब।
इतने अ़र्सेमें क़यामत हो गई ।।
याद करले भूलनेवाले मेरे।
अब तो बिछुड़े एक मुद्दत हो गई ।।

---

[1]पलकोंके बालोंसे; [2]शराबीने; [3]महफिलका, [4]भेद; [5]चन्द्रमुखीतक; [6]दुखी फूलोंकी; [7]अविश्वसनीयता ।

न जाने बात यह क्या है, तुम्हें जिस दिनसे देखा है।
मेरी नज़रोंमें दुनियाभर हसीं मालूम होती हैं॥

अपनी लज्ज़तमें गुम हुए नग़मे[1]।
अब ख़मोशी सुख़नसे[2] बेहतर है॥

—निगार जनवरी १९४१ ई०

यह भी नसीब! माइले-पुरसिश[3] वोह जब हुए।
जो मेरा मुद्दआ था, मुझीपर अयाँ[4] न था॥

हंगामए-हस्तीकी[5] बस इतनी हक़ीक़त थी।
इक मौज थी जो उठकर फिर मिल गई दरियासे॥

हज़ार हुस्न थे काफिरकी सादगीमें निहाँ।
न इश्वा[6] था, न करिश्मा, फ़क़त जवानी थी॥

न देखनेकी तरह हमने ज़िंदगी देखी।
चिराग़ बुझने लगा जब तो रोशनी देखी॥

मुद्दआ पूछनेवाले! तेरी बातोंके निसार।
अब वोह आलम है कि हसरत है न अरमाँ कोई॥

ऐसे भी लमहे गुज़रे हैं, हैरते-जमालपर।
जलवा नज़रके सामने दिलको मगर यक़ीं नहीं॥

रहमपर ग़ैरके जीना कैसा?
ज़िंदगीका यह क़रीना कैसा?

नाख़ुदाका[7] कभी एहसान उठाया न गया।
मैं हरइक मौजे-बलाख़ेज़को[8] साहिल[9] समझा॥

---

[1]संगीत; [2]वार्तालापसे; [3]दिलका हाल जाननेको उत्सुक; [4]प्रकट; [5]जिन्दगीके जोर-शोरकी, [6]फरेब, रूपका अभिमान; [7]मल्लाहका; [8]भयकर लहरको; [9]किनारा।

मजलिसे-वअ़जसे[1] इक रिन्द[2] यह कहता उट्ठा—
"क़ाफ़िर अच्छे है दिलआज़ार मुसलमानोसे ॥"

मज़ाके-इ़श्क हो कामिल तो सूरते-शबनम।
कनारे-गुलमें रहे और पाकबाज़ रहे ॥
'असर' तेरे क़ुर्बान, दिल लेनेवाले।
फिर एक बार कह दे—"किसीका इजारा" ॥

अब आये बहार या न आये।
आँखोंसे लहू टपक रहा है ॥

बहम[3] सर-गोशियाँ[4] होने लगीं तीमारदारोंमें[5]।
तुम अपने घर सिधारो अब यहाँ कुछ और सामाँ है ॥
—शाइर जनवरी १९५० ई०

हम अपने हाले-परेशाँपै मुसकराये थे।
ज़माना हो गया ऐसे भी मुसकराये हुए ॥

ज़बाँपै हर्फ़े-तमन्ना 'असर' न आया था।
कि वोह निगाह फिरी, क्यों फिरी ? नहीं मालूम ॥
चमनवालो ! चमनका तुमको नज़्ज़ारा मुबारक हो।
घुटा है मेरी आँखोंमें नशेमनका धुआँ अबतक ॥
पलकतक अश्क आता था, मगर जबसे नहीं आया।
नज़रमें एक बिजली कौंदती मालूम देती है ॥

वोह मग़रूर अफसोस इतना न समझा।
तमन्ना है इक शै अलग इल्तेजासे[6] ॥

---

[1]मौलवीका व्याख्यान सुनकर, [2]शराबी, [3]परस्पर; [4]कानाफूसी; [5]परिचर्या करनेवालोंमे; [6]प्रार्थनासे।

वोह आये हैं पुरसिशको ऐ नामुरादी !
बहरहाल अब मुसकराना पड़ेगा ॥

इधरसे आज वह गुज़रे तो मुँह फेरे हुए गुज़रे।
अब उनसे भी हमारी बेकसी देखी नहीं जाती ॥

काश ! न कहते मुद्दआ खाके निगाहका फ़रेब।
आस थी इक बँधी हुई वह भी रही-सही गई ॥

बहाना मिल न जाये बिजलियोंको टूट पड़नेका।
कलेजा काँपता है आशियाँको आशियाँ कहते ॥

किससे कहिए और क्या कहिए सुननेवाला कोई नहीं।
कुछ घुट-घुटकर देख लिया कुछ शोर मचाकर देखेंगे ॥

हरचन्द उसको मुन्फ़इले-जौर कर दिया।
दिलपर जो गुजरी बाद अजां कुछ न पूछिए ॥

--माहे-नौ फरवरी १९५१ ई०

ला चुक नसीमे-सुबह पयामे-विसाले-दोस्त ।
कबतक मिसाले-शमअ रगे-जाँ जलाऊँ मैं ?

२७ फरवरी १९५२ ई०

सैयद रियाज़अहमद 'रियाज़' लखनऊके समीप खैरावाद ज़िला सीतापुरमे १८५३ ई० मे उत्पन्न हुए। आपके पिता सैयद तुफैलअहमद पहले गोरखपुरमे कोर्ट इन्सपेक्टर, वादमे आगरेके शहर कोतवाल रहे।

रियाज़ भी पहले-पहल पुलिस-विभागमे ही गये, किन्तु आपकी साहित्यिक रुचिने वहाँ अधिक नही रहने दिया और १८७२ ई० में त्यागपत्र देकर साहित्यिक क्षेत्रमे उतर पडे। १९ वर्षकी पूरी तरह उम्र हो भी नही पाई थी कि गोरखपुरसे 'रियाजुल' अखवारका सपादन एव प्रकाशन करने लगे। थोडे ही अर्सेके वाद 'तारवर्की' दैनिक पत्र भी निकालने लगे। १८७९ ई० मे शाइरी सवधी 'गुलकदए-रियाज़' का प्रकाशन प्रारभ कर दिया। लोग आपके गद्यके काफी प्रशसक थे। वहुत-से तो केवल आपका सपादकीय पढनेको ही अखवार लेते थे।

रियाज़को कमसिनीसे ही शाइरीका शौक हो गया था। पहले आप 'असीर'से मशविरये-सुखन लेते थे, किन्तु 'असीर' वृद्ध हो जानेके कारण शिष्योकी गजलोका सशोधन पूरी तवज्जुहसे नही कर पाते थे। अत उन्होने अपने सभी शिष्य, अपने प्रधान शिष्य 'अमीर' मीनाईके सुपुर्द कर दिये थे। 'अमीर' मीनाई उन दिनो ख्यातिके शिखरको छू रहे थे। तभीसे 'रियाज़' 'अमीर' मीनाईके शिष्य होकर उनका हृदयसे कलमा पढने लगे।

१९ वी शताब्दीके इन अतिम दिनोमे जब कि चमने-उर्दूमे मिर्ज़ा 'दाग', मुशी 'अमीर' मीनाई, और 'जलालकी' शाइरीका तूती बोल रहा था, 'रियाज़' भी अपने उस्तादके जीवनकालमे ही ख्यातिकी सीढियोपर पाँव रखने लगे थे।

१८५७ के विप्लवके बाद दिल्ली-लखनऊकी सल्तनतें नष्ट हो चुकी थी। प्राय सभी उच्चकोटिके राज्याश्रित कलाकारोको रामपुरके तत्कालीन गुणज्ञ नवाबने अपने यहाँ बुला लिया था। मुनीर, उरूज, बहर, आगा, कलक, अमीर मीनाई, जलाल, दाग—जैसे ख्यातिप्राप्त शाइर रामपुरकी रौनक बढा रहे थे। कलापारखी नवाबने 'रियाज' को भी रामपुर बुलाकर पुरस्कृत किया, और स्थायी रूपसे रामपुरमे ही रखनेकी अभिलाषा प्रकट की, किन्तु रियाज़की स्वतन्त्र और स्वाभिमानी प्रकृतिने वहाँ रहना उचित नही समझा। यहाँतक कि नवाब रामपुरने दो बार अपने साहबजादेको रियाजको लखनऊसे लिवा लानेको भेजा और तीसरी बार राजा नौशादअलीद्वारा प्रेरणा की, किन्तु 'रियाज' फिर भी रामपुर नही जा सके। रामपुर-नवाबके अतिरिक्त नवाब-हैदराबाद और उनके प्रधान मन्त्री राजा किशनप्रसाद 'शाद' ने भी रियाजको हैदराबाद बसनेके लिए काफी जोर दिया, परन्तु आप वहाँ भी नही गये।

बचपनसे १९०८ तक आप अधिकतर गोरखपुरमे रहे। खैराबाद बहुत कम रहे। मरते दमतक गोरखपुर नही छोड़ना चाहते थे, परन्तु भवितव्यको कौन टाल सकता है? महाराजा महमूदाबादके प्रेमाग्रहको आप नही टाल सके, और १९०८ ई० मे आपको लखनऊ चला आना पडा। गोरखपुरसे आपको कितना प्रेम था, उसको छोडते समय जो व्यथा पहुँची, उसे यूँ व्यक्त किया है—

जवानी जिनमें खोई है वोह गलियाँ याद आती है।
बड़ी हसरतसे लबपर जिक्रे-गोरखपूर आता है॥

'रियाज़' थी जो मुक़द्दरमें बाज़गश्तेशबाब।
जवान होनेको पीरीमें लखनऊ आये॥

'रियाज़' अपने उस्ताद 'अमीर' मीनाईको अत्यत आदर और श्रद्धाकी दृष्टिसे देखते थे। अपने दीवानमे कई स्थलोपर मुक्त कठसे उस्तादका गुणगान किया है—

मस्ते-मीना हूँ, पिया है मैंने,
जाम 'अमीर' अहमद मीनाईका॥

जब कि वे आस्माने-शाइरीपै चमक रहे थे, और शाइरीका बहुत अच्छा अभ्यास हो गया था, तब भी उस्तादको बिना दिखाये न कही कलाम पढते थे और न छपने भेजते थे। उस्तादके होते हुए कलाम न दिखायें, यह बे-अदबी रियाज़से मुमकिन ही नही थी। और यही कारण था कि उस्ताद भी उनका कलाम बहुत ध्यानपूर्वक मनसे सशोधन करते थे; और उन्हे बहुत अधिक स्नेह करते थे[1]।

उस्तादकी मृत्युसे रियाज़को इतना सदमा पहुँचा कि आपने आम मुशाइरोमे गज़ल पढ़नेकी कसम खा ली, और मृत्यु पर्यंत इस कसमको निभाया।

महाराजा महमूदाबादने एक मर्तबा कहा—"रियाज़! इस वक्त 'अमीर' अगर ज़िन्दा होते तो तुम पर फ़ख्र (अभिमान) करते।"

रियाज़ने अर्ज़ की—"ऐसा न फर्माइये, वे उस्ताद थे।"

महाराजा यह सुनकर भी अपनी रायपर कायम रहे तो रियाजने अपना यह शेअर—

---

[1]रियाज़का अमीर मीनाई कितना ख़याल रखते थे, उनकी कैसी-कैसी ज़िदोको पूरा करते थे, यह शेरो-सुख़न प्रथम भागमे अमीर मीनाईके परिचयमे दिया जा चुका है।

नसीम आई है शमअे-मज़ार गुल करने।
वोह उसके आनेसे पहले ही जल बुझी होगी॥

सुनाकर कहा—"उस्तादने सिर्फ एक लफ़्ज़ बढाकर ज़मीनको आसमान कर दिया"—

नसीम अब आई है, शमअे-मज़ार गुल करने।
वोह उसके आनेसे पहले ही जल बुझी होगी[1]॥

'रियाज़' केवल अपने उस्तादके ही भक्त न थे, उनके परिवारसे भी आत्मीयताका सबंध रखते थे। 'अमीर' मीनाईके पुत्र 'अख्तर' मीनाई लिखते हैं—"हम लोगोसे उनका जो तअल्लुक था, वोह अज़ीज़ोसे बढकर हकीक़ी भाइयोंका-सा था और अब तो हकीकी भाइयोमे भी ऐसी मुहब्बत कम होती है। उनकी रिहलत (मृत्यु)से मुहब्बत और खुलूसका एक मुजस्सिम पैकर (स्नेह-सभ्यताका मूर्तमान रूप) उठ गया"।[2]

'रियाज' नम्र, मिलन्सार खुशमिज़ाज शाइर थे। तबीअत रगीन पाई थी। फर्माया है—

वाह क्या रंग है क्या खूब तबीअत है 'रियाज'!
हो ज़मीं कोई तुम्हें फूलते-फलते देखा॥

मुश्किल-से-मुश्किल जमीनमे कई-कई गजल कहते थे। 'अख्तर' मीनाई आँखो देखी घटना बयान करते हुए लिखते हैं—"अक्सर ऐसा हुआ है कि उनको एक ही तरहमे कई-कई गज़ले कहनी पडी। एक गजल कही, जिसने उसकी तारीफ की उसको देदी। अपने लिए दूसरी कही, वह भी किसीने माँग ली। लेकिन क्या मजाल कि उनके तेवरपर ज़रा भी मैल आया हो। हमेशा यही कहकर टाल दिया कि "ऊँह, क्या है? और कह लेगे।[3]"

---

[1]मयख़ानए-रियाज़ पृ० ४१; [2]रियाजे-रिजवाँ पेशे-लफ़्ज़ पृ० ५; [3]रियाजे-रिज़वाँ, पेशे-लफ्ज पृ० ५।

'रियाज' पर शवावका रग हमेशा छाया रहा। बुढापा भी शवावकी वाते करते गुज़रा और ८१ वर्ष की आयुमे मरते समयतक वे रौनके-महफिल वने रहे।

वही शवावकी वातें, वही शवावका रंग।
तुझे 'रियाज़' वुढ़ापेमें भी जवाँ देखा॥

अल्लामा नियाज़ फतहपुरी फर्माते है—"रियाज़को मैने उस ज़मानेमें देखा, जव वोह ज़ोअ्फ़-ओ-कुहूलत (वृद्धावस्था और दुर्वलता) के दौरसे गुज़र रहे थे। वावजूद इसके कि ज़माना म्वाफिक न था, हालातने सख्त दिलगीर वना रखा था, हुजूमे अफकार (चिन्ताओके समूह) ने चारो तरफसे घेर लिया था, लेकिन 'रियाज' वावजूद—सरापा गमोअलम (दुःख-व्यथासे ओत-प्रोत) होनेके दूसरोके लिए यक्सर वहारे-शगुफ्तगी (खिले हुए उद्यान) थे। आप ख्वाह कितने ही मगमूम-ओ-मलूल (चिंतित-दुःखी) क्यो न हो, लेकिन यह मुम्किन नही कि 'रियाज' आपको मिल जाये, और थोडी देरके लिए आप किसी और आलम (दुनिया) मे न पहुँच जाये। उनकी दिलकश-ओ-दिल्नशी (मनोरजक एव हृदयस्पर्शी) गुफ्तगू, उनका अन्दाज़े-वयान, लतीफ वज़ला सजी (कोमल हास्य) और सवसे वढकर उनका खुलूस (सभ्य-स्नेह-व्यवहार)—यह मालूम होता था कि इन्सान किसी ऐसी फज़ा (वातारवण) मे पहुँच गया है, जहाँ फिरदौस (स्वर्ग) की हवा है, कौसर-ओ-सवीलकी रवानी (जन्नतमे वहनेवाली नहरोका प्रवाह) है। वच्चोके लिए उनका वजूद गहवारा-ए-इस्तराहत (सुख-चैनका पालना) जवानोके लिए उनकी हस्ती दास्ताने-हुस्नो-इश्क और ज़ईफो (वृद्धो) के लिए उनकी जात एक विरा-दराना आगोश थी। यह मुम्किन नही कि कोई शख्स रियाजसे मिले, और अपने जौक (शौक) को उनके पाससे ना-आसूदा वापिस लाये।"[1]

---

[1] रियाजे-रिज़वाँ, ऐतराफात पृ० ४२।

अपनी इस जिन्दादिलीके बारेमे स्वय भी कहा है—

जिस अंजुमनमें बैठ गया रौनक़ आ गई।
कुछ आदमी 'रियाज़' अ़जब दिल्लगीका था।।

आपकी जिदादिलीके दो नमूने मुलाहिजा हो—

१—दिल्ली दरबारके अवसरपर अपने एक दोस्त निजामके साथ घूमते-फिरते रियाज एक रईससे भी मिलने चले गये। अब आगेकी कहानी स्वय रियाज साहबकी जबानी सुनिए—"दिनमे सिवा नाश्तेके कुछ खानेका इत्तिफाक नही हुआ था। मिलकर जल्द वापिस होनेका कस्द था। ८ बजे शब (रात्रि) को वापिसीकी इजाजत चाही, मगर फर्शपर दस्तरख्वान बिछ चुका था। पहले मुझसे भी खानेका इसरार किया गया, मगर मैंने मआजिरत की (नम्रतापूर्वक इन्कार कर दिया)। जब निजामसे कहा गया तो वे बेतकल्लुफ दस्तरख्वानपर नज़र आये (भोजनपर डट गये)। मेरी तरफ मुड़कर भी न देखा कि मैं इशारेसे कुछ काम लेता। मेरे लिए सब्रके सिवा चारा क्या था। खानेके साथ सुर्ख़-सब्ज मुख्तलिफ (भिन्न-भिन्न) रगकी मदरासी शीरीनी (मिठाइयाँ) भी थी। निजामने इसके लिए भी इशारा न किया। दस्तरख्वान खत्म हुआ तो ख्वाबगाह (शयनागार) के अन्दर मेजोकी तरफ तश्तरियाँ जाती नजर पडी। कुछ देरके बाद मैंने इजाजत चाही। मेजवानने फर्माया—"शहर बहुत दूर है, रात ज्यादा हो गई है, वापिस नही जा सकते।" मै कुछ कहने भी न पाया था कि निजामने मंजबूर कर दिया। ख्वाबगाहमे सामाने-इस्तराहत (शयनागारमे आरामदेह बिछौना) हो गया। सब हजरात आराम फर्माने लगे, मै करवटे बदलने लगा। रोशनी कम करदी गई थी। मुझे कुछ सहारा था तो रगीन शीरनीकी तश्तरियोका। जब हर तरफसे नफीरेख्वाब (खर्राटे) बुलन्द हुई, मै उठा और दबे पाँव मेजके करीब पहुँचकर हाथ बढाया। डलीका महसूस होना था कि वह मुँहके अन्दर पहुँच गई। मै चाहता यह था कि जबानपर पहुँचने-से पहले हलकमे उतर जाय। मगर वोह कम्बख्त साँपके मुँहकी छछून्दर

बन गई। न उगलनेकी न निगलनेकी। यह रंगीन शीरनीकी डली न थी, साबुनकी बट्टी थी। मेरी मुसीबतका पूरा लुत्फ उठाना हो तो कुछ देरके लिए साबुनकी टिकिया मुँहमे रखकर मुझे ममनून (आभारी) कीजिए। रूमालसे साफ होकर वह चीज़ वही गई, जहाँसे उठाई गई थी। पानीकी तलाशमे किसीकी आँख खुल जानेका अन्देशा था। रूमालकी कारफरमाई मुँहके अन्दर भी रही। हम इस आसानीसे पलगतक न पहुँच सके, जिस तरह वह चीज मुँहतक पहुँची थी। अब साबुन अपनी जगहपर था, मगर उसकी लज्ज़त जबानपर। सुबह चाय और बिस्कुट सामने आये। मैंने दो-चार घूट पीकर बिस्कुट उठाकर इतने ज्यादा पियालीमे डाले कि मेज़बानकी मेरी तरफ तवज्जह हो गई। उन्होने दूसरी पियाली बढाकर कहा—"अब बिस्कुट इसमे डाले जाएँ।" निजामको हँसी आगई, जो मअनीखेज़ थी। ब-इस्तफसार उन्होने कहा—"आप तमाम दिन भूखे रहे थे, फिर भी शबको खानेमे तकल्लुफ किया, वापिसीका भी सहारा टूटा। अब चायमे तकल्लुफ रुख़्सत हो गया।" मै दिलमे ख़ुश था कि ख़ुदाने साबुनके वाकेअेका पर्दा रख लिया।[1]"

२—ख़्वाजा फरीदुद्दीन उर्फ फद्दन साहब 'रियाज' के बचपनके दोस्त थे। १०-१५ वर्षके बाद रियाज़ लखनऊ आये तो उनसे मिलने गये। इतनी मुद्दतके बाद सूरतमे फर्क हो ही जाता है। कुछ इस वजहसे और कुछ काममें मसरूफ होनेकी वजहसे ख़्वाजा साहबने 'रियाज़' को नही पहचाना तो फौरन उन्हे एक शरारत सूझी। अदबसे सलाम करके दूर एक मूँढेपर बैठ गये। मगरिबका वक्त था। काम ज़ियादा था, इसलिए ख़्वाजा साहब परेशान थे। उनकी तरफ मुख़ातिब न हो सके। इतना वक्त रियाज़को मिला तो हज़रतने पूरी स्कीम तैयार कर ली। अब जो ख़्वाजा साहब मुख़ातिब हुए और पूछा आप कहाँसे तशरीफ लाये हे तो हजरत रियाजने कहा—

---

[1]मयख़ानये-रियाज़ पृ० १२१-१२३।

"हुजूर ! मै शैख़ असग़रअलीके कारख़ानेसे आया हूँ, आपके यहाँ कुछ इत्र और तेल आया था उसके १४।।।) बाकी है।"

ख्वाजा साहब हिसाब-किताब और लेन-देनके साफ आदमी थे। सुनकर बरहम (कुपित) हो गये। 'रियाज' उनकी इस आदतको अच्छी तरह जानते थे।

ख्वाजा बोले—"कैसा रुपया ? मैने आजतक किसी जगहसे कोई चीज़ कर्ज़ नही मँगाई है।"

रियाज—"मै क्या जानूँ शैख़ साहब झूठ कहते होगे।" शैख़ असगर-अ़ली भी ख़्वाजाके गहरे दोस्त थे। उनकी शानमे यह कलमा न सुन सके। पूछा—"यह तो बताइए आप है कौन ?"

रियाज़—"एक दफा तो अर्ज कर चुका हूँ, कहिए तो काबेकी तरफ हाथ उठाकर कहूँ। क़ुरान पाकपर हाथ रखके कहूँ।"

यह जवाब सुनकर ख्वाजा साहब आग हो गये। कहा—"तुम बडे गुस्ताख़ आदमी मालूम होते हो।"

रियाज़—"बजा है, चीज लेके रुपया न दे और जब तकाजा करने आदमी आये, तो उसको गुस्ताख़ बताये।"

यह तू-तू मै-मै हो ही रही थी कि हादीअलीख़ाँ आ गये। यह भी इन दोनोके बचपनके दोस्त थे। उन्होने रियाज़को पहचान लिया और बोल उठे—

"अरे फ़द्दन ! तूने नही पहचाना।" अब जो ख्वाजाने गौरसे देखा तो दौडकर लिपट गये।[1]"

रियाज़की कलमी तसवीर तस्नीम मीनाई यूँ खीचते है—खूब घनी लबी दाढी, दराज कामत (ऊँचा शरीर) बड़ी-बडी कटीली आँखे, होटोपर मुस्तकिल तबस्सुम (स्थाई मुसकराहट) लबोलहजेमे चाशनी, लफ्जोंमे

---

[1]मयख़ानये रियाज पृ० १३३-१३४।

दिलकशी और शगुफ्तगी, खयालात पाकीज़ा और सुथरे, बयानमे हलका-हलका-सा लतीफ़ मिज़ाह (मजाक) और तज़का (मीठी चुटकियाँ लेनेका) पहलू ।"

नमाज़ पाँचो वक्त पढते थे, रमजानमे तीसो रोज़े रखते थे । मृत्यु पर्यंत ८१ वर्षकी आयुतक बगैर चश्मेके लिख लेते थे और चाँदकी रोशनीमे पढ लेते थे ।

२० जुलाई १९३४ ई० मे ८१ वर्षकी आयुमे खैराबादमे समाधि पाई ।

ऐसे चुलबुले, जिन्दादिल, खुश-मजाक और रगीन मिज़ाजकी शाइरीका रग कुदरती तौर पर लखनवी होना था । एक तो वे स्वभावतः रगीन मिजाज थे, दूसरे जब उन्होंने शाइरीकी चौखटपर पाँव रखा, तब लखनवी शाइरी पूरे शबाबपर थी । तीसरे उनके उस्ताद 'अमीर' मीनाई तत्कालीन लखनवी रगके[1] एकमात्र प्रतिनिधि समझे जाते थे । अत 'रियाज़' का इस रगमे शराबोर होना लाज़िमी था । उन्ही दिनो मिर्ज़ा 'दाग'की शाइरीका आफताब पूरी आब-ओ-ताबके साथ चमक रहा था । भारतके इस सिरेसे उस सिरेतक उनके नामकी धूम थी । हर तवायफकी ज़बानपर,

---

[1]लखनवी शाइरी क्या है, यह 'शेर-ओ-सुखन' प्रथम भागमे पृ० २४८ से २७२ तक विस्तारके साथ लिखा जा चुका है । इसके अतिरिक्त भी नासिख, आतिश, जुरअत, इन्शा, मुसहफी, रगीन आदि शाइरोके परिचय-कलाममे प्रथम भागमे यत्र-तत्र उल्लेख हुआ है । शेरोसुखनके पाँचवे भागके सिंहावलोकनमे भी सक्षिप्त उल्लेख किया गया है । अत्युक्ति, ज़नानापन, कृत्रिमता, तकल्लुफ, उपमाओ, उदाहरणोकी भरमार, शब्दाडबर, ज़ाहिरा चमक-दमक, स्त्रियोके लिबास, ज़ेवर, शृंगार आदिका अश्लील वर्णन, ऐसे भाव जिनसे मनमे विकार उत्पन्न हों, शब्दोका रख-रखाव, यही उस युगकी लखनवी शाइरी थी ।

हर महफ़िलमे और हर गली-कूचेमे 'दाग'की गजले थिरक रही थी। कहनेको मिर्जा दाग देहलवी शाइर थे, मगर अपनी शोख़ बयानी, चुटीले अन्दाज़ और रगीन मिजाजीकी वजहसे आम लोगोके महबूब बने हुए थे। क्या देहलवी, क्या लखनवी, क्या हैदराबादी—सभी उनके शोख़ियाना रगको अपना रहे थे।

जिस तरह दीपक बुझनेसे पूर्व एक बारगी प्रज्वलित हो उठता है, उसी तरह मिटनेसे पूर्व लखनवी शाइरी भी, १६ वी शताब्दीके अतिम वर्षोंमे खूब चमक रही थी। लेकिन देहलवी शाइरीकी आबोताबके समक्ष इसकी चमक माँद पड़ने लगी थी। उस युगके सभी लखनवी शाइरोंने यह महसूस किया कि अब लखनवी शाइरीका बाजार तेजीसे मन्दा होता जा रहा है, अतः उन्होने धीरे-धीरे अपने लबो-लहजेको बदलना प्रारभ कर दिया और 'जलाल'ने तो यकबारगी ही अपने दामनसे लखनवी रंग पोछ दिया। लखनऊके उस्ताद शाइर लखनवी रगसे तो बेजार होने लगे, मगर वे मीर, गालिब, मोमिनके वास्तविक देहलवी रगको न अपनाकर मिर्ज़ा दागके शोख़ियाना धारेमे पड गये। मिर्जा दागकी शाइरीमे यूँ तो देहलवी शाइरीके कितने ही गुण विद्यमान थे। मगर उनका इश्क वही लखनवी-जैसा बाजारी इश्क था, और इशा-जुरअत-जैसी मुआमले बन्दी। लेकिन यह रग उन दिनो इतना मकबूल हुआ कि 'अमीर' मीनाई-जैसा सजीदा और बा-इख़लाक उस्ताद दागके रगीन हौज़में कूद पडा। फिर 'रियाज'का तो कहना ही क्या? वे तो कुदरतकी तरफसे चुलबुली और रिन्दाना तबिअत ही लेकर आये थे।

उर्दू-शाइरीमे फारसी-शाइरीका अनुकरण हुआ है। अतः उर्दूमे भी फारसीके समान शराबका रग घुला-मिला है। कोई भी शाइर ऐसा नही गुजरा, जिसने शराबपर न कहा हो। चाहे उसने उम्र भर शराब छूई भी न हो, और समस्त जीवन सयमी एव धार्मिक रहा हो। मगर कूचए-शाइरीमे पाँव रखनेके बाद मैख़ानेकी जियारतको न जाय और

पाए-साकीपर सिज्दा न करे यह कैसे हो सकता है? क्योंकि उर्दू-फारसी-शाइरीका निर्माण ही उन तन्तुओसे हुआ है, जिससे कि साकी-ओ-मैखाना बनाये गये है। यहाँतक कि पवित्र-से-पवित्र विचार, आध्यात्मिक एवं दार्शनिक बाते भी शराबके रगमे ही कही जायेगी। बकौल गालिब—

हर चन्द हो मुशाहिद-ए-हक्की गुफ्तगू।
बनती नहीं है बादा-ओ-सागर कहे बग़ैर॥

यूँ तो हर उर्दू-शाइरने शराबपर लिखा है, मगर उर्दू शाइरीके इस ४०० वर्षके इतिहासमे और सैकड़ो ख्यातिप्राप्त शाइरोमे—१ गालिब, २ दाग, ३ रियाज़, ४ जिगर, और ५ जोशने जितने अधिक और जिस खूबीसे शराबके मज़मून नज्म किये है, शेप समस्त शाइरोके दीवान मिलाकर भी उतना कलाम पेश नही कर सकते।

उक्त पाँचो शाइरोमे 'गालिब' खुले-आम पीते थे। 'दाग़'ने इस काफिरको कभी मुँह न लगाया। 'जिगर' कभी पीते थे, मगर तौबा किये उन्हें अरसा हो गया है। 'जोश' अलबत्ता शौक फर्माते है। रियाजने कभी एक बूंदतक ज़बानपर नही रखी। फर्माते है—

गुनाह कोई न करते शराब ही पीते।
यह क्या किया कि गुनह तो किये, शराब न पी॥

लेकिन आगरेके एक शाइरका कहना है कि— "'रियाज़'ने मेरे सामने पी है और मेरे साथ पी है।"[1] केवल इस शहादतके अतिरिक्त और जितने भी रियाज़के इष्ट-मित्र और साथी है, वे सब एकमत होकर कहते है कि रियाज़ने ता-उम्र शराब नही पी। नियाज फतहपुरी लिखते है—

"इसका इल्म बहुत कम लोगोको होगा कि सारी उम्र खुमरियात

---

[1]नक्दो-नज़र पृ २१५।

(शराब) की शाइरीमे मुब्तिला रहकर ज़ौके-बादा (शराबके शौक) से ना-आश्ना (अनभिज्ञ) रहनेवाला शाइर ज़िन्दगीकी तमाम शगुफ़्ता सामानियो (भोगविलासके समस्त साधनो) के साथ हुस्नो-शबाबके हुजूममे बेहतरीन ऐयाम गुज़ारते हुए जादा-ए-इख़लाक (चारित्रके मार्ग) से कभी एक लमहाके लिए न हटनेवाला शख्स जिस तरह एक इन्सान पैदा हुआ था, बदस्तूर उसी तरह इन्सान रहा। उस जमानेमे भी जबकि गुनाहसे पहले उज़्रे-गुनाह पैदा कर लिया जाता है।"[1] नवाब फ़साहत जग 'जलील' दीवाने—रियाजकी तारीख कहते हुए फ़र्माते है—

मस्तेमै कर दिया जहाँ भरको।
ख़ुद लगाया न मुँहसे साग़रको॥

'अमीर' मीनाईके सुपुत्र मुंशी लतीफ़ अहमद 'अख़्तर' मीनाई लिखते है—

"हक़ीक़त यह है कि वह बड़े पाकनफ़्स और सच्चे मुसलमान थे। उनका रिन्दाना रग उनकी शाइरी ही की हद तक था। जो रग क़ाल (बयाने-कलाम) मे देखा, वह उनका हाल (वास्तविक) न था।"[2]

मौ० सैयद सुभान अल्लाह साहब प्रस्तावना लिखते हुए फ़र्माते है—

"हर जाननेवाला और पूरा गोरखपुर और खैराबाद कुरान लेकर दिन और रातकी सुहबतोंकी बाबत क़सम खानेको तैयार है कि रियाजने कभी एक बूंद भी शराब लबतक न आने दी।"[3]

एक बूंद कभी लबतक न आने दी, मगर तमाम उम्र शराबका गुण-गान करते रहे। किसीको यह आभास भी नही होने दिया कि रियाज परहेजगार है। आभास हो जाने दे तो फिर रिन्दाना मस्ती ही कहाँ रही। जीवन भर बेपिये झूमते रहे। बकौल चकबस्त—

---

[1]रियाज़े-रिज़वाँ एअ्तराफात पृ० ४१; [2]रियाज़े-रिजवाँ पेशे-लफ़्ज पृ० ५-६; [3]रियाजे-रिज़वाँ मुकदमा पृ० ३।

बेपिये नशा रहे जिसमें, जवानी वोह है

लेकिन रियाज तो बुढापेमे भी सरशार रहे। मुसीबतो, चिन्ताओ और बुढापेकी निर्बलताओका बोझ ढोते रहे। मगर फूलोकी तरह मुसकराते रहे, ता-उम्र मादक बने रहे। शराबपर इस खूबीसे लिखा कि कोई अनुमान ही नही कर सकता कि बेगैर पिये भी इस तरहके अशआर निकल सकते है, और स्वय कभी बताकर नही दिया कि शराब नही पीते है। यहाँ-तक कि उनके अतरग मित्र तक उनकी परहेजगारीकी गध नही पा सके।

पण्डित रतननाथ 'सरशार' और 'रियाज' गुरु-भाई होनेके अतिरिक्त परस्पर घनिष्ट मित्र थे। लेकिन 'सरशार' जैसे ख्यातिप्राप्त सुरासेवी मित्रको भी यह मालूम नही था कि रियाज केवल दुनियाए-शाइरीमे ही रिन्द मशहूर है, पीते-वीते नही है। एक रोज 'सरशार' ने रियाजको दावत-पर बुलाया, और उनके सामने शराब भी रखी गई। शराबको देखकर रियाजके होश उड़ गये। मगर जाहिरमे झूमने लगे और यकायक 'सरशार' से 'दो मिनट' कहकर कुछ इस अन्दाजसे उठे, गोया अभी वापिस आये जाते है, और कोई बहुत जरूरी कामके लिए जाना पड रहा है। मगर रियाज़ आनेको तो गये नही थे।

सयोगकी बात उक्त घटनाके बीस वर्ष बाद हैदराबादमे 'सरशार' और रियाजकी मुलाकात हुई। खानेपर वहाँ भी शराब मौजूद थी। रियाज़ने यह कहते हुए सहर्ष हाथ बढाया—"जिगरकी खराबीकी वजहसे डाक्टरोने एक सालके लिए कतई मुमानिअत कर दी है। मगर देखकर रहा नही जाता।" जिगर-खराबीकी बात सुनी तो लोगोने हाथसे प्याला छीन लिया। खूब—

रिन्द-के-रिन्द रहे हाथसे जन्नत न गई

किसीने पूछा भी कि—"हजरत! आप पीते भी है या लिखते ही लिखते है"। तो देखिए क्या जूमअनी शेअर कहकर उलझनमे डाला है—

शेअ़रे-तर मेरे छलकते हुए साग़र हैं 'रियाज़' !
फिर भी सब पूछते हैं—"आपने पी है कि नहीं" ॥

उक्त शेअ़रसे इकरार और इनकारकी दोनो ध्वनि निकलती है। एक तो यह कि जब मेरे शेअ़रोमे भी शराब भरी हुई है तो फिर पी क्यो न होगी ? दूसरी यह कि मेरे छलकते हुए साग़र तो बस मेरे शेअ़रे-तर हैं, और किसी साग़रको मैंने हाथ नही लगाया।

रियाजका दीवान १९३७ मे प्रकाशित 'रियाजे-रिजवाँ' हमारे सामने है। इसमे ८२८ पृष्ठ है। जिनमे १०४ मे विषय-सूची और प्रस्तावनाएँ हैं। ४८० पृष्ठोंमे ६०० गजले है, जिनमे ८१६० अशआर है। शेष २४४ पृष्ठोमे कितेअ़, सेहरे, कसीदे, मसनवी, नअ़त, नौहा वगैरह हैं। रियाजकी इन छ. सौ गजलोमे एक भी ऐसी गजल नही, जिसमे सागरो-मीना न छलकते हो। ८१६० अशआरमे १३६६ अशआर इसी विषयके है। आइए सबसे पहले मैखानए-रियाजकी जियारत कर ले।

मैख़ाना-ए-रियाज़

शरमाओ 'रियाज़' मैकशीसे।
लम्बी दाढ़ी है हाथ भरकी ॥

क्या-क्या ख़ुशामदें हैं कि पी लूं बहारमें।
बादलके टुकड़े सरपै मेरे छाए जाते हैं ॥

जोशे-मै और सब्ज़ाजारोंमें घटा छाई हुई।
बात ऐसी है कि तोबा भी है ललचाई हुई ॥

इक हमीं हैं कि बहक जाते हैं तौबाकी तरफ़।
वर्ना रिन्दोंमें बुरा चाल-चलन किसका है ?

मुझको भी इन्तज़ार था, अब्र आए तो पिऊँ।
साक़ी ! अगर यह सच है कि 'बादल उठा' तो ला ॥

मस्जिदमे मरनेकी अपेक्षा तो मैख़ानेमे मरना कही अच्छा—

रहने देगा न दमे-नजअ़[1] कोई हल्कको खुश्क।
मैक़देमें हमें इतना तो सहारा होगा॥

आबे-ज़मज़मके सिवा कुछ नहीं कब्रमें 'रियाज़'!
मैकदा तुम जिसे समझे हो मदीना होगा॥

बज़्मे-महशर गर बने साक़ीकी बज़्म।
मै न उट्ठूँगा अगर पीकर गिरा॥

बनाई क्या बुरी गत मैकदेमें बादानोशोंने?
'रियाज' आए थे कल जामा पहनकर पारसाईका॥

[कर्तव्यशील और अपने धुनके मस्त व्यक्तियोके समूहमे जब कोई ढोगी पहुँच जाता है, तब उसकी दुर्गति होना स्वाभाविक है]

दस्ते-शफकत इस तरह इक रिन्दने फेरा 'रियाज़'!
बैठकर यादे-खुदामें झूमता जाता रहा॥

[जब किसी पहुँचे हुए महापुरुषका वरदहस्त सरपर हो जाता है, तब यही स्थिति हो जाती है]

जब लोगोंमे दोनोंकी बुज़ुर्गी है मुसल्लम[2]।
क्या शैख़े-हरम[3] पीरेमुगां[4] हो नहीं सकता?

नमाज़े-ईद हुई मैकदेमें धूमसे आज।
'रियाज़'! बादाकशोने हमें इमाम किया॥

जाते थे सूएमैकदा[5] निकले हरममें[6] हम।
क्या जाने आज राहमें क्या फेर हो गया॥

---

[1]मृत्युके समय; [2]मानी हुई, निश्चित; [3]मस्जिद का शैख़; [4]मधुशाला-मालिक, [5]मदिरालयकी तरफ; [6]मस्जिदमे।

सस्ते छूटे जो सरेराह अमामा[1] उतरा।
सरसे उन बादाफ़रोशोंका[2] तक़ाजा उतरा॥

दुनियासे अलग हमने मैख़ानेका दर देखा।
मैख़ानेका दर देखा, अल्लाहका घर देखा॥

दोनोंके मजे लूटे, दोनोंका असर देखा।
अल्लाहका घर देखा, मैख़ानेका दर देखा॥

कअ़बेमें नजर आए जो सुबह अजाँ देते।
मैख़ानेमें रातोंको उनका भी गुज़र देखा॥

कुछ काम नहीं मैसे गो इश्क़ है इस शैसे।
है रिन्द 'रियाज' ऐसे दामन भी न तर देखा॥

क़यामतमें भी ऐ साक़ी उड़ाये काग बोतलके।
तेरे रिन्दोंने क्या मैदान मारा है, क़यामतका॥

यह अपनी वजअ़ और यह दुश्नामे-मैफ़रोश।
सुनकर जो पी गये यह मजा मुफ़लिसीका था॥

जा-जाके बज्मेवअ़जमें सौ बार हमने पी।
चोरी किसीकी थी न हमें डर किसीका था॥

अहले-हरम[3] भी आके हुए थे शरीके-दौर।
कुछ और रंग आज मेरी मैकशीका था॥

हम हैं गदाए-मैकदा[4] हमको कमी नहीं।
सब कुछ हमारे घर है खुदाका दिया हुआ॥

तौबाकी जान खुश्क है बिजलीके खौफ़से।
क़िबलेसे[5] आज अब्रेकरम[6] है उठा हुआ॥

---

[1]पगडी; [2]शराब वेचनेवालोका; [3]मस्जिदवाले; [4]मधुशाला-भिक्षुक; [5]कअ़बेकी तरफ़से; [6]कृपाका बादल (कृपा-वृष्टि हो रही है)।

तौबासे डराया मुझे साक़ीने यह कहकर—
"तौबा-शिकनीके लिए इसरार न होगा" ॥

हम गिरे जब लड़खड़ाकर बज़्ममें।
सर सुबूपर हाथ साग़रपर पड़ा ॥

हश्रमें मैकदेवालो! जो ख़ुदाने चाहा।
यही जलसा, यही साग़र, यही मीना होगा ॥

उम्मीद है कि शबको[1] भी हो शग़्ले-मै[2] 'रियाज़'।
मुंह सुबह होते देख लिया रोज़ादारका[3] ॥

वोह हवा जन्नतकी, वोह अब्रेकरम छाया हुआ।
मैकदा जन्नत है, जन्नतमें जो पी तो क्या हुआ?

रहमतको यह अदा मेरी शायद पसन्द आए—
डर-डरके काँप-काँपके पीना शराबका ॥

चले न काम, मएख़ाम[4] अगर न साथ चलें।
हरमकी[5] राहमें कोसों कुआँ नहीं मिलता ॥
'रियाज़' को हरम-ओ-मैकदा बराबर है।
पिये शराब वोह शबको कहाँ नहीं मिलता?

राहसे कअबेके हमने रेज़ए-मीना[6] चुने।
क्या अ़जब इसके सबब हमको मिले हजका सवाब[7] ॥
ईदके दिन मैकदेमें है कोई ऐसा 'रियाज़'!
एक चुल्लू देके जो ले तीस रोज़ोंका सवाब ॥

---

[1]रात्रिको; [2]सुरापान; [3]रोज़ा रखनेवालेका; [4]ख़ालिस शराबका; [5]कअ़बेके मार्गमे; [6]सुरापात्रके टुकडे; [7]पुण्य।

आबाद करें बादाकश अल्लाहका घर आज।
दिन जुमेअ़का है बन्द हैं, मैख़ानेके दर आज॥
मैख़ाना हमारा कोई मस्जिद तो नहीं है।
तसबीह[1] लिये कौन बुज़ुर्ग आए इधर आज?

जब पी लगाके मुँह दमेइफ़्तार[2] रिन्दने।
बोतलके मुँहकी आई फ़रिश्तोंको बू पसन्द॥

दिनमें चर्चे ख़ुल्दके[3] शबमें मए-कौसरके ख़्वाब[4]।
हम हरममें[5] आ रहे मैख़ाना वीराँ देखकर॥

जायें-हरममें तौबा करें होके पाक-साफ़।
लत-पत हैं पहले तो सरे-ज़मज़म[6] नहायें हम॥

मेरा यही ख़याल है, गो मैंने पी नहीं।
कोई हसीं पिलाये तो यह शै बुरी नहीं॥

किसीसे हाय साक़ीका यह कहना—
"लहू मेरा पिये जो बेपिये जाय"॥

जिन्हें लोग कहते हैं दुज़्दे-मै[7] वह ख़ुदा परस्त 'रियाज़' है।
यह सुना है कल कि जनाब ही पसे-ख़ुम[8] थे महव नमाज़में॥

बड़े मौक़ेसे थी हर चन्द वोह जन्नतके बाहर थी।
हरमसे हटके रस्तेमें मिली मैकी दुकाँ मुझको॥

---

[1]सुमरनी, माला; [2]रोजा खोलते समय; [3]जन्नतके; [4]स्वर्गस्थ सुरानदीका स्वप्न; [5]मस्जिदमें; [6]कअ़बेके पवित्र कुएँपर; [7]शराबका चोर; [8]शराबके घड़ेकी ओटमें।